प्रेमचंद

चिट्ठी | पत्री

१

संकलन-लिप्यंतर सम्पादन

अ मृ त रा य

हंस प्रकाशन
इलाहाबाद

प्रकाशक
हंस प्रकाशन इलाहाबाद

मुद्रक
मानव प्रेस इलाहाबाद

आवरण-सज्जा
कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव

प्रथम संस्करण
प्रभाकर स्मृति दिवस १९६२

मूल्य — सात रुपया



मुंशी दयानरायन निगम

भूमिका

उर्दू की साहित्यिक दुनिया से जिनका कुछ भी परिचय है उन्हें 'ज़माना' के बारे में बतलाने की ज़रूरत नहीं। बीसों बरस 'ज़माना' ने उर्दू की और क़ौम की ख़िदमत की और उसकी गिनती चोटी के पत्रों में होती रही।

'ज़माना' और मुंशी प्रेमचंद के साहित्यिक जीवन की शुरुआत लगभग एक साथ हुई। 'ज़माना' १९०३ में निकला और १९०३ में ही मुंशीजी का पहला उपन्यास 'असरारे मआबिद' बनारस के एक गुमनाम उर्दू साप्ताहिक में निकलना शुरू हुआ। लेकिन जब १९०५ में आकर उनका संबंध 'ज़माना' से हुआ तब से उन्होंने और भी जमकर लिखना शुरू किया। धीरे-धीरे यह संबंध गहरा से गहरा होता गया। बरसों मुंशी जी ने उसके अनौपचारिक अवैतनिक संपादक के रूप में काम किया। लेख और कहानियाँ तो लगभग हर महीने लिखीं ही समालोचनाएँ भी लिखीं और 'रफ़्तारे ज़माना' नाम का एक राजनीतिक स्तंभ भी सँभाले रहे। कितनी ही बार 'ज़माना' का इन्तज़ाम सँभालने की बात भी उनके लिए उठी पर कि ज़माना की आर्थिक स्थिति को देखते हुए कभी संभव न हुआ, पर इसमें कोई संदेह नहीं कि 'ज़माना' के विकास में मुंशी जी का बहुत बड़ा हाथ रहा है— और उतना ही बड़ा हाथ मुंशी जी के विकास में 'ज़माना' का रहा है।

'ज़माना'-संपादक मुंशी दयानरायन निगम के साथ मुंशी जी की चिट्ठी-पत्री का सिलसिला १९०५ में शुरू हुआ, एक पत्र के सम्पादक और एक नये लेखक के पारस्परिक सम्बन्ध सूत्र के रूप में। धीरे-धीरे उसने गहरी आत्मीयता का रूप ले लिया जो मरते दम तक बनी।

१९१८ में मुंशी जी ने गोरखपुर से निगम साहब को लिखा था — आप क्या कहते हैं, ज़िन्दगी की उम्मीद यहाँ भी कम है। मगर यह चाहता हूँ कि या तो साथ चलें या आगे-पीछे तफ़रीक़ दो-चार दिन की हो। मैं आपका पेशरौ बनना चाहता हूँ।

वही हुआ। मुंशी प्रेमचंद पहले गये १९३६ के अंत में और मुंशी दया नरायन १९४२ के आरम्भ में....

छत्तीस बरस की यह दोस्ती खुद एक अनूठी कहानी है।

दोनों के विचार दोनों का स्वभाव दोनों की रुचियाँ काफ़ी बराबर थीं।

निगम साहब शुरू से नरम दल और गोखले की ओर झुके हुए थे मुंशी जी गरम दल और तिलक की ओर। एक को हिन्दुस्तान की भलाई अंग्रेज़ों के साथ अधिक से अधिक सम्बन्ध-सहयोग बनाये रखने में दिखायी देती थी, दूसरे को पूर्ण सम्बन्ध विच्छेद में। सामाजिक धरातल पर भी यही बात थी — निगम साहब की अंग्रेज़ हुक्काम से दोस्ती थी मुंशी जी को उनसे कोई सरोकार न था। एक ने अपने बच्चों को सिविल सर्विस के लिए तैयार किया दूसरे ने आज़ाद ज़िन्दगी के लिए। दोनों के स्वभाव का अंतर भी काफ़ी स्पष्ट था। मुंशी जी अपने रहन-सहन, रख-रखाव में जितने ही ढीले-ढाले थे निगम साहब उतने ही चुस्त-दुरुस्त। निगम साहब जितने ही व्यवहार-कुशल थे मुंशी जी व्यवहार-कौशल से उतने ही अनभिज्ञ।

दोनों के व्यक्तित्व की यह पृथकता ही शायद उन्हें एक दूसरे के पास खींच लायी लेकिन न ला सकती अगर उनमें कुछ मौलिक समानधर्मिता भी न होती। यह समानधर्मिता थी उनकी पुष्ट मानवीय संवेदनाएँ, उनके मिज़ाज की मैत्री, शराफ़त, वज़ादारी, हमदर्दी दोस्ती को निबाह करने के लिए आवश्यक आत्म-त्याग।

अपने उसी ख़त में जिसका ज़िक्र ऊपर हुआ है, मुंशी जी ने लिखा था — यही फ़िक्र है कि मैं आज मर जाऊँ तो इन बाल-बच्चों का पुरसाने हाल कौन होगा? दोस्तों में अगर हैं तो आप और नहीं हैं तो आप। और न होगा तो मेरे बाद साल दो साल इन बेकसों की ख़बर तो ले सकते हैं।

निगम साहब ने अपने दोस्त के इस विश्वास को वैसे ही रखा भी सही। दूसरे को क्या कहूँ, खुद अपनी बात मुझे याद है। ३८ से ४२ तक मैं इलाहाबाद यूनिवर्सिटी का छात्र था। निगम साहब हिन्दुस्तानी एकेडेमी की मीटिंगों के सिलसिले में दस बीस दफ़ियों बार इलाहाबाद आये होंगे और शायद एक बार भी ऐसा नहीं हुआ कि मुझसे मिले बग़ैर कानपुर लौट गये हों। कभी मुझे अपने पास बुला लेते और बहुत बार खुद ही होस्टल में आकर मुझसे मिल लेते वह भी सिर्फ़ पाँच मिनट के लिए, खड़े-खड़े कैफ़ियत हालचाल लेते थे — मज़े में तो हो? कोई तकलीफ़ तो नहीं है? पढ़ाई कैसी चल रही है?

मगर आगे असर। वह पुरानी वज़ादारी थी एक दोस्त जो चला गया, उसकी दोस्ती का निबाह। चिट्ठियाँ भी बराबर लिखा करते और उनमें दूसरी बातों के साथ-साथ एक यह इसरार अक्सर रहा करती कि बेटा, सिविल सर्विस के इम्तहान में बैठना, अभी से उसकी तैयारी करो — जो कि वह अपने बेटों से भी कहा करते और जिस पर उन लोगों ने अमल भी किया। मेरी ओर से इस

मामले में उन्हें निराशा ही हुई लेकिन उनका किंचित् स्नेह मेरे लिए अंत तक जस का तस बना रहा।

इक्तीस बरस की यह दौलत इन दो सौ इक्यासी ख़तों में बिखरी हुई है। मेरा अनुमान है कि यह संग्रह पूरा है, लेकिन हो सकता है कि कुछ ख़त इधर उधर हो गये हों। जो हो, इनका मिल जाना खुद एक चमत्कार है।

आठ-दस बरस पहले जब मुंशी प्रेमचंद की जीवनी लिखने का ख़याल पहली बार मेरे मन में आया था तभी जिस बुनियादी सामग्री की ओर मेरा ध्यान गया था वह ये चिट्ठियाँ थीं। मुंशी प्रेमचंद और निगम साहब का सम्बन्ध कितना पुराना और कितना गहरा था, यह कोई छिपी बात न थी। इसलिए यह ख़याल कुछ ग़लत न था कि निगम साहब को लिखी गयी चिट्ठियों से ऐसी बहुत-सी बातें मालूम हो सकेंगी मुंशी जी के व्यक्तित्व पर ऐसी बहुत-सी रोशनी पड़ सकेगी जो किसी और तरह से मुमकिन नहीं।

यही सोचकर मैंने पहली बार तभी कोई आठ-दस बरस पहले निगम साहब के बड़े बेटे श्रीनारायण साहब को जो वहीं कानपुर में रहते हैं और वकालत करते हैं, इन चिट्ठियों के बारे में लिखा। सेन भाई (यही उनका घर का नाम है) बहुत व्यस्त आदमी हैं सिर उठाने की मोहलत नहीं मिलती, बाबा साहब को परलोक सिधारे भी दस बरस से ऊपर हो गये थे 'ज़माना' कब का बंद हो चुका था कागज़-पत्तर सब इधर उधर हो गये थे सेन भाई ने दो-चार जगहों पर उन चिट्ठियों को तलाश किया जहाँ उनके होने की उम्मीद थी और जब वहाँ नज़र न आयीं तो यही बात उन्होंने मुझको लिख दी। मुझे बहुत ज़बर्दस्त धक्का लगा, यों कहिए कि दिल टूट गया। लेकिन तो भी न जाने क्यों मेरे मन में यह बात जमी बैठी थी कि चिट्ठियाँ नष्ट नहीं हुई हैं। निगम साहब इन सब मामलों में कितने चाक-चौबंद और मुंशी जी के कितने मित्र थे यह मुझे पता था। लिहाज़ा मैंने सेन भाई की बात सुन ली दुःख भी हुआ लेकिन उम्मीद मरी नहीं और मैंने उनसे तलाश जारी रखने के लिए कहा।

फिर दो तीन बरस बीत गये और मैं कुछ दूसरे कामों में फँसा रहा। हाँ इस बीच मैंने दो-तीन बार सेन भाई को इस चीज़ के बारे में लिखा ज़रूर पर कोई नतीजा नहीं निकला। सेन भाई हमारी तरफ़ से मायूस हो चुके थे।

क़रीब पाँच साल पहले जब इस जीवनी के काम को हाथ में लेने की घड़ी आयी तो मैंने निश्चय किया कि एक बार ख़ुद जाकर सारे पुराने कागज़ात को टटोलना चाहिए, खँगालना चाहिए।

इसी सिलसिले में मुझे किसी से मिलने मिर्ज़ापुर भी जाना था। सिर्फ़

इस ख़याल से कि वहाँ जाने पर मेरी मुलाक़ात उन लोगों से हो जाय और मुझे बैरंग न लौटना पड़े, मैंने एक ख़त मिर्ज़ापुर डाला और एक कानपुर। संयोग की बात कि मिर्ज़ापुर से कोई जवाब नहीं आया और कानपुर से आ गया।

कानपुर मेरे लिए नयी जगह न थी और न निगम साहब का मकान। कितनी ही बार मैं वहाँ जा चुका था। लेकिन वहाँ पहुँचकर मेरी हालत द्वारका से लौटे हुए सुदामा की-सी हो गयी : वह जाना पहचाना पुराना मकान वहाँ न था। पास ही दाहिने हाथ पर, एक तंबोली था। मैंने आगे बढ़कर उससे पूछा — क्यों भाई यहीं पर कहीं निगम साहब का मकान था न? तंबोली ने सामने की तरफ़ हथेली से इशारा करते हुए कहा — वह तो रहा, बाबू जी ...

मैंने देखा — एक बड़ा-सा मकान ढहा पड़ा था।

मेरे चेहरे पर अवश्य ही विस्मय रहा होगा क्योंकि उसने कहा था — जी हाँ बाबू जी वही मकान है। इसको तो गिरे हुए भी महीना भर से ऊपर हो गया। पीछे का हिस्सा बचा है। उसी में वह लोग रहते हैं। गली में पिछवाड़े से रास्ता है।

मैं पहुँचा। मकान के गिर जाने की दास्तान सुनी और साथ ही यह भी कि सेन भाई का नया मकान सिविल लाइंस में बन रहा है पहली तारीख को यानी दो रोज़ बाद गृह प्रवेश है।

अगले दिन सवेरे, सेन भाई के बड़े बेटे सुमन की मदद से, ये चिट्ठियाँ उसी बचे हुए हिस्से की एक घिरी-पड़ी कोठरी में दुनिया भर के काठ-कबाड़ और रद्दी सड़ी काग़ज़ों के बीच खोयी हुई मिलीं — बाक़ायदा तरतीबवार लगी हुई १९ २ से लेकर १९३९ तक फाइल के भीतर बंद।

यह है इन चिट्ठियों के मिलने की कहानी। बात अब पुरानी हो गयी है लेकिन मैं अब तक यह सोचकर सिहर जाता हूँ कि अगर मैं उस रोज़ न पहुँचकर केवल चार दिन बाद पहुँचा होता तो क्या होता!

तब मुझे क्या पड़ी थी जो इस ढहे हुए मकान के क़रीब जाता नये मकान में गया होता पुरानी इमारत के ढहने का क़िस्सा भर सुना होता — और इन चिट्ठियों को किसी अनजाने कबाड़ी या पुड़ने की पुड़िया में हल्दी-नमक बाँधने के भी काम का न समझकर शायद चूल्हे की नज़र कर दिया होगा!

यह शुभ संयोग अगर चमत्कार नहीं तो चमत्कार और फिर क्या है?

जीवनी लिखने में इन चिट्ठियों से मैंने कितनी मदद ली है, यह मेरे कहने की चीज़ नहीं है पढ़नेवाले खुद देखेंगे। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि इन

जमाने के बग़ैर मन में ज़िन्दगी की कल्पना भी नहीं कर सकता। लिखी वह शायद तब भी जाती लेकिन लंगड़ी होती बेजान होती।

जीवन के तथ्य तो वैसे इन चिट्ठियों में हैं ही — क्या लिख रहे हैं, क्या पढ़ रहे हैं क्या सोच रहे हैं, घर में कब किसका क्या हाल है कौन जिया कौन मरा किसकी शादी हुई—

लेकिन इससे भी बड़ी बात यह है कि ये चिट्ठियाँ उस आदमी के दिल दिमाग़ का आईना हैं, इनमें वह साँस ले रहा है उसकी ख़ुशी, उसका ग़म, उसका गुस्सा उसकी झुँझलाहट सब कुछ इन चिट्ठियों में मौजूद है।

चिट्ठियाँ, किसी की भी, आईना होती हैं उस आदमी की तबीयत का, मुंशी जी की चिट्ठियाँ तो और भी, जिनमें किसी तरह का बनाव या तकल्लुफ़ नहीं है, काग़ज़-क़लम उठाया और लिख मारी एक चिट्ठी कि जैसे आमने-सामने बैठे बातें कर रहे हों।

ज़बान इन चिट्ठियों की बेशक उर्दू है जो बहुत जगह काफ़ी सख़्त भी हो गयी है लेकिन मेरा विश्वास है कि फ़ुटनोट में दिये गये कठिन शब्दों के अर्थों पर नज़र डालते चलने से उसका भरपूर रस पढ़नेवाले को मिल जाता है।

पीला पड़ता हुआ ख़स्ताहाल काग़ज़ रोशनाई जगह-जगह बहुत कम रोशन फीकी, उड़ी हुई, लिखत भी बहुत जल्दी में घसीटी हुई ठेठ मुंशियाना शिकस्ता — इन चिट्ठियों का अधिकतर ख़ासी टेढ़ी खीर रहा है। ख़ासकर वहाँ जहाँ पर विवशतः मुझे मूल पत्र के बदले उसकी फ़ोटो-प्रतिलिपि से काम चलाना पड़ा। लेकिन पाठ में कोई अशुद्धि न आने पाये इसके लिए एक से अधिक लोगों ने एक से अधिक बार साथ बैठकर, और जहाँ-तहाँ मैग्नीफ़ाइंग ग्लास की मदद से मूल उर्दू को हिन्दी पाठ से मिला लिया है। इस काम में मुझे अपने शायर दोस्त 'तालिब' रामपुरी साहब से बहुत मदद मिली है।

अक्सर चिट्ठियों पर पूरी-पूरी तारीख़ न डालने की मुंशी जी की आदत हमारे लिए काफ़ी उलझन का कारण बनी — महीना है तो तारीख़ नहीं तारीख़ है तो महीना नहीं, महीना और तारीख़ है तो सन् नहीं और उन चिट्ठियों का तो ज़िक्र ही फ़िज़ूल है जिनमें यह तीनों ही ग़ायब हैं।

कार्डों में तो यह मुश्किल डाक की मुहर से आसान हो गयी। जाँच करने पर लगभग सभी डाक की मुहरें पढ़ने में आ गयीं और जहाँ से चिट्ठी चली वहाँ की डाक-मुहर को मैंने चिट्ठी की तारीख़ मान लिया। लेकिन लिफ़ाफ़े की चिट्ठियों में यह सहारा भी न रहा। वहाँ मेरे सामने एक ही रास्ता था उन चिट्ठियों को पढ़ के देखना बिल्कुल ठीक तारीख़ का जाने देना। लेकिन यह

इस खयाल से कि वहाँ जाने पर मेरी मुलाकात उन लोगों से हो जाय और मुझे बैरंग न लौटना पड़े मैंने एक खत मिर्जापुर डाला और एक कानपुर। संयोग की बात कि मिर्जापुर से कोई जवाब नहीं आया और कानपुर से आ गया।

कानपुर मेरे लिए नयी जगह न थी और न निगम साहब का मकान। कितनी ही बार मैं वहाँ जा चुका था। लेकिन वहाँ पहुँचकर मेरी हालत द्वारका से लौटे हुए सुदामा की-सी हो गयी। वह जाना पहचाना पुराना मकान कहीं न था। पास ही दाहिने हाथ पर, एक तमोली था। मैंने आगे बढ़कर उससे पूछा — क्यों भाई यहीं पर कहीं निगम साहब का मकान था न? तमोली ने सामने की तरफ उँगली से इशारा करते हुए कहा — वह तो रहा बाबू जी

मैंने देखा — एक बड़ा-सा मकान ढहा पड़ा था।

मेरे चेहरे पर अवश्य ही विस्मय रहा होगा क्योंकि उसने कहा था — जी हाँ बाबू जी वही मकान है। इसको तो गिरे हुए भी महीना भर से ऊपर हो गया। पीछे का हिस्सा बचा है। उसी में वह लोग रहते हैं। गली में पिछवाड़े से रास्ता है।

मैं पहुँचा। मकान के गिर जाने की दास्तान सुनी और साथ ही यह भी कि सेन भाई का नया मकान सिविल लाईन्स में बन रहा है, पहली तारीख को यानी पाँच रोज बाद गृह प्रवेश है।

अगले दिन सबेरे सेन भाई के बड़े बेटे सुमन की मदद से, ये चिट्ठियाँ उसी बचे हुए हिस्से की एक गिरी-पड़ी कोठरी में दुनिया भर के काठ-कबाड़ और रद्दी रद्दी कागजों के बीच खोयी हुई मिलीं — बाकायदा तरतीबवार सजी हुई १९ ४ से लेकर १९५६ तक फ़ाइल के भीतर बंद।

यह है इन चिट्ठियों के मिलने की कहानी। बात अब पुरानी हो गयी है लेकिन मैं अब तक यह सोचकर काँप जाता हूँ कि अगर मैं उस रोज न पहुँचकर केवल सात दिन बाद पहुँचा होता तो क्या होता!

तब मुझे क्या पड़ी थी जो इस बचे हुए मकान के करीब जाता। नये मकान में गया होता पुरानी इमारत के ढहने का किस्सा भर सुना होता — और इन चिट्ठियों को किसी कबाड़ी या मुहल्ले की कुंजड़िन ने हल्दी-नमक बाँधने के भी काम का न समझकर शायद चूल्हे की नजर कर दिया होता।

यह शुभ संयोग अगर चमत्कार नहीं तो चमत्कार और फिर क्या है?

जीवनी लिखने में इन चिट्ठियों से मैंने कितनी मदद ली है, यह मेरे कहने की चीज नहीं है पढ़नेवाले खुद देखेंगे। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि इस

पढ़ाने के बग़ैर मन में बीतनी की कल्पना भी नहीं कर सकता। लिखी वह शायद तब भी जाती लेकिन लंगड़ी होती बेजान होती।

जीवन के तथ्य तो वैसे इन चिट्ठियों में हैं ही — क्या लिख रहे हैं, क्या पढ़ रहे हैं क्या सोच रहे हैं, घर में कब किसका क्या हाल है कौन जिया कौन मरा किसकी शादी हुई....

लेकिन उससे भी बड़ी बात यह है कि ये चिट्ठियाँ उस आदमी के दिल दिमाग़ का आईना हैं, इनमें वह बोल भी रहा है उसकी खुशी, उसका ग़म, उसका गुस्सा उसकी झुंझलाहट सब कुछ इस पिटारी में मौजूद है।

चिट्ठियाँ, किसी की भी, आईना होती हैं उस आदमी की तबीयत का, मुंशी जी की चिट्ठियाँ तो और भी, जिनमें किसी तरह की बनावट या तकल्लुफ़ नहीं है, काग़ज़-क़लम उठाया और लिख मारी एक चिट्ठी, कि जैसे आमने-सामने बैठे बातें कर रहे हों।

ज़बान इन चिट्ठियों की उर्दू है जो बहुत जगह काफ़ी सख़्त भी हो गयी है लेकिन मेरा विश्वास है कि फ़ुटनोट में दिये गये कठिन शब्दों के अर्थों पर नज़र डालते चलने से उनका भरपूर रस पढ़नेवाले को मिल जाता है।

पीला पड़ता हुआ ख़स्ताहाल काग़ज़ रोशनाई जगह-जगह बहुत कम रोशन फीकी, उड़ी हुई, लिखत भी बहुत जल्दी में घसीटी हुई ठेठ मुंशियाना शिकस्त — इन चिट्ठियों का लिप्यंतर खासी टेढ़ी खीर रहा है। ख़ासकर वहाँ जहाँ परिस्थितिवश मुझे मूल पत्र के बदले उसकी फ़ोटो-प्रतिलिपि से काम चलाना पड़ा। लेकिन पाठ में कोई अशुद्धि न आने पाये इसके लिए एक से अधिक लोगों ने एक से अधिक बार साथ बैठकर, और कहीं-कहीं मैग्नीफ़ाइंग ग्लास की मदद से मूल उर्दू को हिन्दी पाठ से मिला लिया है। इस काम में मुझे अपने शायर दोस्त 'शारिब' जयपुरी साहब से बहुत मदद मिली है।

अकसर चिट्ठियों पर पूरी-पूरी तारीख़ न डालने की मुंशी जी की आदत हमारे लिए भारी उलझन का कारण बनी — महीना है तो तारीख़ नहीं तारीख़ है तो महीना नहीं, महीना और तारीख़ है तो सन् नहीं और उन चिट्ठियों का तो ज़िक्र ही फ़िज़ूल है जिनमें यह तीनों ही ग़ायब हैं।

कार्डों में तो यह मुश्किल डाक की मुहर से आसान हो गयी। कोशिश करने पर लगभग सभी डाक की मुहरें पढ़ने में आ गयीं और जहाँ से चिट्ठी चली वहाँ की डाक मुहर को मैंने चिट्ठी की तारीख़ मान लिया। लेकिन लिफ़ाफ़े की चिट्ठियों में यह सहारा भी न रहा। वहाँ मेरे सामने एक ही रास्ता था उन चिट्ठियों को बस का बस बिलकुल बिना तारीख़ का जाने देना। लेकिन वह

शायद पढ़नेवाले की नज़र से और भी बुरा होता, इसलिए मैंने बड़ी-बड़ी मुश्किलों से, चिट्ठी में कही गयी बातों का आगा-पीछा, ताल-मेल मिलाकर अनुमान से उनको तिथि का संकेत देने का निश्चय किया। इसमें मैंने अपनी ओर से पूरी सावधानी बरतने की कोशिश की है, लेकिन उसमें ग़लती की संभावना बराबर रहती है — जैसे कि इस संग्रह की दसवीं चिट्ठी में। उसको मैंने अनुमान से सन् ११ १२ का बतलाया है, पर वह अवश्य सन् २९ के आसपास की होनी चाहिए क्योंकि 'ज़माना' का वह 'मातिम नंबर' जिसको लेकर चिट्ठी लिखी गयी है अगस्त १९२९ में निकला था जिसकी जानकारी मुझे बाद को हुई।

मुंशी जी की चिट्ठी-पत्री का एक और संग्रह भी छप रहा है, लेकिन इन चिट्ठियों को मैंने बाक़ी सब चिट्ठियों के साथ देना ठीक नहीं समझा — इसलिए कि इनमें एक ऐसी पूर्णता है, एक ज़िन्दगी की ऐसी पूरी कहानी जिसे दूसरे पत्रों के साथ गड्डमड्ड करना इन्हें भीड़ में खो देने के बराबर होता।

अंत में अब केवल कृतज्ञता-ज्ञापन शेष है। सबसे पहले सेन भाई के प्रति जिन्हीं का सब कुछ है और फिर श्री मदन गोपाल के प्रति जिनकी कृपा से मुझे इस संग्रह के ये पत्र मिले जो निगम साहब के यहाँ नहीं थे।

अपने आदरणीय गुरु श्री सतीशचंद्र देव का आभार प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं जिन्हीं की प्रेरणा से मैं पत्र-संग्रह में प्रवृत्त हुआ था।

अमृत राय

चिट्ठी पत्री—१

१

जनाब मुकर्रम बन्दा

परतापगढ़
१ जनवरी १९ २

तसलीम। इनायतनामा पहुँचा। मशकूर हूँ। मैंने यहाँ हरचन्द तलाश किया तसवीरें[1] नाविल कृष्ण कुँवर का कोई सफ़ा नहीं मिलता। मेरा जहाँ तक ख़याल है मसौदा कोई गुम नहीं हुआ सफ़ों पर नम्बर लिखने में मैंने ग़लती की है। अगर मटर पेपर के तीन सफ़े पूरे-पूरे मौजूद हों तो तसवीर को मुकम्मिल समझ लीजिये। मैंने ग़ालिबन यूँ नम्बर दिये हैं १ २ ५-७-९ ११। दीगर इल्तमास[2] यह है कि अगर मुमकिन हो तो जनवरी या फ़रवरी के नम्बर में ज़रूर इस मज़मून की इशाअत[3] हो जाये। मैं बड़े इश्तियाक़[4] से मुन्तज़िर हूँ कि आप ने मेरा नाविल अभी तक पढ़ा या नहीं। जवाब से सरफ़राज़ फ़रमाइए। ज़्यादा नियाज़।

ख़ाकसार
धनपतराय
स्कूल मास्टर
परतापगढ़।

२

प्रिय बाबू धनपतराय साहब

इलाहाबाद
२ फ़रवरी १९ २

दो महीने से ज़्यादा हुआ कि मुझे अपने उपन्यास की पाण्डुलिपि आपके पास अवलोकनार्थ भेजने का सौभाग्य हुआ था इस आशा से कि आप मेरे लिए एक प्रकाशक ढूँढने की कृपा करेंगे। मुझे याद है कि यह दिसम्बर की ८ तारीख़ थी जब मैंने किताब आपके पास भेजी थी। उसकी प्राप्ति की सूचना आपने १६ दिसम्बर को लिखी थी और वादा किया था कि आप इसके बारे में फिर मुझे लिखेंगे। लेकिन दो महीने से ज़्यादा निकल गये और आपने न तो पुस्तक पर ही कुछ लिखा और न उसके भविष्य पर। आपकी इस उदासीनता और असमर्थता के लिए अपने भाग्य को ही दोषी मानता हूँ। यदि आपने मुझ पर यह अनुग्रह किया होता जिसकी मैंने आपसे याचना की थी तो यह निश्चय ही एक बड़ा भारी

१ [illegible] २ प्रार्थना ३ प्रकाशन ४ चाव

दया का हृदय होता, मुझमें आपको एक ऐसा व्यक्ति मिलता जो कृतघ्न नहीं है।

मेरा तबादला अब इलाहाबाद के लिए हो गया है और मेरी नियुक्ति ट्रेनिंग कालेज इलाहाबाद से सम्बद्ध माडल स्कूल के हेडमास्टर के पद पर हो गयी है और मैंने अपने आपको नजायर कानून हिन्द प्रेस इलाहाबाद के प्रोप्राइटर बाबू बांके बिहारी लाल के रहम-ओ-करम पर डाल दिया है। उन महाशय ने किताब को एक नजर देख लेने के बाद उसको प्रकाशित करने में रुचि दिखलायी है। इसलिए आप कृपया पाण्डुलिपि जल्दी-से-जल्दी मेरे पास भेज दें और अगर मुनासिब समझें तो उसके साथ अपनी सिफारिश के दो अल्फ़ाज़ भी। मुझे यकीन है कि आपकी सिफारिश का बहुत असर पड़ेगा। मैं आपका हृदय से आभारी हूँगा अगर आप उसको हफ्ते भर के अन्दर भेज देने की कृपा करेंगे क्योंकि वह महाशय जल्दी ही यहाँ से आगरे चले जाने वाले हैं। मैं चाहता हूँ कि उनके जाने के पहले सारी बातें उनसे तय कर लूँ।

आशा करता हूँ कि आप मजे में होंगे।

मैं हूँ आपका
जगपत राय

पुनश्च—

मेरे रिव्यू के बारे में आपका क्या ख्याल है? क्या आप बराहे करम उसे अपने रिसाले में देंगे? अगर हाँ तो कब? मेरा ख्याल है कि आप शायद एक ही अंक में ऐतिहासिक और साहित्यिक दोनों समीक्षायें न दे सकें। क्या आप कोई साहित्यिक समीक्षा लेना चाहेंगे?

अगर चाहते हों तो कृपया सूचित करें। आपने किताब वापस मँगायी है। इससे पता चलता है कि अब और समीक्षा नहीं चाहिए। क्या मैं ग़लत कहता हूँ?

उम्मीद है कि आप जल्द जवाब देंगे।

जगपत राय
ट्रेनिंग कालेज
इलाहाबाद

पत्र अंग्रेजी में है। उसका अनुवाद यहाँ प्रस्तुत है।

३

बनारस
जून, १९०५

बिरादरम

अपनी बीती किस से कहूँ। वक्त किस्म किस्म की कोफ़्त हो रही है। ज्यों-त्यों करके एक ख़तरा काटा था कि नागहाँ तरद्दुदात का ताँता बँधा। औरतों ने एक दूसरे को जली-कटी सुनाई। हमारी मख़दूमा[1] ने जल-भुन कर गले में फाँसी लगायी। माँ ने आधी रात को भाँपा, दौड़ीं, उसको रिहा किया। सुबह हुई मैंने ख़बर पाई, झल्लाया, बिगड़ा, लानत-मलामत की। बीवी साहिबा ने अब ज़िद पकड़ी कि यहाँ न रहूँगी। मैके जाऊँगी। मेरे पास रुपया न था। लाचार खेत का मुनाफ़ा वसूल किया, उनकी रुख़सती की तैयारी की। वह रो-धोकर चली गयीं। मैंने पहुँचाना भी पसन्द न किया। आज उनको गये आठ रोज़ हुए, न ख़त है न पत्तर। मैं उनसे पहले ही ख़ुश न था अब तो सूरत से बेज़ार हूँ। ग़ालिबन अबकी की जुदाई दायमी[2] साबित हो। ख़ुदा करे ऐसा ही हो। मैं बिला बीवी के रहूँगा। बिल्ली बकरी मुर्ग़ा लँगूर ही रहेगा। उधर ननिहाल से वालिदा की तरफ़ से ज़िद है कि ब्याह रचे और जल्द रचे। अब कहता हूँ मैं मुफ़लिस हूँ बेकार हूँ खाने को मयस्सर नहीं तो वालिदा साहिबा कहती हैं तुम अपनी रज़ामन्दी ज़ाहिर करो तुमसे एक कौड़ी न माँगी जायगी। सुनता हूँ बीवी हसीन है बाशऊर है अब से तर्बियत बख़ूबी मिली जाती है फिर तबीयत क्यों न गुदगुदाये और गुदगुदी क्यों न पैदा हो। ईश्वर जानता है दो-तीन दिन उसका ख़्वाब भी देख चुका हूँ। बहरहाल अबकी तो मज़ा चख लूँगा। आइन्दा की बात नारायण के हाथ है। जैसी आपकी सलाह होगी वैसा करूँगा। इस बारे में अभी फिर मशविरा करने की ज़रूरत बाक़ी है।

रुपये वापस रवाना किये पहुँचे। इस से रूह को मसर्रत[3] हासिल हुई। तीन बार से कम न पढ़ा होगा। किताबें और अख़बार पहुँचे। उमूर मुफ़स्सला हस्बे मामूल पस्त हैं।

ज़माना की छपाई अबकी तो एक मज़मून की भी न बनी। लखनऊ और कानपुर की किताबत में साफ़ फ़र्क़ नज़र आता है। छपाई की सफ़ाई लिखाई के ऐब को नहीं मिटा सकी। अगर अव्वल से पर्चा निकले तो यह सब नागवारियाँ[4] क़ाबिले मुआफ़ी हैं। अगर देर ही में निकलना है तो अपनी ख़ूबियों में क्यों बट्टा लगाये। जून का पर्चा निकलते ही हम फिर अब चार-पाँच पर्चे भी काशी के रवाना कीजिये। उनके पहुँचते ही इश्तहार रवाना होंगे। प्रेसरिपोर्ट आपके पास पहुँची

---

१ स्वामिनी २ स्थायी ३ खुशी ४ भूल-चूक

होगी। शायद इत्मीनान के क़ाबिल भी हो। जी तो चाहता था कि ५ ख़रीदारों के नाम यकबारगी लिखता मगर हिम्मत १६ ही पर समाप्त की। उनके नाम पर्चे भेज दीजिए।

धोती-कुर्ता अपने छोटेख़ाने में रहने दीजिए, यहाँ भेजने की ज़रूरत नहीं मेरा काम चल रहा है। सफ़र गाज़ीपुर आज़मगढ़ बलिया गोरखपुर और बनारस का करूँगा। बनारस ही में पन्द्रह-बीस ख़रीदार हो जायेंगे। ज़रा तबीयत ठिकाने हो जाये तो काम शुरू करूँ। गर्मी की कुछ कैफ़ियत न पूछिये। कहलाने को तो साहबे मकान[1] हूँ और ख़ुदा के फ़ज़ल से मकान भी सारे गाँव का महसूद[2] है, मगर रहने क़ाबिल एक कमरा भी नहीं। कोठे पर आग बरसती है। बैठा और पसीना चोटी से एड़ी को चला। नीचे के कमरे सब गंदे। परीशान। किसी में बैल बंधता है, किसी में उपले जमा हैं, कहीं अनाज का ढेर है किसी में चौके चक्की ओखली मूसली वग़ैरह लवाज़मात हैं। कोई बैठे कहाँ सोए कहाँ। मजबूरन दालान के दर में एक चारपाई की जगह निकाल ली है। उसी पर दिन रात पड़ा रहता हूँ। किसीसे घूमने कहाँ जाऊँ। बच्चे तीन-चार दिन के लिये आये थे। हमारी मख़दूमा को पहुँचाने के लिए बस्ती गये। वहाँ से अपने वालिद के पास चले जायेंगे। इस गर्मी में क्या पढ़ना क्या लिखना। सुबह के वक़्त घंटा आध घंटा सहरागरदानी[4] कर लेता हूँ बाक़ी रात दिन मैं हूँ और चारपाई। मुन्तज़िर पड़ा हूँ मगर नींद भी कुछ मेरे घर की लौंडी नहीं। उस पर तरद्दुद अलग। कहाँ हँसी-मज़ाक में दिन कटता था कहाँ चुप की मिठाई या गूँगे का गुड़ खाकर बैठना पड़ता है। अब न चीज़ों[3] से काम मुवसिला है। भाई जल्दी से छुट्टी कटे और फिर यारों के जलसे और क़हक़हे-ठहाके हों। कोई बीस दिन से ज़्यादा गुज़रे मगर क़सम ले लो जो ज़बान से प्यारा लफ़्ज़ 'बंकुक' एक बार भी निकला हो।

अनक़रीब में छोड़नेवाले और होंगे। यहाँ तो जब एक बार बाँह पकड़ी तो ज़िन्दगी पार लगा दी। नौबत राय न आए। क्या जहाँ मुर्ग़ा न होगा वहाँ सुबह न होगी। एडिटोरियल मैं सब कर लूँगा। बाक़ी क़िताबत जो मुआमले की है वह मैं कर लूँगा। बाद एडीटर की तनख़्वाहों के क़ाबिल जो सूरत होगी वह ख़िदमते शरीफ़ में पेश होगी। और काम करने का बन्दोबस्त होना ज़रूरी है। लेकिन धना लेंगे। खाने का वक़्त आयेगा तो सरसरा हो रहेगा। काम माठे में न डालो। हिम्मते मर्दां मददे ख़ुदा। हिम्मते एडीटरां मददे दोस्तां। हाँ यह एलान करना ज़रूरी होगा कि नवाब राय स्टाफ़ में दाख़िल हो गये। बस। बाबू राम नारायण

१ मकान-वाला २ ईर्ष्या का पात्र ३ अच्छे पकवान ४ हवाख़ोरी

रा क्या हुक्म हुआ ? मैं उनको छोड़ आया था। कमसिन है या गायब हो गया। बाबू रामचरन से प्यार और सलाम कहियेगा। भाई, गजट निकले तो झटपट इत्तला देना।

(अंग्रेज़ी में) कुछ लेटर पेपर और लिफ़ाफ़े भी।

४

नया चौक कानपुर

१५ फ़रवरी १९०८

बिरादर

तसलीम। पारसावरी[1] का शुक्रिया। मगर मुझे फ़िरदौस नहीं पहुँची। आप फ़रमाते हैं मैं भेज चुका। फिर क्या बात है। अगर रवाना न फ़रमाया हो तो बराय इनायत भेज दीजिये। शायद आपके कागजात में रह गयी हो। मुफ़स्सिलात[2] बहुत जल्द रवाना खिदमत होंगे। निराशा यह है कि अभी मेरी दरख्वास्त मंज़ूर नहीं हुई और कोई नंबर नहीं निकला। देखिए क्या होता है।

नियाज़मन्द

नवाब राय

५

तिथि नहीं है।

अनुमानतः सन् १९०८

प्रिय निगम

अगर आप पत्र ले जाने वाले के हाथ पाँच रुपये भेज सकें तो बड़ी मेहरबानी हो। आपके पुराने कर्ज़ अब तक अदा नहीं हुए। मैंने कोशिश की और नाकाम रहा। मगर अब अगले महीने से किस्तवार देना शुरू करूँगा।[1]

आपका

धनपतराय

६

तिथि नहीं है।

अनुमानतः सन् १९०८

भाईजान

आज बाहर से आता हूँ। और यह कापियाँ देखकर रवाना करता हूँ। 'ज़माना'

---

१ [illegible] २ [illegible] ३ [illegible] अंग्रेज़ी में है। इसका अनुवाद दिया जा रहा है।

का अंजाम   मिला । शुक्रिया । अब तीन दिन की तातील है । क़िस्सा साफ़ हो जायगा । बाहर मुतलक़[1] फ़ुर्सत न मिली ।

मुंशी नौबत राय चले गये । क्या होली की तक़रीब थी ? मार्च भर मैं कुछ ख़िदमत नहीं कर सकता । अप्रैल से जो कुछ हुक्म दीजिएगा उसकी तामील होगी ।

ज़्यादा नियाज़

आपका

धनपतराय

७

हमीरपुर

२ नवंबर १९ ९

बरादरम

ख़त मिला । मशकूर हुआ । आजकल फ़ुर्सत कम है । इसी वजह से 'शादी व ग़म' साफ़ न हो सका । रणजीत सिंह की भी ज़रूरत है । जल्द भेज दीजिए । नौकरी के मुताल्लिक़ मेरा ख़याल अब भी है, मगर मेरा ख़याल है कि मैं मआश की फ़िक्र से आज़ाद होकर ज़्यादा काम कर सकता हूँ । मेरे अख़राजात रोज़ ब रोज़ बढ़ते ही जाते हैं । अब कानपुर और महोबा दो जगह का ख़र्च संभालना पड़ता है । अगर आप लैला और मजनूं की मसनवी मुझे दे दें तो लैला पर एक अच्छा मज़मून लिखूं ।

आपके लिखने से मालूम होता है कि नवम्बर और दिसम्बर दोनों नंबर ख़त्म कर दिये । ऐसा न कीजिएगा ।

वह अंग्रेज़ी नाविल भेज दीजिए । अगर हो सका तो फ़रमाइशें तामील कर दूंगा वर्ना मजबूरी है । तबादला फ़िलहाल ग़ैर-मुमकिन है । दीगर क्या अर्ज़ करूं ।

ख़ाकसार

धनपत राय

८

हमीरपुर

१८ मार्च १९१

बरादरम

आज दस रुपये मिले । मशकूर हूँ । मैं दो दिन से यहाँ आया हूँ और बहुत

---

१ बिल्कुल

चाहता था कि एक दिन के लिए कानपुर चला आऊँ क्योंकि अब रेल खुल गयी है मगर १८ और १९ ? तीन दिनों में मुझे सिर्फ़ बजट मदरसे देखने हैं और महोबा पहुँचना है। इस वजह से मजबूर हूँ। इन्हीं परीशानियों के बाइस इस हफ़्ते में कुछ न लिख सका। मुआफ़ कीजिएगा। अब महोबा पहुँचकर लिखूँगा। बाक़ी ख़ैरियत है। जी चाहता है कि नये नये वाक़यात पर कुछ नोटिस लिखा करूँ। मगर वाक़यात का इल्म मुझे उस वक़्त होता है जब वह अख़बारात में निकल चुकते हैं और उनके देर तक बासी हो जाने का ख़ौफ़ रहता है। बहरहाल मैंने मुसम्मम इरादा किया है कि जुलाई और अगस्त में रुख़सत लूँ और अपनी अख़बारी क़ाबलियत को आज़माऊँ। आइन्दा जैसा ईश्वर चाहे।

आपका

धनपत राय

९

कुल पहाड़

११ मई १९१०

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए, आप का ख़त आया। जैसा आप फ़रमाते हैं वैसा ही होगा। मेरे ज़िम्मे अब कोई न आयेंगे। मुआहिदे का ज़िक्र कुछ ग़ैर मुनासिब[1] मालूम होता है मगर बात यह है कि थोड़े किस्सों के बाद में दिमाग़ी उलझन बहुत ज़्यादा होती है और ताज्जुब कि तबीयत को यह शक न हो कि इस में कुछ मुश्किलें[2] ज़रूर होंगी वह इस काम की तरफ़ रुजू[3] नहीं होती। एक मासिक मज़ो का है।

नवाब राय तो ग़ालिबन कुछ दिनों के लिये आराम से गये। दोबारा याद देखती हूँ कि तुम न मुआहिदे[4] में भी अख़बारी मज़ामीन नहीं लिख मगर इसका पेशा हर ज़िक्र की तहरीर[5] में था। गोया मैं कोई मज़मून ख़्वाह किसी मज़मून पर—चाहे कोई वह ही क्यों न हो—लिखूँ मुझे अपना या जनाब ऐड-मयाब[6] कमाण्डर गा व बहादुर की ख़िदमत में पेश करना पड़ेगा। और मुझे हाँ-धमाके लिखना नहीं पर तो मेरा पेशा का धन्धा ठहरा। हर माह एक मज़मून माहिये ज़माना की ख़िदमत में पहुँचता तो वह अख़बार में दे अपने इरादे सरकारी में नाफ़रमान करता हूँ। और काम मेरे हक़ पेशा जायगा। इसलिए कुछ दिनों के लिए नवाब राय मरहूम हुए। उनके जानशीन कोई और साहब

[illegible]

होंगे। आप मेरा मज़मून किताबत कराने के बाद मुंशी चिराग़ अली को दे दिया करेंगे। मुआवज़े की निस्बत जो आपने फ़रमाया वह मुझे मंज़ूर है। अगर मज़मून इतना बड़ा हो कि एक नम्बर में निकल जाय तो बेहतर[१] और अगर एक से ज़्यादा नम्बरों में निकले—दो या तीन में—तो इसका अलमुआवज़ा[२]। यह मैं अब फिर कहता हूँ और पहले भी कह चुका था मगर किसी वजह से वह रिमार्क आपने नज़रअन्दाज़ कर दिया कि यह मुश्किलात में अपने तसर्रुफ़[३] में नहीं लाऊँगा। ये एक मरहूम[४] दोस्त के पसमांदगान[५] के नज़्र होंगे। इसलिये आप को भूल कर मुझ पर कमीनेपन ख़ुदग़र्ज़ी और तमअ[६] का इल्ज़ाम न आयद करना चाहिये। आप के इस ख़त के लिखने के ढंग से मालूम होता है कि आप कुछ कहना चाहते हैं, मगर कहते नहीं। यह सब मज़ामीन जिनका आग़ाज़[७] कुंज से होता है (और ईश्वर ने चाहा तो शायद कुछ दिनों तक यह सिलसिला जारी रहे) अलग या बतौर किस्से की शक्ल में निकलेंगे। अगर आप निकालेंगे तो चौथाई नफ़ा मेरा और मैं निकालूँगा तो चौथाई नफ़ा आपका। गोया मेरा और आपका उस पर बराबर का अख़्तियार रहेगा। मेरा नाता उन से 'ज़माना' में निकल चुकने के बाद भी लगा रहेगा।

किताबों की फ़ेहरिस्त भेजी थी। उनकी क़ीमत मैनेजर साहब ने न लिखी। स्वामी रामतीर्थ के लिए मैं क्या फ़िक्र करूँ। अगर आप इसे टेक्स्ट बुक कमेटी में भेज कर इनाम की मद[८] में मंज़ूर करा लें तो अलबत्ता सौ पचास जिल्दें निकलवा सकता हूँ। आप अब कभी-कभी इलाहाबाद की सैर करते ज़रूर आया करें और इनामी किताबें तय्यार करने की फ़िक्र करें। मैं इस काम में आपकी ख़ुलूसी मुआवनत[९] करने को आमादा हूँ। किताबों की लिखाई वग़ैरह अच्छी हो और मंज़ूर हो जावें तो कुछ फ़ायदे की सूरत निकल सकती है।

और कहिये क्या ख़बरें हैं। बन्दा तो कमरए आतशी[१०] में पड़ा भुन रहा है। इमसाल आम की टट्टी लगवाई कि नहीं? वाह क्या ठंडी हवा है और क्या फ़रहतबख़्श[११]। याद से रूह फड़क गयी। बाए बरहाले आँ[१२] कि इस टट्टी की बहार में रहे होंगे।

मैंने मज़मून माँगा था वो आपने न भेजा। कोई नाविल गुदड़ी बाज़ार से लिया हो तो वह भी बैरंग भेजिये। इलाहाबाद की लाइब्रेरी की निस्बत दरयाफ़्त किया था मगर वह आउट स्टेशन में किताबें नहीं भेजते। अबकी इलाहाबाद आऊँगा तो अपने मुस-व्वारे[१३] को अपना क़ायम मुक़ाम बना आऊँगा। वह अपने

१ ठीक रहेगा २ दुगना ३ इस्तेमाल ४ दिवंगत ५ पीछे छूट जानेवालों, बाल-बच्चों ६ लालच ७ आरम्भ ८ सहयोग ९ आग जैसे कमरे १० ताज़गी देने वाली ११ क्या कहने हैं उनके जो १२ मज़दूर के बेटे वाले

नाम से किताबें लेकर मेरे पास भेज दिया करेंगे। जून में इलाहाबाद बनारस वगैरह की गर्म हवा खाऊँगा

नज़र ने नाविल-वाला मज़मून वापस माँगा था और फ़रमाते थे कि मैंने महज़ तरमीम के लिये भेजा था। अगर आप उसे आसानी से अलहदा कर सकें यानी रद्दी के टोकरे में पड़ा हुआ हो तो भेज दीजिये। उन्हीं के सर पटक दूँ। बेचारे तो शायद हज़रत मन्सूर एजवर्ड हमनुमा[1] का मोहरा[2] कह रहे होंगे।

हिन्दी पर्चे का क्या हुक्म हुआ? यानी उसकी तजवीज़ खटाई में पड़ गयी या जारी है। निकलने वाला हो तो हिन्दी लिखने की आदत डालूँ।

मिस्टर रामगरीब की खिदमत में मेरा सलाम कह दीजिएगा।

अबकी सरस्वती में भारत वगैरह पर तीन तसवीरें अच्छी निकलीं और सूरदास पर मज़मून अच्छा है। आप भी हिन्दी लिट्रेचर पर मज़ामीन लिखने का ढंग निकालिये। सूरज नारायन मेहर शायद लिखें। और नज़दीक व दूर की जो खबर हो पास-पड़ोस की उससे मुत्तला कीजिये।

नज़र साहब ने अपने रिसाले को बिल्कुल इश्तहारी ढंग पर चलाने का बीड़ा उठाया है। और क्या लिखूँ।

खादिम

धनपतराय

नाविल वाला मज़मून ज़रूर भेजिये। आज फिर तकाज़ा है। अब आपको यहाँ उसकी इशाअत मंज़ूर नहीं है तो वापस दीजिये। रुपये मिल रहेंगे। जल्द पहुँचेगा।

१०

स्थान और तिथि नहीं है।
अनुमानतः सन् ११-१२ में
महोबे से लिखा गया।

मुशफ़िक़ बन्दा जनाब एडीटर साहब ज़माना

तसलीम। रिसाला ज़माना का माह नवम्बर का पर्चा देखकर मन दिल में बाग बाग हुआ जिसकी मुबारकबाद देना मैं अपना फ़र्ज़ समझता हूँ। उम्मीद है कि जनाब को नागवार न होगा। इस पर्चे में जब कि गुलाम[1] मसनवी[2] नियाज़ी मसायल[3] और इश्तहारी[4] मज़ामीन हमारी तवज्जुह के लायक हैं ... देखकर मसर्रत हुआ कि रिसाला ज़माना का करीब

---

१ [illegible]
[illegible]

क़रीब एक पूरा नम्बर महज़ ग़ालिब के कलाम के तब्सरे[1] की नज़र हो गया। मैं ग़ालिब की उस्तादी का क़ायल हूँ। बलामक़ शायरी का मज़मून[2] पहलू ग़ालिब की शायरी में मुक़ाबिलतन् कम है। मगर फिर भी इतना ज़्यादा है कि बदरस्तासमा[3] उन हज़रात के जो सच्ची शायरी के रंग में रँगे हुए हैं और उनकी ग़ज़लें[4] को मौजूदा मेयार[5] और ऊँचे सही[6] से गिरा हुआ नज़र आता है।

सिटरेचर का मौज़ू है तहज़ीब अख़लाक़ मुशाहिदए जज़्बात[7] इन्कशाफ़े हक़ायक़[8] और वारदात-ओ-कैफ़ियाते क़ल्ब[9] का इज़्हार। जो शायरी हुस्न व इश्क़ को आशना व जाना[10] अंबर व महशर[12] सब्ज़ा[13] व ख़त बहर[14] ओ-कमर के तज़्किरा[15] से मुख़्तस[16] करती हो वह हरगिज़ इस क़ाबिल नहीं कि आज हम उसका विर्द[17] करें। जिनकी उफ़्तादे तबीयत[18] उस रंग की है उन्हें अख़्तियार है ग़ालिब या नासिख़ रिन्द और अमानत का वज़ीफ़ा पढ़ें। लेकिन ज़माना के मुख़्तलिफ़ुलतबाअ[19] नाज़रीन[20] को इस विर्द और वज़ीफ़े में शरीक होने के लिए मजबूर करना कहाँ का इन्साफ़ है। मिर्ज़ा आफ़ताबसी जी साहब ने अपने तब्सरे में ग़ालिब के कलाम का इन्तख़ाब पेश किया है मगर इस इन्तख़ाब में भी बेशतर ऐसे अशआर हैं जिन्हें आँके लतीफ़[21] हरगिज़ क़ाबिले इशाअत[22] न समझेगा। मुलाहिज़ा हो

भर गया सामने नज़्ज़ारा गुले नरगिस से।
आँख उठाकर जो कभी तुमने इधर देखा॥

आँख की रिआयत से नरगिस को लाकर सामने नज़्ज़ारा को गुले नरगिस से भर देना इसमें क्या ख़ूबी[23] बयान है? क्या हक़ीक़त है?—समझ में नहीं आता।

क़ासिदों के पाँव तोड़े बदगुमानी ने मेरे।
ख़त दिया लेकिन न बतलाया निशाने कूए दोस्त॥

क्यों नहीं बतलाया? भी आपकी हिमाक़त या नहीं? आपको ख़ौफ़ हुआ कहीं माशूक़ क़ासिद का दम न भरने लगे। वाह रे माशूक़ और वाह रे आशिक़ दोनों ज़िन्दा दरगोर[24]।

ऐसे अशआर एक नहीं सैकड़ों हैं। बहुत आसानी करने से सौ दो सौ अशआर सारे दीवान में ऐसे निकलेंगे जो पाकीज़ा कहे जा सकें जिनमें बाक़ई

१ चर्चा २ पुष्प ३ अक्सरमा ४ ग़ज़लें ५ कलाम की कसौटी ६ स्तर व स्थान ७ विषय भावों की अभिव्यक्ति ९ सत्य का उद्घाटन १० दिल की हालत का बयान ११ चाँदी १२ कयामत १३ सब्ज़ मौसिमा १४ हुँद १५ बहरबा १६ सम्पर्क मेदी १७ जाप्पा जपें १८ तबीयत का स्वभाव १९ अलग अलग तबीयतों वाले २० पाठकों २१ रुचि २२ प्रकाशन २३ अर्थ-गम्भीर २४ जीवित ही क़ब्र में

बरसा सच्चा दर्द रुलानेवाली हसरत धोखा देनेवाली जिद्दत राया बदमंदाम कर देनेवाली[1] नाजुकख़याली पुरदर्द[2] मनती हो। ज़माना में अगर मेरा अंदाजा ग़लती नहीं करता तो एक ख़ास मर्तबा हासिल की मकबूलियत[3] की जा चुकी है। लेकिन् ज़माना से मदद[4] व शोअराए सल्फ़[5] की मकबूलियत के सिवा और भी बहुत से ज़रूरी काम हैं और ख़ासकर उन शोअरा का कलाम जिनके दीवान कोह कन्दन और काह बरआवुर्दन के मिस्दाक़[6] हैं। मेरा ख़याल है कि रिसाले के एडीटर को ज़ाती इख़्तलाफ़ और दोस्ताना ताल्लुक़ात से बालातर रहना चाहिए। उसका फ़र्ज़ है कि हर रंग और हर मज़ाक़ के नाज़रीन का लिहाज़ रखे। यह नहीं कि

पैरवे मेहर रश्के माह हो तुम ख़ूबसूरत हो बादशाह हो तुम।
जिसने देखा तुम्हें वह मर ही गया हुस्न की तेगे बेपनाह हो तुम॥

तेग़ देखकर कौन मर जाता है ?

फ़ीस है सारे गुलअज़ामों पर या सितारे या है तो माह हो तुम

जैसे निकम्मा[7] अशआर के अम्बार से पर्चे का पर्चा भर दें।

समअख़राशी के लिए मुआफ़ फरमाइएगा।

नियाज़मन्द

प्रेमचन्द

११

स्थान और तिथि नहीं है।
अनुमानतः सन् ११ १२ में
महोबे से लिखा गया।

बरादरम

'ज़माना' जुलाई मिला। तबीयत खुश हुई। इसका अच्छा नम्बर है। मेरे ख़याल में दूसरे नम्बर निकालने का मौक़ा नहीं है। ऐसी गरमागरम रवायत[8] के होते हुए मैं यह मशवरा न दूँगा। हाँ मेरी दोस्ताना सलाह यह है कि आप 'मार्डन रिव्यू' की जगह ख़तीब को उसे दीजिए और 'हिन्दुस्तान रिव्यू' की जगह लीजिए। मज़ामीन की लम्बी लिखाई छपाई पालिसिंग वगैरह को ख़ास ध्यान मार दीजिये और तसवीर को तरह बहुत कम। इस माह हाल में

---

१ दिल को चोट देनेवाली २ तबाह कर देनेवाली ३ ... ४ ... ५ ... ६ खोदा पहाड़ और निकली चुहिया ७ ... ८ ...

क़रीब एक पूरा नम्बर महज़ ग़ालिब के कलाम के तब्सरे[1] की नज़र हो गया। मैं ग़ालिब की उस्तादी का क़ायल हूँ। लखनऊ शायरी का मज़मूम[2] पहलू ग़ालिब की शायरी में मुक़ाबिलतन् कम है। मगर फिर भी इतना ज़्यादा है कि बइस्तसना[3] चन्द इशआरात के जो मज़हबी शायरी के रंग में रँगे हुए हैं और सभी तबाए[4] को मौजूदा मेयार[5] और ज़ौक़े सही[6] से गिरा हुआ नज़र आता है।

लिटरेचर का मौज़ू[7] है तहज़ीब अख़लाक़ मुआशिरए जज़बात[8] इन्कशाफ़े हक़ायक़[9] और वारदात-ओ-कैफ़ियाते क़ल्ब[10] का इज़हार। जो शायरी हुस्न व इश्क़ को शाइस्ता व शाना[11] चंवर व महशर[12] सम्भा[13] व चश्म ज़ुल्फ़[14]-ओ-कमर के तख़ैयुल[15] से मुतअल्लक़[16] करती हो वह हरगिज़ इस क़ाबिल नहीं कि आज हम उसका विर्द[17] करें। जिनकी उफ़्तादे तबीयत[18] उस रंग की है उन्हें अख़्तियार है ग़ालिब या नासिख़ रिन्द और अमानत का वज़ीफ़ा पढ़ें। लेकिन ज़माना के मुख़्तलिफ़ुलख़्याल[19] नौजवान[20] को इस विर्द और वज़ीफ़े में शरीक होने के लिए मजबूर करना कहाँ का इन्साफ़ है। मिर्ज़ा जाफ़रअली ख़ाँ साहब ने अपने तब्सरे में ग़ालिब के कलाम का इन्तख़ाब पेश किया है मगर इस इन्तख़ाब में भी बकसरत ऐसे अशआर हैं जिन्हें ज़ौक़े लतीफ़[21] हरगिज़ क़ाबिले सताइश[22] न समझेगा। मुलाहिज़ा हो

मर गया सदमे नज़्ज़ारा गुले नरगिस से।
आँख उठाकर जो कभी तुमने इधर देखा॥

आँख की रियायत से नरगिस को लाकर सदमे नज़्ज़ारा को गुले नरगिस से मर देना इसमें क्या नुदरते[23] ख़याल है? क्या हक़ीक़त है?—समझ में नहीं आता।

क़ासिदों के पाँव तोड़े बदगुमानी ने मेरे।
ख़त दिया लेकिन न बतलाया निशाने कूए दोस्त॥

क्यों नहीं बतलाया? थी आपकी हिमाक़त या नहीं? आपको ख़ौफ़ हुआ कहीं माशूक़ क़ासिद का दम न भरने लगे। वाह रे माशूक़ और वाह रे आशिक़ दोनों ज़िन्दा दरगोर[24]!

ऐसे अशआर एक नहीं सैकड़ों हैं। बहुत छानबीन करने से दो ही सौ अशआर सारे दीवान में ऐसे निकलेंगे जो पाकीज़ा कहे जा सकें जिनमें वाक़ई

---

१ चर्चा २ [illegible] ३ अपवाद ४ तबीयतों ५ समय की कसौटी ६ स्वस्थ रुचि ७ विषय ८ भावों की अभिव्यक्ति ९ सत्य का उद्घाटन १० दिल की हालत का बयान ११ कंघी १२ [illegible] १३ [illegible] १४ मुँह १५ कल्पना १६ [illegible] १७ [illegible] १८ तबीयत का झुकाव १९ भिन्न-भिन्न तबीयतों वाले २० युवकों २१ सुरुचि २२ प्रशंसनीय २३ [illegible] २४ [illegible]

अपना सच्चा दर्द रुलानेवाली हसरत और बेकसाना जिल्लत उठा कर मुकाम कर देनेवाली[1] नाजुकखयाली पुरदर्दगी[2] भरती हो। जमाना में अगर मेरा अंदाजा गलती नहीं करता तो एक वक्त अदबा शायरी की मर्सियाख्वानी[3] की जा चुकी है। मुझे मन् मशायखे बज्म[4] में शोअराए सल्फ[5] की मर्सियाख्वानी के सिवा और भी बहुत से जरूरी काम हैं और खासकर उन शोअरा का कलाम जिनके दीवान कोहे कन्दन और काह बरआवुर्दन के मिस्दाक[6] हैं। मेरा खयाल है कि रिसाले के एडीटर को जाती रुजहानात और दोस्ताना ताल्लुकात से बालातर रहना चाहिए। उसका फर्ज है कि हर रंग और हर मजाक के नाजरीन का लिहाज रखे। यह नहीं कि

जीते मेहर रुके माह ही तुम खूबसूरत हो शाहजादे हो तुम।
जिसने देखा तुम्हें वह मर ही गया हुस्न की तेगे बेपनाह हो तुम॥

तेग देखकर कौन मर जाता है?

फौक है सारे खुशजमालों पर, जो सितारे जो हैं तो माह हो तुम

जैसे गिरयाना[7] मजामीन के अशआर से पर्चे का पर्चा भर दें।

गुस्ताखी के लिए मुआफ फरमाइएगा।

नियाजमन्द
प्रेमचन्द

१२

स्थान और तिथि नहीं है।
अनुमानतः सन् १९१२ में
महोबे से लिखा गया।

बरादरम

जमाना जुलाई मिला। तबीयत खुश हुई। अच्छा नम्बर है। मेरे खयाल में दूसरे नम्बर निकालने का मौका नहीं है। अभी मरहूम रहबर के होते हुए भी यह जमाना न हुआ। हाँ मेरी दोस्ताना सलाह यह है कि आप 'माडर्न रिव्यू' की जगह 'अदीब' को ले लीजिये और 'हिन्दुस्तान रिव्यू' की जगह लीजिये। मजामीन की अच्छी सिलाई छपाई पालिसिंग वगैरह की तरफ ध्यान जोर दीजिये और तसवीर की तरफ बहुत कम। इस माह-बाद में

¹ हिम्मत तोड़ देने वाली ² [illegible] ³ मर्सिया पढ़ना ⁴ [illegible] ⁵ [illegible] ⁶ कोह खोदना और तिनका निकालने के बराबर ⁷ [illegible] में रोदन।

आप बेज़ार हो जायेंगे। अपनी हार मान लेने में बुराई नहीं है। आप इण्डियन प्रेस के वसाइल[1] कहाँ से लायेंगे। अबकी रंगीन तसवीर आपको फिर ख़राब मिली। इससे तो बेहतर होता कि बाहर की तसवीर पहले होती। बहरहाल अब 'ज़माना' की ख़ूबी मज़ामीन पर होनी चाहिये तसवीर पर नहीं। कभी कभी तसवीरें भी दे दी जायें मगर उसी वक़्त जब सनअत[2] का कोई अच्छा नमूना हाथ आ जाए। ख़्वामख़्वाह तसवीर देने से कोई फ़ायदा नहीं। मैं इसके सख़्त ख़िलाफ़ हूँ। तसवीर की किफ़ायत काग़ज़ और छपाई की इसलाह[3] में सर्फ़ कीजिये। और मौजूदा मसाइल पर मज़ामीन लिखाने की फ़िक्र कीजिये। बाबू गंगाप्रसाद के बिल पर कोई मज़मून न निकला। गोखले के बिल में कहाँ तक तरक़्क़ी की मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का कांस्टिट्यूशन वग़ैरह मसले पर कुछ होना चाहिये था। मतलब यह है कि ज़माना अपटूडेट पोलिटिकल पेपर हो। कौम पर आह भरना मैं अच्छा नहीं समझता। हमें कौम का रोना रोने से क्या मिला जाता है। कौम के नाम पर रोने वाले बहुत हैं। यह काम अदीब को करने दीजिये। और आप इससे बेहतर काम में मसरूफ़ हूजिये। हज्म[4] में मुस्तक़िल हो यह नहीं कि कभी ७ सफ़े दिये कभी ८ कभी १। बड़े साइज़ के ८ या ७२ सफ़े काफ़ी हैं।

इश्तहार का नोटिस आप ने निकाल ही दिया। ज़रा तबीयत तो अच्छी होने देते। देखिये क्या कामयाबी होती है। आप का इश्तहार कामरेड के नमूने का होना चाहिये।

ईश्वर का नाम लेकर शुरू कीजिये। मुझसे जो मदद हो सकेगी करता रहूँगा। फ़िलहाल मेरी हालत मुझे इजाज़त नहीं देती कि कुछ ईसार[5] कर सकूं। यक़ीन मानिये आप से बसिदक़े दिल कहता हूँ कि जब से यहाँ आया हूँ सिर्फ़ दो सौ रुपये मेरे पास जमा हुए हैं। और वह भी सौ रुपये नाविल का मुआवज़ा है। और एक सौ रुपये में कोई तीस रुपये इण्डियन प्रेस से मिले। शायद तीस या पचीस आप ने दिये। और इसी क़दर एजुकेशनल गज़ट से मिला। मेरी तनख़्वाह और भत्ते में कौड़ी की बचत नहीं हुई।

हाँ बचत कहिये तो कमाई कहिये तो बीबीजान की बरसों की ज़िद पर रफ़ा शिकायत के लिये एक कड़ा बनवाया जिसका रुपया अब तक न चुका। इस ज़िले पर मैं क्या ईसार करूँ। (१५०) तनख़्वाह है। (४०) का औसत और। और सफ़र में बुग्गों[6] से काम लेता हूँ। तब भी कभी फ़राग़त नहीं नसीब होती। नहीं मालूम यहाँ कानपुर के मुक़ाबले में क्या ख़र्च बढ़ गया है। यहाँ (४०) में

१ साधन २ कला ३ सुधार ४ आकार ५ त्याग ६ बग्घी

मुयस्सर हो जाता था। यहाँ उसके दुगने में रोना पड़ा हुआ है। और अब बढ़े हुए अख़राजात का बोझ मुझ पर तो नहीं दूसरों पर ज़ियादा होगा।

नाम हिन्दू बहुत मौज़ूँ था मगर शायद इस नाम का कोई पर्चा पंजाब में निकल गया है। 'ज़माना' से बेहतर नाम मुझे नहीं सूझता। आप ने भी तो यही नाम पसन्द किया था। नाम तो यही रखिए। अब रहे मज़ामीन। आप तनहा एक असिस्टेंट की मदद से हस्बेमामूल अख़बार इसी हालत में चला सकेंगे जब इसमें का ज़्यादा रवाँ बनायें। मैं हस्बेमामूल एक दो मज़मून बिला नागा आप की ख़िदमत में भेजा किया करूँगा। कुछ नोट होंगे अब पड़ा तो कोई एडिटोरियल कभी किसी मज़मून का तर्जुमा कभी कुछ। मगर अख़बार का नमूना कामरेड ही हो। ख़ालिसी हिन्दू। अब मेरा हिन्दुस्तानी क़ौम पर एतबार नहीं रहा और उसकी कोशिश फ़िज़ूल है। आप कहते हैं कि ४ ( ) की फ़िक्र कर लूँगा। यहाँ ४ ( ) की फ़िक्र कीजिए वहाँ १६ ( ) की फ़िक्र करनी बड़ा मुहाल है। अगर आप मुझे ६ ( ) का समझौता कर देंगे तो मैं इसी पर काम करूँगा।

छः माह अख़बार की हालत देखकर बाद को फ़ैसला कर सकूँगा कि मेरे लिए कौन-सा रास्ता ज़्यादा सीधा है। यहीं से इस्तेफ़ा देकर चला आऊँगा। बड़ा सबब है मैं अख़बार को चला सकूँ। अगर छः माह के बाद अख़बार कुछ न निकला तो मैं हाथ पैर फैलाऊँगा। वर्ना अपना सा मुँह लेकर अपने पुराने दफ़्तर पर जमूँगा। मगर ६ ( ) से कम पर मेरा गुज़ारा नहीं हो सकता। यह साफ़गोई आपसे अपना दोस्त हमदर्द और भाई समझकर करता हूँ। मैं काम से जी नहीं चुराता। न इस क़दर मुआवज़ा चाहता हूँ गोया मैं कहीं का बड़ा मुहक़्क़िक़ निगार[1] हूँ। यहाँ सिर्फ़ गुज़ारा चाहता हूँ और गुज़ारा ६ ( ) से कम में नहीं हो सकता।

दूसरी बात आप ने 'ज़माना' अब तक निज के तौर पर चलाया है। इसका ख़र्च और आप का घर ख़र्च दोनों एक ही मद में शुमार होते रहे जिसकी वजह से आप अक्सर परेशान होते रहे। आप ने अपना जाती ख़र्च बहुत बढ़ा लिया है। साझेदारी के लिये मुनासिब इंतज़ाम यह है कि 'ज़माने' का मुआमला निज का मुआमला न हो। इसका हिसाब किताब और नफ़ा नुक़सान का सब ख़र्च से बिल्कुल अलग होगा। इन्हीं उसूलों पर काम चल सकता है। मुझे यक़ीन है कि एक हिन्दू पर्चा जो सस्ता काग़ज़ अपनी ... दे सके उसके लिये गुंजाइश बाक़ी है। हमारी यह ख़्वाहिश होनी चाहिए कि हिन्दू पर्चों में 'ज़माना' एक चमन हो जाये। इसकी शानों का दूसरे अख़बार इस्तक़बाल[2] करें। अख़राजात[3]

[1] काम रतीवाला [2] अदद [3] मन्दी

नगीने की तफ़्सील जो आपने दी है वह मैं पहले भी देख चुका हूँ। बहरहाल मैं काम करने के लिये तैयार हूँ ऊपर लिखी हुई शर्तों पर और उस हालत में जब कि माली हालत मुस्तहकम हो। और मैं किराये का टट्टू बन कर काम न करूँगा बल्कि अपने जोश से। या तो आप अभी मेरी ख़िदमात तलब करें या जब अख़बार की हालत ख़ूब मालूम हो तब।

अब आप की तबीयत कैसी है।

यहाँ सब ख़ैरियत है। बारिश बकसरत हुई।

आपका

धनपत

१२

स्थान और तिथि नहीं है।
अनुमानतः सन् ११ १२ में
महोबे से लिखा गया।

बरादरम

मशकूर हूँ। पहले 'अवध अख़बार' वाला मुआमला। क्या जवाब दूँ। माली पहलू यह है कि यहाँ नेट आमदनी ८) से किसी तरह ज़्यादा नहीं है। घोड़े का ख़र्च और मुलाज़िमों की तनख़्वाह इसमें शामिल नहीं है। क़रीब-क़रीब यही हालत वहाँ भी होगी। और मसारिफ़[1] बदस्तूर। मगर काम में बड़ा फ़र्क़ है। यहाँ बहुत आज़ादी है बावजूद ग़ुलामी के। चूँकि कोई अफ़सर सर पर नहीं रहता और न कोई जवाबदिही है, इसलिये आज़ादी सी मालूम होती है।

१ बजे से ६ बजे की हाज़िरी दिमाग़ी काम रोज़ाना अख़बार, जी काँप जाता है। हिम्मत नहीं पड़ती। यहाँ लिटरेरी काम बमंज़िला तफ़रीह[2] है। वहाँ यह मशग़ला[3] हो जायगा। हालाँकि लड़के की पढ़ाई और आइन्दा ज़िन्दगी की रफ़्तार के ख़याल से यह मौक़ा बुरा नहीं है मगर काम की कसरत इरादे को मुस्तहकम नहीं होने देती। बहरहाल मैं अभी दुबिधे में हूँ। अगर मौक़ा मिले तो आप प्रोप्राइटर से ज़िक्र कीजियेगा। उस वक़्त तक शायद इरादा किसी तरह जम जाये।

क़िस्सा लिखा हुआ तैयार है। सिर्फ़ नक़्ल करना बाक़ी है। कल तक शामिल हो जायगा। आपने मेरी तनख़्वाह बढ़ा दी इसका मशकूर हूँ। क्योंकि यह प्राइवेट ट्यूशन है। अब मुझे ४) माहवार मिलेंगे।

---

१ ख़र्चे २ सिर्फ़ मनोरंजन के लिए ३ शौक़िया

मेरे क़िस्सों के मजमूए का ख़याल रखिएगा। और जब आप अपना अख़बार में पहुँच जायें उस वक्त इसे निकालने की फ़िक्र करना मुनासिब होगा। मुमकिन है आपका अपना अख़बार में पहुँचना मेरे लिये कोई बेहतरी की सूरत पैदा करे। क्या ज़रूरत है कि मैं अपना ख़ून जिगर या उँगलियों से निकलनेवाले क़तरए ख़ून को किसी ग़ैर जगह फेंकूँ, अगर अपने घर में कुछ हो तो दूसरे का दस्त निगर[1] होऊँ?

हालाँकि मैंने 'हमदर्द' को कोई अच्छा क़िस्सा नहीं दिया ताहम अगर उनके लिये और कोई गुंजाइश होती तो मैं वहाँ न देता। हाँ नाराज़ी[2] न होना चाहिये। आपके पास ईश्वर ने चाहा तो परसों क़िस्सा पहुँचेगा। 'मशीर' में आज तीर्थ राम का आज़माइश देखा। मुझे तो तर्जुमा-सा मालूम होता है। है यही बात न?

अब रिसालों और अख़बारों का ज़िक्र। आप मुझे 'मॉडर्न रिव्यू' 'लीडर' और 'हिन्दुस्तान' न दीजिये। 'मॉडर्न रिव्यू' मैं मँगवाऊँगा। 'हमदर्द' अब अनक़रीब आने ही लगेगा। बस कोई एक उर्दू पर्चा मसलन 'वकील' या 'वतन' मुझे और मिलना चाहिए। 'हिन्दुस्तान' मैं आज मँगाता हूँ। इतना काफ़ी हो जायगा।

'मुस्लिम गज़ट' में रिज़वी का मज़मून 'मुसलमानों की पोलिटिकल करवट' क़ाबिलेक़द्र है। मैं दसहरे की तातील में नहीं रहा। यहीं आ गया। अब अच्छा हूँ। और तो कोई हाल ताज़ा नहीं है।

आपका

धनपतराय

१३

महोबा

६ फ़रवरी १९१३

भाईजान

आज आपका अंदेशा ख़त मिला। मि० निज़ाम 'ज़माना' और 'गिर्देपेश' का पैकेट भी वसूल हुआ। 'आज़ाद' भी आया। 'आज़ाद' के इश्तिहार बाबत मेरी राय पूछी है। इसमें वह अभी तक मुझ तक नहीं पहुँचा मगर इसमें कुछ मुबालग़ा नहीं है कि वह अब उर्दू के बेहतरीन अख़बारों में हमसरी[3] का दावा कर सकता है। मगर इश्तिहार के साथ हर नंबर में किसी साहिबे राय का एक

---

१ मोहताज २ नाराज़ ३ बराबरी

ओरिजिनल मज़मून और एक दिलचस्प तर्जुमा दिया जा सके तो इसकी दिलचस्पी और बढ़ जाये। अब की पं० बद्रीदत्त का मज़मून था। इसी तरह हरेक नंबर में कोई न कोई मज़मून हो जाये तो क्या कहना। नामानिगारों[1] की अभी तक कमी है। आप खुद इसकी अहमियत समझते हैं और कसरतेकार ने ग़ालिबन् आपको अभी इस तरफ़ मुख़ातिब नहीं होने दिया। बहरहाल इसकी रफ़्तार रफ़्ता-रफ़्ता है। मालूम नहीं कहानी का दायरा भी इसी निस्बत के साथ वसीह हो रहा है या नहीं।

बाबू रामभरोसे के पिदरे बुज़ुर्गवार के इंतक़ाल की ख़बर निहायत पुरमलाल है। ईश्वर उन्हें सब्र दे। अब ख़ानादारी का सारा बोझ उनके सर पर आ पड़ा। जिस खूबसूरती से वह अपनी शान को सँभाले हुए थे मालूम नहीं रामभरोसे में वह सलाहियत है या नहीं। मगर इसमें शक नहीं कि मरहूम की ज़िन्दगी काम-याब ज़िन्दगी थी—और हर एक मरनेवाले को उस पर रश्क हो सकता है। आप मेरी जानिब से हमदर्दी का सच्चा पैग़ाम उन्हें दे दें। मैं ताज़ियतनामा[2] भी लिखूँगा।

मुझे यह सुनकर बड़ी खुशी हुई कि आपका मशीन प्रेस अब अनक़रीब बन जायेगा। ग़ालिबन् कुतुबफ़रोशी की शाखें भी क़ायम होंगी। ईश्वर आपकी कोशिशों को बरसब्ज़ करे। मैं मजबूर हूँ कि मुझे to fall back upon का कोई सहारा नहीं है। बस किराये का टट्टू हूँ। प्रेमपचीसी इस प्रेस का पहला काम होगा। अपने तईं मुबारकबाद देता हूँ। बीस क़िस्से तो जमा हो गये हैं जो अभी दफ़्तर के दफ़्तर में पड़े हुए हैं। मालूम नहीं हमदर्द खुलेगा भी या ठप्पा पड़ गया। बहरहाल दो तीन माह में पच्चीस क़िस्से तैयार हो जायेंगे। हाँ किताब किसी क़दर ज़ख़ीम[3] हो जायेगी। चार सौ सफ़हे से किसी तरह कम न होगी। मिस्तर उन्नीस सतरी रहना चाहिए और साइज़ ज़माना के दो वरक़ कम के साइज़ के बराबर। ग़ालिब खूबसूरत हो। मैं मज़ामीन की तरतीब दूँगा और जहाँ कहीं जाने की ग़लतियाँ हो गयी हैं उनकी इस्लाहें[4] भी कर दूँगा। मगर मेरे पास सब पर्चे मौजूद नहीं हैं। अक्सर ग़ायब हो गये। इसलिए ज़रूरत होगी कि मेरे पास सब पर्चे मौजूद हो जायें। बहरहाल जिस वक़्त फ़ैसला हो जाये न यहाँ से उन चंद क़िस्सों की कापी भेज दूँगा जो मेरे पास मौजूद हैं। दीबाचा आप लिखेंगे या जिस आप मुनासिब समझें उससे लिखवाइएगा। ख़र्च और नफ़े में मुझे निस्फ़ का शरीक समझिए। नफ़े का ज़िक्र ही क्या ख़र्च में आधे का साझीदार हूँ।

---

१ संवाददाताओं २ कार्यालय ३ संवेदना का पत्र ४ मोटी ५ सुधार

अब रहे चंद हिन्दी रिसाले। आप मुझे अपने हिन्दी डिपार्टमेण्ट का एडीटर समझिए। मैं अखबारात और रिसालों से मुताल्लिक और दिलचस्प तर्जुमा कर दिया करूँगा। क्या कहूँ उन पर नाज़ और तनक़ीदें[1] लिखूँगा। हिन्दी शोअरा के दिलचस्प और मुख़्तसर अशआर उमरियात[2] का सिलसिला भी हुआ। मर्यादा आप लिखते हैं भेज दिया गया अभी यहाँ नहीं पहुँचा। सरस्वती यहाँ एक जगह आती है। अब बंद हो गया। आप जो अखबारात और रिसाले यहाँ भेजेंगे उन्हें मैं जब कभी आऊँगा लेता आऊँगा ताकि आपके दफ़्तर में मौजूद रहें। आपकी कई किताबें और कई रिसाले मेरे पास पड़े हुए हैं। अबकी आमद में सब वापस बेबाक हो जायेगा। अब किसी दीगर दिलचस्प मज़मून का तर्जुमा कराना चाहता मैं वह भी अपने ज़िम्मे[3] करने को तैयार हूँ। आज एक क़िस्सा 'ज़िन्दगी और मौत' ज़माना के लिए भेजता हूँ। पसंद आये तो दर्ज कीजियेगा। यही आख़िरी कोशिश है। इस महीने भर में एक सतर भी नहीं लिखा। तबीयत की यह कैफ़ियत रहती है। फ़ुरसत नहीं मिलती।

अदीब आया। हरएक मज़मून के साथ एडीटर का नुक़्ता मौजूद है। इन्हें आगे पर हवाला दर्ज किया है। मालूम होता है मुसव्विर की हैसियत अख़्तियार कर लेगा।

ज़माना की पेशानी-ए-मुबारक[4] पर आपको मुबारकबाद देता हूँ। मेरा ख़्याल है यह साल का रिसाला... साल को निकल गया तो आपसे भी इस्तिहकाम[5] क़ायम रहेगा। यह उर्दू दुनिया में एक ग़ैर मामूली बात होगी।

अब एक ड्रामा का ज़िक्र। मुझे इस वक़्त चंदी ज़रूरत नहीं है। मगर मेरे ज़िम्मे हमीरपुर आर्यसमाज के दस रुपये बाक़ी हैं। बार-बार तक़ाज़ा हुआ है मगर अभी तक इस क़ाबिल न हुआ कि अदा कर दूँ। आप अगर afford कर सकें तो यह दस रुपये मेरे नाम से हमीरपुर आर्यसमाज के सेक्रेटरी के नाम दस रुपये का मनीआर्डर कर दें। ममनून हूँगा। लाइब्रेरी तो बाक़ी मगर मेरी ख़ातिर इतना अच्छा मौक़ा क्योंकि अभी अब जल्सा भी क़रीब आनेवाला है। मुक़र्रर यह कहना है कि यह दस रुपये ज़रूर भेज दें। मैंने जनवरी में अदा करने का वादा[6] कर लिया है। अगर अगर इत्तफ़ाक़ है तो मैं यह समझूँगा कि ज़माना अब एक रुपये का दस्तूर है। अबकी मैं ख़ातिर जमा था यह हिसाब रहा। इंशाअल्लाह आइन्दा इसराफ़ न होगा। इसकी बाबत में अब हिसाब चलता है।

१ आलोचनाएँ २ कविताएँ ३ आकर्षक ४ ... ५ ... ६ ... ...

और तो कोई नयी बात नहीं। तेजनारायन लाल ने बांदा में आठ रुपये की नौकरी कर ली है। मुदर्रिस हो गये हैं। बाक़ी काम बदस्तूर चल रहा है। सेहत अलबत्ता बहुत अच्छी नहीं है।

तामीरे बेहूदी पर एक मुख़्तसर-सा नोट लिखा है, मुमकिन हो तो दे दीजिएगा।

आपका
धनपतराय

१४

महोबा
२८ फ़रवरी १९११

बरादरम

बहुत से रिसाले आये। ज़माना भी १५ और २२ फ़रवरी का मिला। मगर ५ फ़रवरी का नहीं मिला। ख़ैर। चन्द रिसालों के रिव्यू लिखे हैं और वह इरसाले ख़िदमत हैं। फ़रवरी के रिसालों का रिव्यू बहुत जल्द भेजूँगा। फ़ुर्सत न मिली। 'अमावस की रात' आधा नक़ल कर चुका हूँ बाक़ी जल्द नक़ल करके भेजूँगा। ज़माना फ़रवरी का मिला। पढ़ लिया है। सिर्फ़ लिखाई छपाई क़-ब-क़लमफ़ुस[1] है। ये इसके पुराने ख़ुसूसियात हैं और इनमें हर्गिज़ कमी नहीं होनी चाहिए। ज़माना के लिए कोई नोट न लिख सका। अदीमुलफ़ुर्सती[2] का रंज है। मगर जल्द ही काम ख़तम हुआ जाता है। और कोई ताज़ा हाल नहीं। प्रेम-पचीसी के क़िस्सों की तरतीब[3] दी है। मज़मून और रिव्यू और यह तरतीब साथ-साथ एक हफ़्ते में पहुँचेंगे। मुमकिन हुआ तो दो-तीन नोट भी मुरत्तब[4] हो जायेंगे। अभी मैगज़ीन में एक तारीख़ी मज़मून सैर-ओ-सियाहत के मुताल्लिक़ है। उसका तर्जुमा भी करता जा रहा हूँ। फ़ुर्सत है। ज़माना की रफ़्तारे तरक़्क़ी कैसी है। रामसरन के बरताव[5] से मुझे पूरा इत्तफ़ाक़ है। यही बात मेरे दिल में भी थी।

आपका
धनपत

---

१ [illegible] २ फ़ुर्सत न मिलना ३ क्रम, सिलसिला ४ तैयार ५ बर्ताव।

१५

महोबा
६ मार्च १९११

बरादरम

तसलीम। ६७ का माहवार देखा। योमन् फ़-योमन्[1] तरक़्क़ी हो रही है। और मुबारकबाद के क़ाबिल। मज़मूननिगारों की कमी भी अब पूरी हो जाय। मगर ज़माना न गिरने पाये। बस मज़ामीन के रिव्यू और 'ज़माना की राय' भेज चुका हूँ। अगर आप हमीरपुर समाज के नाम दस रुपये न रवाना फ़रमाये हों तो बराहे करम अब कर दीजिए क्योंकि मैं १४ को वहाँ जाऊँगा और तक़ाज़ा नहीं सहा जाता। प्रेम के क़िस्से ११ आपके यहाँ छप गये हैं २ हमदर्द के यहाँ हैं। वह दोनों आज मँगवाये जाता हूँ। तब दो की कमी रह जायगी और वह दो रिसाला के पूरे होने तक बन जायेंगे। तरतीब क्योंकर दूँ। मज़ामीन[2] की सूरत में नहीं आते वर्ना मैंने चाहा था कि शुजाअत[3] ख़ुद्दारी[4] ईसार[5] वग़ैरह के उनवानों[6] से तरतीब दूँ। मुनासिब यही मालूम होता है कि दिलचस्पी और इख़्तसार[7] के लिहाज़ से उनकी तरतीब दी जाये। २५ क़िस्सों का हज्म बहिसाब औसत १२ सफ़े फ़ी क़िस्सा ३०० सफ़े होगा या ज़्यादा से ज़्यादा बीस जुज़। आपके तजुर्बे[8] में इसका कुल ख़र्च क्या होगा।

और क्या हाल है। दो एक नोट ज़रूर लिखूँगा। इधर दो हफ़्ते से आपका ख़त नहीं आया फ़िक्र है। जवाब जल्द लिखा हो।

आपका
धनपत राय

यह बहुत अच्छा होगा कि किताब पब्लिक में आने से पहले ख़ास-ख़ास अहले क़लम के पास इज़हारे राय के लिए भेजी जाये और यही रायें इश्तहार का काम दें।

१६

महोबा
२२ मार्च १९११

माई डियर

आज हमीरपुर से वापस आया। अब तक ताज़ा ज़माना नहीं मिला। मार्च का ज़माना मिला। अभी अच्छी तरह देख नहीं सका हूँ मगर कुछ कमज़ोर नज़र

---

१ दिनोंदिन २ ... ३ बहादुरी ४ स्वाभिमान ५ आत्म-बलिदान, त्याग ६ शीर्षकों ७ संक्षेप ८ अनुभव

मालूम होता है और लिखाई-छपाई की शिकायत मुआफ़।

इस तरफ़ कोई मज़मून न लिख सका क्योंकि ग्रामर व रस्म की तरद्दुद से इत्मीनान न मिला। अलावा इसके कोई मसाला भी पास न था। ज़िन्दगी और मौत बहुत गलत छपा। और क़िस्सा भी कुछ यों ही सा है। मगर अमावस की रात की निस्बत आपका क्या ख़याल है। निमाई नाव लिख चुका हूँ सिर्फ़ साफ़ करना बाक़ी है। रणथम्भौर के क़िले पर एक छोटा-सा मज़मून [illegible] (हिन्दी) से अख़्ज़ करके रवाना करता हूँ।

मिस्टर शरन के घर में बच्चा पैदा हुआ है। ख़ुशी की बात है। ईश्वर उसे ज़िन्दा रखे। मेरी न पूछिए। अहबाब फलें-फूलें। मेरी ख़ुशी के लिए इतना काफ़ी है। ज़्यादा की ज़रूरत नहीं है। उन्हीं के बच्चों को प्यार करके अपनी हवस मिटा लूँगा।

प्रेम पचीसी की तैयारी में तीन सौ लगेंगे। यह रक़म बहुत ज़्यादा है। क्या इससे कम में तैयार नहीं हो सकता। काग़ज़ बहुत अच्छा न सही। आपने छपाई ख़ुश्क का हिसाब लगाया है या तर का। बहरहाल अब मैं जुलाई और अगस्त में दो महीने के लिए कानपुर आऊँगा और उसी ज़माने में यह सब काम हो जायगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

—धनपत राय

१७

महोबा
२ मई १९११

भाईजान

चंद मुख़्तसर नोट इरसाल[1] हैं। उम्मीद है पसंद आयेंगे। आज मैं आप से कुछ मुआमले की बातचीत करने की इजाज़त चाहता हूँ। आज़ाद को जारी हुए तक़रीबन पाँच महीने हुए। आप छः महीने की मुद्दत को अख़बार की कामयाबी के लिए काफ़ी ख़याल करते थे। वह मुद्दत अब क़रीब है। मुझे यक़ीन है कि आज़ाद अब चल निकला। मैं अव्वल से और अब तक इसमें औक़ात[2] और फ़ुर्सत आज़ाद के लिए थोड़ा-बहुत लिखता रहा हूँ। मगर आप जानते हैं यह माद्दियात[3] का ज़माना है। हर एक इंसान अपनी मेहनत का कुछ-न-कुछ नतीजा ज़रूर चाहता है। ख़ुसूसन् ऐसी हालत में जब कि मेरी सेहत भी अच्छी नहीं है। कुछ अमली नतीजे की तरग़ीब[4] अम्र[5] के लिए बहुत कारगर साबित होती है। मैं किताबी कीड़ा मशहूर हूँ और मेरा तबई मैलान[6] जैसा है उससे उम्मीद नहीं है कि मैं सरकारी मुलाज़िमत में कभी कारगुज़ार कहला सकूँ। मेरा शुमार अब तक

---

१ प्रेषित २ अवकाश और सामर्थ्य-भर ३ भौतिकता ४ प्रेरणा ५ मामला ६ दिली रुझान

दर्जन लोगों[1] के आदमियों में रहा है और आइन्दा रहेगा। इसलिए मेरी दरख़्वास्त[2] दोनों साहबों से है। अगर इधर से न सही तो किसी और तरफ़ से सही कुछ आमदनी फ़ायदा होना चाहिए। इसलिए मेरी आपसे दरख़्वास्त है कि आप अब दार-उल-तरजुमा[3] जितने मज़ामीन या नोट शाया करें उनकी उजरत किसी एक शरह[4] से मसलन आठ आना फ़ी कालम मुकर्रर फ़रमा दीजिए। मेरा ख़याल है कि यह आज़ाद पर कोई नाक़ाबिल बर्दाश्त बार न होगा क्योंकि मैं किसी हफ्ते में भी चार कालम से ज़्यादा नहीं लिख सकूँगा और आज़ाद को ज़्यादा से ज़्यादा लिख दस रुपए मेरी नज़्र करना पड़ेगा। मुझे उम्मीद है कि आप इस मेरी जानिब से भी मग्नी न नाराज़ फ़रमायेंगे। मैं चाहता था कि यह तहरीक[5] आपकी जानिब से होती मगर एक ही बात है। अगर आप इसे पसंद न फ़रमायें तो कोई मुज़ायक़ा नहीं मैं हस्ब दस्तूर सौदा और क़लम के लिहाज़ से कुछ-न-कुछ ज़रूर लिखता करता रहूँगा मगर शायद दोस्ताना बराबर समझकर। मैं जानता हूँ कि आप निहायत दस्त हैं आपसे हासिल कुछ नहीं। मगर ऐसा क्या हो। और अख़बार नुक़सान कर रहे हैं आप क्या नुक़सान उठायें। बदक़िस्मत और बदनीयत ईसार क्यों करें। इस बेतकल्लुफ़ी के लिए मुझे मुआफ़ फ़रमाइएगा। और अगर तजवीज़ पसंद आये तो फिर इस्माय[6] न इसका ज़िक्र कीजिए और न आप भी यह ज़िक्र यहीं ख़त्म हो जाना चाहिए।

आपका

धनपत राय

१८

महोबा

४ मई १९११

भाईजान

आज आपका मुफ़स्सल ख़त मिला। निगाहे नाज़ में अगर कहीं कोई कम्प्लेन हो सिर्फ़ का गला उड़ा दीजिए और अगर ये नाराज़ हैं तो इनके बजाय 'देहल' कर दीजिए। मुझे कोई उज्र नहीं है। मुझे यह सुनकर निहायत मसर्रत हुआ कि अभी तक आज़ाद आम तौर से पढ़ने के क़ाबिल नहीं हुआ। यही ग़म करके मैंने बस पहला एक शिकायतनामा लिखा है जिस पर अब नादिम हूँ। मैं समझा था कि अब हालत कुछ बेहतर[7] होगी। तेज बहादुर बीच में बमुश्किल आठ दस मारवाड़ और ... मगर बेकार हो गये। घर पर आ रहे हैं। पाटक न ... का इस्तेमाल किया है। उनकी शादी की बातचीत मिर्ज़ापुर के ज़िले में हो रही है।

---

१ लोगों का [illegible] २ [illegible] ३ [illegible] ४ [illegible] ५ [illegible] ६ [illegible] ७ [illegible]

बेगम साहिबा यहीं तशरीफ़ रखती हैं और मासिवा तुम्हारे नेक अख़्तर[1] की आमद है। और सब हालात साबिक़ दस्तूर हैं। पापोश का इंतज़ार है। और क्या अर्ज़ करूँ। बेद रोज़नामा मेरे नाम जारी हो गया है। मैंने उसका नामानिगार[2] बनना मंज़ूर कर लिया है। मुआवज़े की बातचीत हो रही है। आज चौटक के क़स्बे मिर्ज़ापुर से आनेवाले हैं। और कोई हाल ताज़ा नहीं है। बाबू राम सरन की ख़िदमत में दस्तबस्ता आदाब पेश करता हूँ।

आपका
धनपत राय

१९

गोरखपुर लक्ष्मीभवन
२ जून १९११

भाईजान

तसलीम। मुझे अफ़सोस है कि मैं अपने वादे के मुताबिक़ ४ को बनारस न आ सकूँगा। अभी यहाँ मुझे तीन दिन और रहना पड़ेगा। ऐसी ही ज़रूरत दर पेश हो गयी है। इसलिए वालिदा साहिबा जिस दिन बनारस आयें उससे बाबू महताब राय ख़ानमपुरा बनारस को मुत्तला कर दीजियेगा। वह बुलानाला के धर्मशाले में मुनासिब इंतज़ाम कर देंगे। मैंने उन्हें ताकीद कर दी है। बाबू रघुपत सहाय की तबीयत किसी क़दर नासाज़ है।

आपका
धनपत राय

२०

महोबा
७ जून १९११

भाईजान

आज आपका कार्ड आया। अपना मुफ़स्सल ख़त परसों लिख चुका हूँ। बहुत अच्छा हुआ कि मशीन आ गयी। अब ज़माना और आज़ाद दोनों वक़्त पर और साफ़ छपेंगे। ग़ालिबन् कानपुर में आपको काम की कमी न रहेगी।

प्रेम पचीसी की कापी मैं ख़ुद देखना चाहता हूँ। मैं अपनी हालत ख़राब होने के बाइस आजकल बिलकुल अपाहिज हो गया हूँ। ओरिजिनल कोई क़िस्सा नहीं। एक है सो वह अधूरा पड़ा हुआ है। हाँ एक क़िस्सा मैंने बंगाली से अख़्ज़[3] किया था। वह अगर आप पसंद करें तो मैं भेज दूँ। हाँ उस पर अपना नाम न दूँगा।

मेरा ज़रा सही हो जाये तो फिर कुछ काम करूँ। कानपुर मेरे प्रोग्राम में

---

१ भाग्यवती कन्या २ संवाददाता ३ लिया

हासिल है। और ग़ालिबन् बनारस जाने से क़ब्ल अगर आप मेरी पिहाइशों[1] का कोई इंतज़ाम कर सकें तो मैं कानपुर ही में अपना मुआलिजा[2] कराऊँ। क्यों बनारस जाऊँ। क्योंकि अब शादी तो होगी नहीं ख़्वामख़्वाह की बरमदी है।

मैंने अपने परसोंवाले ख़त में कुछ अफ़साने[3] 'आज़ाद' का ज़िक्र किया है। मई और जून में कुल चौबीस क़ायम हुए। अब शायद जून में मैं कुछ न लिखूँगा क्योंकि हाज़मा निहायत कमज़ोर हो गया है और एक घंटे भी बैठना दुश्वार है। मगर माहवार[4] ख़र्च रखिए तो आठ मुसव्विदात होते हैं। अगर आप बग़ैर बहुत ज़्यादा तरद्दुद के एक तीन चार रुपये की बाबत और चार साढ़े चार रुपये का जूता सिलवा सकें तो आपका बहुत ममनून[5] होऊँगा। एक ही पार्सल में दोनों आ सकते हैं। मेरा जूता छोटा ने ले लिया और मैं बरहनापा[6] हूँ। मगर यह सब उसी हालत में कि आपको तरद्दुद या परेशानी न हो वर्ना कुछ ज़रूरत नहीं। और क्या लिखूँ। जूते का नंबर ७×४ है। मैं अब क़िस्से को भेजने की कोशिश करूँगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

२१

महोबा
तिथि नहीं है। अनुमानतः
सितम्बर सन् १३ में लिखा गया।

मुकर्रम बन्दा

तसलीम। इनायतनामा[1] जिसे आपका इताबनामा[2] कहना चाहिये वसूल हुआ। कई दिन हो गए। सोचता रहा किन लफ़्ज़ों में जवाब दूँ। कैसे गुस्सा ठंडा करूँ। कुछ ध्यान में काम न किया। न शेर जो शायरी के फ़न है कि दो चार बढ़िया शेर कहता दूँ। फिर आख़िर दिल में यही फ़ैसला किया कि तुम गुनाहगार हो। मिज़ाजे यार[3] में जो कुछ आवे करने दो और जवाब दे लिये मुझे जाओ। यह कहना कि मैं बनाता हूँ ग़ालिबन आपके नज़दीक कोई मानी नहीं रखता क्योंकि आपको ख़बर है कि आपके चंद अहबाब भी मुस्तक़िल मसखरा हैं और आप इस्तक़रार[4] न काफ़ी है। मगर मुझको शिकायत अगर है यह कि आपने अपनी उम्र का अपना बेहतरीन हिस्सा भी तरह ग़ारत अख़बारात में सर्फ़ किया होगा

[illegible]

तो आप इतनी बेतौफ़ी से यह मतालबा न लिखते। मैंने रुखसत लेने में कोई दक़ीक़ा[1] नहीं छोड़ा। दो दरख्वास्तें दीं तार दिया। दरख्वास्तें दोनों बाद अज़ वक़्त[2] दी गयी और दोनों मेरे पास रक्खी हुई हैं। बेशक मैंने मेडिकल सर्टिफ़िकेट देने की कोशिश नहीं की लेकिन मुझे यहाँ इसके मिलने की उम्मीद भी न थी। यह इलज़ाम कि दरख्वास्तें क्यों बाद अज़ वक़्त दी गयीं मेरे सर ज़्यादा से ज़्यादा १ [illegible] है क्यों कि मेरे पहले हफ़्तए क़याम कानपुर में तो आपने रोज़ाना अखबार का कोई डाइरेक्ट तज़किरा नहीं किया। ज़िक्र किया तब जब मेरी रुखसत खत्म होने को आई *और इत्तला उस वक़्त हुआ जब कुल तीन दिन रह गये। ऐसी हालत में मेरे जैसे* बराये[3] का आदमी बजुज़ इसके और क्या कर सकता था कि रुखसत लेने की कोशिश बहद्दे इमकान[4] करे और न मिल सके तो मजबूरन व नाचारन अपनी नौकरी पर वापस आ जाये। आप ही फ़रमाइये मुझे क्या ग़रज़ पड़ी थी क्या दबाव था कि मैं पहले काम शुरू कर देता और तब भाग खड़ा होता। आपने मेरा भला नहीं चाहा था और न कर सकते थे। आपने मुझे कोई सैक्रिफ़ाइस करने पर मजबूर नहीं किया न मैंने कोई सैक्रिफ़ाइस की। मेरा [illegible] था। फिर ऐसा कौन अम्र था जो मेरी बेदिली का बाइस होता। हमीरपुर में भी ऐसे वक़्त पहुँचा जब मेरी रुखसत तमाम होने वाली थी। मैं ११ की शाम को चला और इतवार का दिन। *डिप्टी इन्स्पेक्टर दौरे पर। ग़रज़ हमीरपुर में ऐसा कोई शख्स न था जिससे मैं* सलाह-मशवरा कर सकता क्योंकि हमीरपुर में मेरे जानने वाले गिनती के आदमी भी नहीं हैं। यहाँ आगा और चार्ज लेने में तब भी एक दिन की देर हो गयी जिसका जवाब मुझको देना पड़ा। यह है मेरा बयान हलफ़ी।

अब दूसरे पहलू पर नज़र कीजिये। आपको मेरे भाग निकलने पर नाराज़ होने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि जैसा अखबार आप चाहते हैं वह कम तनख्वाह और खर्च में निकल सकता है और निकल रहा है। मालूम नहीं इसकी इशाअत क्या है, लेकिन मुझे यक़ीन है कि इसकी वह हैसियत क़ायम है। एक मामूली सेहत और मामूली लियाक़त का आदमी ऐसा अखबार निकाल सकता है जिसमें बहुत *सा ओरीजिनल न लिखना पड़े। मालूम नहीं आपने रोज़ाना आज़ाद का क्या* इन्तज़ाम किया। न मुझे पूछने का कोई हक़ हासिल है। लेकिन यक़ीनन हस्ब-दिलख्वाह[5] कोई न कोई इन्तज़ाम ज़रूर हो गया होगा। और १८ अक्तूबर से तो उसकी दिलचस्पी के लिए किसी मज़ीद[6] मसाले की ज़रूरत ही बाक़ी न रहेगी। *आप और अगर ज़्यादा नहीं तो यही क़यास करके मुझे मुआफ़ कीजिए* कि रोज़ाना अखबार की आरज़ू को अमली सूरत में लानेवाला वही शख्स है। गाड़ी

१ कसर २ वक़्त के बाद ३ ज़रिये, वास्ते ४ सामर्थ्य भर ५ मनोनुकूल ६ अतिरिक्त

का पहिया पहले मुश्किल से चलता है और एक बार चल निकला तो चल निकला।

इस पचीसी ग़ालिबन् अब हम तक न पहुँच सकेगी क्योंकि दोनों अखबार का अल्सियत अब प्रेस को मालूम कैसे होगा।

मैं पारसल पत्र कर चुका हूँ कि मेरे 'दस्तंबू' और 'ज़माना' के मज़ामीन व मुताल्लिक़ कुल ३२) पाने हैं। १९) पारसल में इन का आधा हिस्सा तो उजरत शामिल करके ३२) हो जाते हैं।

पहले ख़याल था कि इस पचीसी ८६ ग़ज़लें छप चुकी हैं और इसमें इस्तेमाल सब मिलाकर काग़ज़ वग़ैरह ३७) हुआ है। ऐसा हमारा और आपका हिसाब यहीं तक आता है। अब अगर आप पचीसी को निकालना पसंद करें और आप लिखें[1] मज़-मामात में शामिल हों तो ४८ ग़ुज़र को पदार्पण नाकि १ ग़ुज़र की एक सामी किताब हो जाय। लेकिन हम १ ज़गर में २ कहानियाँ आ जायेंगी। अगर यही तरतीब[1] के मुताबिक़ ३२ हिस्से न आ सकते हों तो आप उस की तरतीम[1] करके हम १ ज़ुज़र में १ हिस्सा लगा सकते हैं। यह गोया 'पचीसी' का पहला हिस्सा होगा। दूसरा हिस्सा हमको उजरत और मस-लहत बाद को शाया कर दिया जायगा लेकिन अगर आपका इस इतना वक़्त था न निकाल सकें तो मैं कहीं मज़दूरी का इंतज़ाम करूँ कि पाला मेरे ३) मय पता फ़रमाइये जायें या इस पचीसी के ८६ ग़ुज़र दस हाथ रख के वापस मेरे पास भेज दिये जायें। लेकिन हम कहानियों में ग़ैर-मामूलियत से काम नहीं ले रहे हैं। मैं बिना दूसरे पब्लिशर का हुक्म और न लिख सका तो हम ४८ ज़गर की किताब बना लेंगे। सिर्फ़ इशाअत और टाइटिल की ज़रूरत होगी। और यह भी न हो सका तो हज़रत और या नाम पर दोस्तों का वास्ता और सम-झना कि

कर गया की तरह
या मज़ा मरना गर की तरह।

बरसात भर या कुछ तकलीफ़ करें उन्हें करें और सब मज़मून रख जायें। सबसे मज़ा लगता कम पड़े हुए ग़ुज़र का भय रहा है। इसमें आपका लिए हस्ब दम की देर है। हवाली ने पहुँच कहना और अब पर गए पास। आपको कोई तक लीफ़ न हुई।

मैं यह लिख ६ ज़गर की किताब निकालना पसंद करता हूँ बशर्ते कि आप राज़ी हों और उस किताब को निकाल सकें। [illegible] व [illegible] में प्रेस से [illegible]

[1] [illegible]
[illegible]

तो आप इतनी बेतकल्लुफ़ी से यह मज़मून न लिखते। मैंने रुख़सत लेने में कोई दक़ीक़ा[1] नहीं छोड़ा। दो दरख़्वास्तें दीं तार दिया। दरख़्वास्तें दोनों बाद अज़ वक़्त[2] दी गयीं और दोनों मेरे पास रखी हुई हैं। बेशक मैंने मेडिकल सर्टिफ़िकेट देने की कोशिश नहीं की लेकिन मुझे यहाँ इसके मिलने की उम्मीद भी न थी। यह इल्ज़ाम कि दरख़्वास्तें क्यों बाद अज़ वक़्त दी गयीं मेरे सर ज़्यादा से ज़्यादा १ से है क्यों कि मेरे पहले हफ़्ते क़याम कानपुर में तो आपने रोज़ाना वग़ैरह का कोई बाद रेफ़्ट तज़किरा नहीं किया। ज़िक्र किया तब जब मेरी रुख़सत ख़त्म होने को आई और फ़ैसला उस वक़्त हुआ जब कुल तीन दिन रह गये। ऐसी हालत में मेरे जैसे दायरे[3] का आदमी बजुज़ इसके और क्या कर सकता था कि रुख़सत लेने की कोशिश बहद्दे इमकान[4] करे और न मिल सके तो मजबूरन व नाचारन अपनी नौकरी पर वापस आ जाये। आप ही फ़रमाइये मुझे क्या ग़रज़ पड़ी थी क्या दबाव था कि मैं पहले काम शुरू कर देता और तब माल बड़ा होता। आपने मेरा नाम नहीं दबाया था और न दबा सकते थे। आपने मुझे कोई सैक्रिफ़ाइस करने पर मजबूर नहीं किया न मैंने कोई सैक्रिफ़ाइस की। मेरा माली फ़ायदा था। फिर ऐसा कौन अम्र था जो मेरी बेदिली का बाइस होता। हमीरपुर में मैं ऐसे वक़्त पहुँचा जब मेरी रुख़सत तमाम होने वाली थी। मैं ११ की शाम को चला और इतवार का दिन। *डिप्टी इन्सपेक्टर दौरे पर। मगर हमीरपुर में ऐसा कोई शख़्स न था जिससे मैं* सलाह-मशवरा ले सकता क्योंकि हमीरपुर में मेरे जानने वाले किसी के आदमी भी नहीं हैं। वहाँ भागा और चार्ज लेने में तब भी एक दिन की देर हो गयी जिसका जवाब मुझको देना पड़ा। यह है मेरा बयान हलफ़ी।

अब दूसरे पहलू पर नज़र कीजिये। आपको मेरे भाग निकलने पर नाराज़ होने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि जैसा अख़बार आप चाहते हैं वह कम तनख़्वाह और सर्फ़े में निकल सकता है और निकल रहा है। मालूम नहीं उसकी इशाअत क्या है, लेकिन मुझे यक़ीन है कि उसकी वह हैसियत क़ायम है। एक मामूली मेहनत और मामूली लियाक़त का आदमी ऐसा अख़बार निकाल सकता है जिसमें बहुत सा ओरीजिनल न लिखना पड़े। मालूम नहीं आपने रोज़ाना आज़ाद का क्या इन्तज़ाम किया। न मुझे पूछने का कोई हक़ हासिल है। लेकिन ग़ालिबन हस्ब-दिलख़्वाह[5] कोई न कोई इन्तज़ाम ज़रूर हो गया होगा। और १८ अक्तूबर से तो उसकी दिलचस्पी के लिए किसी जदीद[6] मसाले की ज़रूरत ही बाक़ी न रहेगी। आप और अगर ज़्यादा नहीं तो यही ख़याल करके मुझे मुआफ़ कीजिए कि रोज़ाना अख़बार की ग़रज़ को अमली सूरत में लानेवाला यही शख़्स है। गाड़ी

१ कसर २ वक़्त के बाद ३ वर्गों, दायरों ४ सामर्थ्य भर ५ मनोनुकूल ६ नवीन

का पहिया पहले मुश्किल से चलता है और एक बार चल निकला तो चल निकला।

प्रेम पचीसी गालिबन् अब हम तक न छप सकेगी क्योंकि रोजाना अखबार की मसरूफियात अब प्रेम को खामोश बैठने देंगी।

मैं आपसे अर्ज कर चुका हूँ कि मेरे अखबार और जमाना के मजामीन के मुताल्लिक कुल ७२) आते हैं। ६६) पहले के इन दो ताजा किस्सों की उजरत शामिल करके ७२) हो जाते हैं।

आपने फरमाया था कि प्रेम पच्चीसी ४½ जुज्व[1] तक छपी है और इसके अखराजात मय किताबत कागज वगैरह ७२) हुए हैं। गोया हमारा और आपका हिसाब यहाँ तक साफ है। अब अगर आप पच्चीसी को निकालना पसंद करें और आप निस्फ[2] नफे-नुकसान में शरीक हों तो ४½ जुज्व और छपवाइये ताकि ९ जुज्व की एक जामी किताब हो जाये। गालिबन इन ९ जुज्व में १२ कहानियाँ आ जायेंगी। अगर मेरी तरतीब[3] के मुताबिक १२ किस्से न आ सकते हों तो आप जरा सी तरमीम[4] करके इन ९ जुज्व में १२ किस्से छपा सकते हैं। यह गोया 'पच्चीसी' का पहला हिस्सा होगा। दूसरा हिस्सा हस्बे जरूरत और हस्बे सहूलत बाद को शाया कर दिया जायगा लेकिन अगर आपका प्रेस इतना काम भी न निकाल सके तो मैं बदर्जा मजबूरी यह इल्तमास[5] करूँगा कि या तो मेरे ७२) मुझे अता फरमाये जावें या प्रेम पच्चीसी के ४½ जुज्व छपे हुए रेल के जरिये मेरे पास भेज दिये जावें। गालिबन इन दरख्वास्तों में गैर-माकूलियत से काम नहीं ले रहा हूँ। मैं किसी दूसरे पब्लिशर को ढूँढूँगा और न मिल सका तो इन ४½ जुज्व की किताब बना लूँगा। सिर्फ दीबाचा और टाइटिल की जरूरत होगी। और यह भी न हो सका तो शहद और घी लगाकर दीमकों[6] को चाटूँगा और समझूँगा कि

जरे गुल मी खुरम
बा मजाए मकुलते गुल मी खुरम।

बहरहाल आप जो कुछ तसफ़िया करें जल्द करें और मुझे मुत्तला फरमायें। सबसे आखिर छपे हुए जुज्व को भेज चुका हूँ। इसमें आपको सिर्फ हुक्म देने की देर है। अंसारी ने मद्दार बनाया और उस पर रंग आये। आपको कोई तकलीफ न हुई।

मैं अब सिर्फ ९ जुज्व की किताब निकालना पसंद करता हूँ बशर्ते कि आप शरीक हों और जल्द किताब को निकाल सकें। कयामत के इन्तजार में बैठने से तो यही

१ फर्मे २ आधे ३ क्रम ४ संशोधन ५ प्रार्थना ६ दीमकें   जरदा बना या अपनी मेहनत का फल खा रहा हूँ।

बेहतर है कि जो कुछ सवाब इस वक्त मिलता है मिल जाये। ज्यादा क्या अर्ज़ करूँ।

नियाज़मंद
धनपतराय

२२

महोबा
१० सितम्बर १९११

भाईसाहब

तसलीम। प्रेम पचीसी के साढ़े चार जुज़ मिले। मशकूर हूँ। सफ़ा ११ पर विक्रमादित्य के तेगे वाला हिस्सा खत्म हो गया है। मगर यह पहली बार इतना ही छपा था। मैंने दुबारा उसमें निहायत ज़रूरी इज़ाफ़ा कर दिया था। वह ज़माना के किसी नंबर में छपा भी था लेकिन इस किताब में वह इज़ाफ़ा किया हुआ हिस्सा नहीं है, जिससे क़िस्सा बिल्कुल बे-सर-पैर-का मालूम होता है। बराहे करम इसी ज़माने के रिसालों में इस टुकड़े को तलाश करवाके इसमें बढ़ा दीजिए और वह टुकड़ा न मिले तो दो-तीन जुमले जो नफ़्से-मतलब[1] को ज़ाहिर करते हों ज़रूर बढ़ा दिये जायें। क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि यह प्रूफ़ है या मुकम्मल फ़ार्म जिसमें अब तसहीह[2] की गुंजाइश नहीं?

मैं एक हफ़्ते के अन्दर आपकी ख़िदमत में रुपये काग़ज़ के लिए रवाना करूँगा। वर्ना क्या यह रक़म और साढ़े चार जुज़ के लिए काफ़ी न हो जायगी। फ़िलहाल मैं पहला हिस्सा ही छापा करूँगा। आप किताबत करवाने का इंतज़ाम फ़रमाइए। उसका तसफ़िया किताब के पूरे हो जाने पर हो जायेगा जैसा आप ख़ुद फ़रमाते हैं। और अगर यह मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो तो जिस वक़्त आप मुझे और साढ़े चार मुकम्मल कर देंगे मैं छपाई का हिसाब भी बेबाक़ कर दूँगा। मगर काग़ज़ के लिए मैं बहुत जल्द रुपया भेजता हूँ। अब जो कुछ तस्वीर होगी उसका इलज़ाम मेरे ऊपर न रहेगा। ग़ालिबन् काग़ज़ के एकजाई इंतज़ाम न होने के बाइस किताब पैंचरंगी हो गयी है। कोई मुज़ायक़ा नहीं। टाइटिल पेज ख़ूबसूरत होना चाहिए। बस। कई जगह लिखा-पढ़ी के बाद मैंने यही तसफ़िया किया है कि ख़ुद ही छपाऊँ और नफ़ा-नुक़सान उठाऊँ। पहला हिस्सा इसका फ़ैसला कर देगा। और सब हालात बदस्तूर हैं।

क़हत[3] पड़ गया है। इमदादी[4] काम खुलने शुरू हो गये हैं। अब जिस क़दर जल्द मुमकिन हो यह काम ख़त्म हो जाये तो अच्छा हो। मुझे बवापसी डाक मुत्तला फ़रमाइए कि विक्रमादित्य का वह आख़िरी टुकड़ा मिला या नहीं ताकि

१ अर्थ का सार २ सही करना ३ अकाल ४ सहायता के

यह हिस्सा मिलाने की फ़िक्र करूं। वैसे बरबस बहुत तूलानी क़िस्सा है। उसके बजाय नमक का दारोग़ा रख दीजिए तो बहुत खूब हो।

आपका
धनपत राय

२३

महोबा
१६ जनवरी १९१४

भाईजान

तसलीम। कुछ अर्सा हुआ आपका ख़त मय रसीद आया था। हालात मालूम हुए। आज की डाक से आपकी ख़िदमत में बीस रुपए और भेजता हूँ। उम्मीद है कि प्रेम पचीसी की किताबत जारी होगी। आपने फ़रमाया था कि छपाई का हिसाब बाद को होगा। चूंकि मैंने यह तसफ़िया किया है कि पहले प्रेम पचीसी के सिर्फ़ नौ जुज़ छपें बाक़ी किताब दूसरे हिस्से में शाया की जाय इसलिये जब बाक़ी साढ़े चार जुज़ की किताबत ख़त्म हो जाय तो मुझे एक नम्बर देखने का मौक़ा दीजिएगा ताकि जो कुछ ग़लतियाँ रह जायें उनकी तरमीम[1] कर दूँ। आप मुझे मुत्तिला फ़रमाइये कि छपाई के अलावा पहले हिस्से को ख़त्म करने के लिये और कितने रुपयों की ज़रूरत होगी। इसमें टाइटिल पेज और दीबाचे का भी ख़याल मद्दे नज़र रखिएगा। रनजीत सिंह के क़िस्से के मुताल्लिक़ मुझे भी यही मुनासिब मालूम होता है कि इतना हिस्सा अब सरे नौ छपवाकर चिपका दिया जाय। हाँ मगर आप बराहे करम उस टुकड़े को दुबारा करवा लीजिए क्योंकि जो हिस्सा अपने बाद को मिलाया है वह ज़माना के किसी नम्बर में पहले छप चुका है। अब मैं उसको इतनी ख़ूबसूरती से शायद न लिख सकूँ।

क़िस्सों के मुताल्लिक़ क्या अर्ज़ करूँ। तब से एक हर्फ़ नहीं लिखा। तबीयत कुछ ऐसी मुर्दा हो गई है कि क़लम तक का बार नहीं उठाया जाता। ताहम जो कुछ हो सकेगा लिखूँगा। एक क़िस्सा शुरू किया है—अभी नहीं अक्तूबर में शुरू किया था—वह जब ख़त्म हो जायगा इरसाले ख़िदमत करूँगा।

ज़माना और आज़ाद बख़ूबी मिले। आज़ाद अच्छा है। महज़ का यही शग़ल है। जब तक चलता है काम करता जाता हूँ। उम्मीद है कि आपका मिज़ाज बहुत अच्छी तरह होगा। यह इन्तज़ाम करने की ज़रूरत नहीं है कि प्रेम पचीसी महज़ आपकी शराफ़त की बदौलत छप रही है और अब आप ही उस अंजाम को पहुँचायें।

---

१ संशोधन

जिस क़दर जल्द मुमकिन हो काम हो जाना ज़रूरी है। ज़्यादा क्या अर्ज़ करूँ।

धनपत राय

२४

गुरौला (बाँदा)
९ फ़रवरी १९१४

भाई साहब

तसलीम। मैंने दो ख़त आपकी ख़िदमत में रवाना किये मगर आपने एक का भी जवाब देना मुनासिब न समझा। ख़ैर इसे मैं अपनी बदक़िस्मती के सिवा और क्या समझूँ। आपने फ़रमाया था कि मैंने तुम्हारी ख़ता मुआफ़ की लेकिन शायद अभी उसका ग़ुबार मौजूद है। वर्ना आप तो इतने सुस्तक़लम न थे। मालूम नहीं मेरी किताब की किताबत हो रही है या नहीं। बराहे करम ज़रा लम्बा लगाइए और अगर पन्ना देने की ज़रूरत हो तो मुत्तला फ़रमाइये ताकि किताब के शाया होने की उम्मीद को दिल से निकाल दूँ। क्योंकि मुझे उसे मन मानस की तरह जो आपके दफ़्तर से अपनी किताब छपवाकर उठा ला इतनी फ़ुरसत कहाँ है। दिन गुज़रते जाते हैं। अगर किताब उस वक़्त निकली जब लोगों को ख़्याल भी न रहा कि प्रेमचन्द कौन है तो उसके निकलने से क्या फ़ायदा। मैंने इधर अपना क़िस्सा पूरा कर लिया है लेकिन आपकी सर्दमेहरी[1] के बाइस उसे भेजने की जुर्रत नहीं होती। अब आपसे यह इल्तिजा[2] है कि किताबत का काम शुरू कर दीजिये और मुझे मुत्तला कीजिये कि पहले हिस्से में कौन-कौन से क़िस्से हैं और वो कितने सफ़ों पर हैं। मैं पहले हिस्से को दस जुज़ से ज़्यादा नहीं करना चाहता। ज़माना और आज़ाद दोनों बराबर आते हैं और उनके लिए आपका मशकूर हूँ। आपके ख़त का इश्तियाक़[3] और इंतज़ार है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

२५

चिरैया
४ मार्च १९१४

भाईजान

तसलीम। आप अन्देशा न कीजिये क्योंकि मेरा अन्देशा करने की बारी है। मुझे कापियाँ २४ तारीख़ को मिलीं और मैं उन्हें देखकर २५ को रवाना कर दिया। मालूम नहीं पहुँची या नहीं। मुझसे भी यही ग़लती हुई कि रजिस्टरी नहीं

---

१ उदासीनता २ विनती ३ शौक़

करायी। बराये मेहरबानी इत्तला दीजिए। रहा मज़मून। उसे दो एक दिन में ज़रूर भेज दूँगा क्योंकि कहीं-कहीं साफ़ करने की ज़रूरत है। मुझे अभी तक यह इत्मीनान नहीं हुआ कि कौन सा तर्ज़े तहरीर अख़्तियार करूँ। कभी तो बंकिम की नक़ल करता हूँ कभी आज़ाद के पीछे चलता हूँ। आजकल काउण्ट टाल्सटाय के क़िस्से पढ़ चुका हूँ। तब से कुछ उसी रंग की तरफ़ तबीयत माइल है। यह अपनी कमज़ोरी है और क्या। यह क़िस्सा जो मैं रवाना करूँगा इसमें मुझे तहरीर की मुतलक़ कोशिश नहीं की गयी। सीधी-सीधी बातें लिखी हैं। मालूम नहीं आप पसंद करेंगे या नहीं। अब प्रेस निकला या बैठ गया। मैंने आपसे एक शायर का कलाम और बेगम साहिबा भोपाल की नयी तसनीफ़ें माँगी हैं। इन दोनों किताबों को ज़रूर भेजिये। इश्तियाक़ है। किताब ग़ालिबन माह में पूरी होगी। आपने वादा फ़रमाया है।

नियाज़मन्द

धनपत राय

२६

गोरखपुर

१ अप्रैल १९१४

बरादरम

तसलीम। ज़माना में क्या देर है। इस अफ़ीम का ख़रीदारों पर कुछ असर पड़ा?

प्रेम पचीसी की तरह इसे मई महीने में ख़त्म कर दीजिये। ११२ सफ़े छप गये हैं। २४ की किताबत ख़त्म हो चुकी है। अब सिर्फ़ १६ सफ़े या १२ या २ जितना दरकार हो और ले सकते हैं। इस तरह पहला हिस्सा तो तैयार हो ही जाये दूसरे हिस्से का मसाला मौजूद है। टाइटिल छपाई सिलाई वगैरह का तख़मीना होगा। तहरीर[2] फ़रमाइए। दीबाचा आपने लिखने का वादा फ़रमाया है। तूल न हो मुख़्तसर ही सही मेरी ख़ातिर चन्द सतरें लिखने की मुहलत निकाल लीजियेगा। और क्या अर्ज़ करूँ। ग़ालिबन किताब मई में ज़रूर तैयार हो जाय। मैं आपको दस रुपये और नज़्र[3] कर सकता हूँ। बाक़ी हिसाब ख़ात्मे पर। अभी समझने में भी फ़िक्र भी है। बहरहाल जिस क़दर जल्द हो सके मेरे पास १४४ से १६० सफ़ों तक का पहला हिस्सा ख़त्म करके इरसाल फ़रमायें। अब बहुत देर हो गयी।

नियाज़मन्द

धनपत राय

---

१ रचना २ लिखिए ३ भेंट

२७

महोबा
९ मई १९१४

भाईजान

तसलीम। लीजिए राना जंगबहादुर हाज़िर है। मैंने साफ़ नहीं किया। कई दिन और लग जाते।

'हैंडी' का बक़िया जल्द तर्जुमा। नागरी प्रचारिणी पत्रिका में यह सिलसिला अभी ख़त्म नहीं हुआ। मगर अब हरेक नम्बर में दो तीन सफ़्हों से ज़्यादा नहीं निकलते। पूरा निकल जाये तो ज़माना के पाँच छः सफ़ों का मसाला हो जाये। मैंने तर्जुमा नहीं किया है सिर्फ़ नक़ल ले लिया है।

सरे पुरगुरूर नाम का एक क़िस्सा लिखा हुआ है। सिर्फ़ कुछ तरमीम बाक़ी है। उसे साफ़ करना पड़ेगा। दो तीन दिन में उसे भी हाज़िर करूँगा।

भरत पर एक हिन्दी मज़मून का तर्जुमा किया था। वह पत्र नाज़िर में पहले ही भेज दिया था हालाँकि वह ज़माना में ज़्यादा मौज़ूँ होता। भरत के कैरेक्टर पर बहुत अच्छा पुरमानी और दर्दनाक रिव्यू किया गया है। आपकी ख़मोशी ने मुझे उधर रुजू होने[1] पर मजबूर किया था।

बाक़ी सब ख़ैरियत है। प्रेम पचीसी का इश्तहार ज़रूर दिलवा दीजिएगा।

आपका
धनपत राय

२८

महोबा
२२ मई १९१४

भाई साहब

तसलीम। ख़त मिला। आजकल गर्मी के बाइस बैठना मुश्किल है लेकिन काम कर रहा हूँ। सरे पुरगुरूर जाता है। एक और क़िस्सा भी भेजता हूँ। यह कुछ अर्सा हुआ बंगला से तर्जुमा होकर मर्यादा में निकला था। क़िस्सा निहायत दिलचस्प है वर्ना मैं तर्जुमा क्यों करता। यह ज़माने के लिए लिखा था। आप ज़रा इसे सरसरी तौर पर देख लीजिएगा। जी चाहे तो रख लीजिए वर्ना जहाँ का तहाँ भेज दूँगा।

मुझे यह सुनकर ख़ुशी हुई कि अब आपकी तरद्दुदात का हुजूम कम हुआ। अब आप ज़्यादा मजमूअ[2] हो सकेंगे।

---

१ ध्यान देने २ एकाग्र, निश्चिन्त

मेरे आने की बात यों है। मैं तो आज ही रवाना हो जाता मगर २७ मई को फ़ैज़ाबाद से एक लाला साहब छोटक की शादी के मुताल्लिक़ कुछ तज़किरा[1] करने के लिए आयेंगे। फिर मुझे धर्मपत्नी जी के साथ ससुराल जाना है। ग़ालिबन् ४ या ५ जून को आऊँगा। अगर यह झमेले न होते तो बराहे रास्त कानपुर आता। टट्टी और पंखे तो ख़ैरियत से होंगे। अब रही ज़माना का क़लम-दान सँभालने की बात। उर्दू की हवा आजकल बिगड़ी हुई है। अख़बारनवीसी बहुत मुश्किल हो गयी है। जितने मौजूदा रिसाले हैं उनमें किसी को फ़रोग़[2] नहीं है। सब कुत्ते की ज़िन्दगी जीते हैं। इन हालात में क्या हौसला हो। इधर १५ साल की मुलाज़मत। कुछ दिन और ज़िन्दा रहूँ तो Invalid पेन्शन का हक़दार हो जाऊँ। मेरे लिए यही लाइन सबसे अच्छी है। और मुझे यहीं पड़ा रहने दीजिए। यहाँ आफ़ियत[3] है और मैं गोशानशीनी[4] में ज़्यादा ख़ुश[5] रहूँगा। इसी हालत में कुछ तसनीफ़ का काम भी कर सकता हूँ। अख़बार या रिसाला लेकर मैं तसनीफ़ का काम कुछ न कर सकूँगा। अभी रोज़ घंटा भर लिटरेरी काम करना अच्छा मालूम होता है। लेकिन दिन भर इसी शग़ल में कैसे रहूँगा। काश मैं किसी तरह कानपुर तब्दील होकर आ सकता। तबादले की दरख़्वास्त तो दी है मगर मालूम नहीं कहाँ फेंका जाऊँ।

अगर आपको किसी अंग्रेज़ी रिसाले से किसी मज़मून का ख़ुलासा या तर्जुमा कराना हो और जिसकी छपाई के लिए ज़रूरत हो तो फ़ौरन भेज दीजिए।

वस्सलाम

धनपत राय

२९

महोबा
३ जून १९१४

भाईजान

तो अब अर्ज़ का इरादा पेश करता हूँ। मैंने लिखा था कि रुख़सत की दरख़्वास्त दे चुका हूँ। ग़ालिबन् पंद्रह तक मैं यहाँ से रुख़सत हो जाऊँगा। सेहत की हालत मुझे मजबूर कर रही है। आप मुझे देखें तो ग़ालिबन् पहचान न सकेंगे। हाज़मे में फ़ितूर[6] आ गया है। ज़ोफ़[7] दिन-ब-दिन बढ़ता जाता है। इसलिए मैंने मुसम्मम[8] इरादा कर लिया है कि कुछ दिनों तक लिटरेरी काम मुतलक़ न करूँ। हालाँकि तबीयत का तक़ाज़ा मजबूर करेगा लेकिन हत्तुल-इमकान[9] उसे रोकूँगा। इसलिए मैं निहायत मजबूरी की हालत में ज़माना की इल्मी मदद न कर सकूँगा।

१ चर्चा २ उन्नति ३ शान्ति ४ एकान्तवास ५ संतुष्ट ६ खराबी ७ कमजोरी ८ पक्का ९ यथा-शक्ति

कम से कम दो तीन माह तक—अब आप मेरे पास अखबारात न भिजवाया करें। सिर्फ आजाद हस्बे दस्तूर भिजवाते रहें। आइन्दा कुछ दिनों तक मैं सिर्फ एक कहानी माहवार लिखने की कोशिश करूँगा। बस इससे ज्यादा कुछ नहीं। दो एक और अखबारों से ताल्लुक पैदा किया था। लेकिन भी से बहाल है। क्यों मरें।

फाटक की शादी बिसमिल हो गयी। बहुत अच्छा हुआ। अभी दो तीन साल तक यह काम कब्ल-अज-वक्त¹ था। आइन्दा देखा जायगा²। ज्यादा क्या लिखूँ। आपके यहाँ आने का इरादा है। देखूँ कब तक पूरा होता है। गरीब बहुत कमकम मेहमान नहीं होता। यह तमाम माने³ है।

मई के महीने में मैंने आजाद के लिए १० कालम लिखे। और गालिबन् जून के पहले नंबर में भी चार कालम से कम न होंगे। जून २१ कालम होते हैं। अगर आप हिमायत दोस्ती के तौर पर मुझे एक वाच इनायत कर सकें तो आजाद की यादगार रहेगी। मगर वह वाच नहीं जिसके साथ तीन रुपये में सोलह चीजें मिलती हैं। मजबूत घड़ी हो या ज्यादा नहीं तो तीन चार साल तक तो साथ दे। उम्मीद कि आप अच्छी तरह होंगे।

प्रेम पचीसी की तसहीह जारी है। अनकरीब-उल-इख्तताम⁴ है। तब तक हमदर्द में भी दोनों किस्से छपे जाते हैं।

आपका
धनपत राय

३०

महोबा
जून १९१४

भाईजान

तसलीम। इश्तहार के भी आने से बड़ा हर्ज हुआ। खैर यह दूसरा इश्तहार लिख लिया है। इस काम में मैं अनाड़ी हूँ और पहला इश्तहार कई हफ्तों में तैयार हुआ था। इसे आप अगर एक हफ्ते में छाप सकें तो आजाद के साइज पर पाँच हजार छाप दें। सिर्फ एक तरफ। अगर अब बस्ती चला जाऊँगा तो वहाँ भेजना पड़ेगा। मैं अंग्रेजी कटिंग का तर्जुमा न कर सका न कुछ लिखने ही की तरफ तबीयत रुजू हुई। क्या करूँ। काफी जमाना बहुत बिगड़ गया। जून खत्म हुआ अभी अप्रैल नंबर लापता है। इश्तहार की कीमत मय कागज वगैरह ज्यादह मुझसे बजरिये वी० पी० वसूल कर लीजिए या अगर किताब की बिक्री की कुछ अलामत हो तो वह उसके मद्धे लीजिए। छप जाने पर मैं अर्ज करूँगा कि फिलहाल मुझे कितनी परतों की जरूरत है।

---

१ वक्त के पहले २ देखा जायगा ३ बाधक ४ खत्म होने के करीब

बराहे करम मुत्तला कीजिए कि किसी और अखबार ने रिव्यू किया या नहीं। अफसाने की कमला पर क्या रिव्यू करें। बहुत मामूली है।

आपका
धनपत राय

३१

बस्ती
१९ जुलाई १९१४

भाईजान

तसलीम। प्रूफ के लिए शुक्रिया। मेरे खयाल में दोनों ही नमूने रखे जायें सादा और मुरस्सा[1]। मिक्स मिक्स हो जाये तो अच्छा। रियायतें मैंने काट दीं बस तुलबा[2] और मुदर्रिसीन[3] की रियायत रखी है। मगर आप मजीद[4] रियायत करना चाहें तो शौक़ से कर दीजिए। मगर जल्द छप जाये। अभी तक इलाहाबाद वाले एजेण्ट ने कोई खबर नहीं दी। खैर। इश्तहार छप जाने पर शायद कुछ बिक्री हो सके। अगर ज़माना में दो बार तक़सीम[5] कीजिए तो और ज़्यादा छपवा लीजिए। अखबार में भी तक़सीम करा दूँगा। और चंद रिसालों के नाम बतलाइए। माडर्न रिव्यू और सरस्वती ने रिव्यू किया नहीं क्या? मैंने हमदर्द को एक क़िस्सा दिया था। कई माह हुए, उसने छापा नहीं। अब मैं दो तीन दिन में उसे ज़माना के पास भेजूँगा। अंग्रेज़ी कटिंग का तर्जुमा आप चाहते हैं या उस पर बेस करके कुछ लिखूँ। आज़ाद नहीं आया। एकाध अखबार अंग्रेज़ी का और भिजवा दिया कीजिए तो ज़माना के लिए कभी कभी मुख्तसर नोट लिखा करूँ। ज़माना कब तक आयेगा।

बारिश हो रही है। मकान की सख्त तकलीफ है। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे।

आपका
धनपत राय

३२

बस्ती
अनुमानतः ३ सितंबर १९१४

भाईजान

आपने यह दरयाफ्त नहीं किया कि अवध कमर्शियल बैंक ने सिर्फ दरयाफ्त किया

१ सुसज्जित २ विद्यार्थी ३ मास्टर ४ अतिरिक्त ५ वितरित

था या यही ग्रान्ड बंगाल के पास चेक भेजा था। बहरहाल मुहम्मद अली साहब का खत आया है। वो लिखते हैं कि इसमें कमर्शियल बैंक की गलती है। उन्हें दुबारा चेक भेजना चाहिए क्योंकि ताकीद सख्त कर दी गयी है और कोई वजह नहीं है कि बैंकवाले रुपया न दें। मैंने अब कमर्शियल बैंक को यह लिख दिया है और ताकीद कर दी है कि वो दुबारा चेक को भेजें। अगर अबकी भी वह वापस आ जाये तो चेक को मेरे पास भेज दें मैं रुपया भेज दूँगा। आप ख़्वाहमख़्वाह परीशान होते हैं। चेक भेजने का खर्चा मैं दे दूँगा। चलिए छुट्टी हुई।

चंद मज़ामीन और नोट भेजता हूँ। एक सख्त भूल से मेरे पास दस दिन तक डाक बिलकुल न पहुँच सकी। यह सब मज़ामीन आज ही लिखे हैं। आपने मेरा हिसाब माँगा है। अगस्त अभी चल रहा है

जून में १)
२६ कालम

जुलाई में ५)
१४ कालम

क़िस्सों के मुआवज़े के मद में मेरे पास के रक़्म[1] हैं

बेकस लड़की
८)

सफ़ेद खून
८)

शिकारी राजकुमार
५)

मेरे ख़याल में मैंने कोई ज़ायद मुतालबा नहीं किया है। शिकारी राजकुमार मुख्तसर क़िस्सा है इसलिए उसका मुआवज़ा कम रखा है।

लीडर मेरे पास एक भी नहीं आया। मालूम नहीं क्या हुआ। मैंने 'बंगाली' जारी कराया है। शायद दो तीन दिन बाद जारी हो जाये। अब यहीं मुझे माडर्न रिव्यू इण्डियन रिव्यू वग़ैरह मिल जाया करेंगे क्योंकि पण्डित मनन द्विवेदी गुम-रिमार्गंज के तहसीलदार हैं। बाक़ी क्या अर्ज़ करूँ।

आपका
धनपत रा

३३

बा
४ सितम्बर १९१४

माईजान

कल एक नोट लिख चुका हूँ। आज मुफ़स्सल ख़त लिखना चाहता हूँ। मुझे यह सुनने का बहुत इश्तियाक़ है कि आज़ाद की इशाअत में भी इस जंग का असर हुआ। गोरखपुर में मैंने प्रताप को स्टेशन पर बिकते देखा। क्या आज़ाद

१ निम्नलिखित रकमें

के लिए कोई ऐसी सूरत नहीं निकल सकती है। ज़माना के दोनों नंबर मिले। देखा। कुछ हल्के हैं।

प्रेम पचीसी का इश्तहार देखकर खुशी हुई। मगर इस वक्त उसका निकलना ग़ालिबन् बेमौक़ा है। जंग की धुन में शायद ही किसी को क़िस्से-कहानी का शौक़ हो। क्या कुछ इश्तहारात बाँटीं। टाइटिल पेज वग़ैरह तो शायद अभी तैयार न हुआ हो। ज़रूर फ़िक्र कीजिए। इश्तहार छपते-छपते बहुत दिन हो गये। किताब छप जाने पर मुझे उसका पूरा बिल मिलना चाहिए ताकि मैं हिसाब लगा सकूँ कि हमारे और आपके दर्मियान क्या मुआमला है। रह गया इशाअत के खर्च का सवाल। मैं इस मुआमले में हर तरह आपकी मर्ज़ी पर शाकिर हूँ। आप जैसे मुनासिब समझें करें। पहले तो अख़बारों के पास और अहले क़ौम की ख़िदमत में रिव्यू और राय के लिए भेजना ज़रूरी होगा। यह भी एक काम है। सो ख़त लिखने पड़ेंगे। सौ चिट्ठियाँ दरकार होंगी। ख़त का मज़मून आप बना चुके थे। उसे क्यों न छपवा लीजिए। और किताब में एक-एक ख़त रख दीजिए। क्या पैसे पैसेवाले कार्डों की ज़रूरत होगी या सादा कार्ड काफ़ी होंगे। मेरे ख़याल में छपे हुए कार्ड बेहतर होंगे। अख़बारों के लिए सादा कार्ड अहले क़ौम के लिए पैड कार्ड। क्यों? जब इन हज़रात के रिव्यू और रायें कुछ आ जायें तब इश्तहार की फ़िक्र होगी। आज़ाद और ज़माना तो ठीक हैं ही और पर्चे जिन्हें आप मुनासिब समझें उन्हें इश्तहार देने की ज़रूरत होगी। या उन रायों का इक़्तबास[1] एक वरक़ की सूरत में छापकर अख़बारों की मार्फ़त शाया करा दिया जाये। बहरहाल यह आपका अपना काम है।

आज स्टेट्समैन के लिए लिख दिया है और अब मैं डाक का बेहतर इंतज़ाम रखूँगा ताकि आज़ाद के लिए बाक़ायदा नोटिस लिख सकूँ। हाँ मैंने गुज़श्ता[2] बृहस्पत को एक क़िस्सा मय नोटिस के भेजा था। मालूम नहीं पहुँचा या नहीं। लिखिएगा। सौदाए ख़ाम आपने कहाँ से छापा। क्या हमदर्द से नक़ल किया या मैंने आपके पास बराहे रास्त भेजा था। लीडर का इंतज़ाम जो आपने किया है एक मामूली पत्र नाज़रीन के लिए तो अच्छा है मगर जिसे अख़बारनवीसी भी करनी पड़े उसके लिए ज़्यादा कारआमद नहीं है। इसलिए स्टेट्समैन के जारी हो जाने पर उसे बंद करना पड़ेगा। आप मेरे पास पंद्रह रुपये भेज दें तो ऐन नवाज़िश हो। इसमें मैं स्टेट्समैन मँगा लूँगा। और माह सितंबर की तनख़्वाह भी महसूब[3] हो जायगी। नये-नये इंतज़ाम की वजह से मैं यहाँ तंगदस्त हो गया। चारपाइयाँ बनवानी पड़ीं अभी बालबर नहीं लिया मगर उसके लिए रुपये की दिन-रात फ़िक्र है। गुड़

१ उद्धरण २ पिछले ३ हिसाब में वसूल होना

सैनाटोजन का इस्तेमाल कर रहा हूँ जो शायद यह शीशी ख़त्म हो जाने पर मुझ किस से मिल सकेगी। बस्ती में अभी किसी से शनासाई नहीं। बस डिप्टी इन्स्पेक्टर को जानता हूँ। और डुमरियागंज में पंडित मन्नन द्विवेदी तहसीलदार से वाक़फ़ियत हो गयी है, प्रताप की बदौलत। अभी तक यह नहीं तय कर सका कि डुमरियागंज में क़याम करूँ या बस्ती में। चाची बस्ती के लिए वोट देती हैं ताकि डॉक्टर की आमद-रफ़्त में दिक़्क़त न हो। हर बार मुझे एक लंबा सफ़री सफ़र करना पड़ता है और कमबख़्त दौरा बजाय घटने के मुफ़सिदानेह होता है।

और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है। ज़्यादा क्या अर्ज़ करूँ। प्रताप के इसरार से मजबूर होकर एक मुख़्तसर-सा क़िस्सा हिन्दी में उसके विजयदशमी नंबर के लिए लिखा है। हिन्दी लिखनी तो आती नहीं मगर कुछ क़लम तोड़-मोड़ किया है। बच्चे कैसे हैं। जवाब का मुन्तज़िर,

आपका
धनपत राय

३४

बस्ती
१ नवंबर १९१४

भाईजान

आपका ५ नवम्बर का लिफ़ाफ़ा आज १ को मिला। ऐसी हालत में क्या अख़बारी काम करूँ क्या न करूँ। यहाँ शायद बीस मील के मवाज़े[1] में सिर्फ़ एक डाकख़ाना है। पंडित विश्वनाथ जी अख़बार निकालने वाले हैं। अच्छी ख़बर है। मैं अपनी मौजूदा हालत के एतबार से रोज़ाना अख़बार के लायक़ किसी तरह नहीं हूँ। फिर उर्दू और हिन्दी दोनों का बार मुझसे क्योंकर चलेगा। अगर अख़बारी काम करना होता तो आज़ाद क्या बुरा था। उसी को निकालता रहता। मेरे लिये तो अब यही मुनासिब है कि किसी प्राइवेट स्कूल की मास्टरी कर लूँ जहाँ से ५) माहवार मिले। इसी के साथ-साथ 'ज़माना' और 'आज़ाद' की ख़िदमत करूँ। इस तरह मुझे साठ सत्तर रुपया माहवार का औसत पड़ता जाये। इससे ज़्यादा की ख़्वाहिश नहीं और न इससे ज़्यादा पा सकता हूँ। ख़्वाहमख़्वाह तक़दीर से क्यों लड़ूँ। कुछ किताबें लिखूँगा कुछ अपनी किताबें छपवाऊँगा। पाँच छः सौ मेरी कमाई है, उसे इन्हीं कामों में सर्फ़ करूँगा और जिस आख़िर जब लिटररी शोहरत हासिल कर सकूँगा तो कोई

---

१ आस-पास २ [illegible]

माहवार रिसाला निकाल कर गुज़र करूँगा। और अगर इसके पहले ही हयात[१] ने जवाब दे दिया तो फिर राम नाम सत है।

आप मेरी किताब जल्दी से छपवा दीजिये ताकि उसकी कामयाबी देखकर दूसरे हिस्से में हाथ लगे और कुछ मज़ा भी हो। क्या कहूँ आप ने तो मुझे समझाने में कोई कसर नहीं रक्खी। खूब समझाया। मगर मैं ही क़िस्मत का अन्धा हूँ कि उछल कर परवाज़[२] नहीं कर सकता बल्कि नीचे गिरने के लिये डरता हूँ। वर्ना शिवव्रत लाल वर्मन की तरह चैन से ज़िन्दगी बसर करता। हक़ीक़त यह है कि सेहत बड़ी चीज़ है, जिसने उसकी क़द्र न की उसके लिये बजुज़ रोने और सर धुनने के और कोई इलाज नहीं है। और ज़्यादा क्या लिखूँ।

आज से आप का क़िस्सा साफ़ करता हूँ। देखूँ कितने दिन लगते हैं।

सारी दुनिया को सैनाटोजन फ़ायदा करती है मुझे इससे भी कुछ न हुआ। आपने चार पाँच मील हवा खाने की सलाह दी है। उसकी तामील कर रहा हूँ। पाँच दिन से लगातार तीन-चार मील घूमता हूँ। उम्मीद कि तबीयत ठिकाने होगी।

कोई प्राइवेट स्कूल की मुदर्रिसी का चर्चा हो तो मेरा ख़याल रखियेगा क्योंकि मैं अब इससे बेज़ार हो गया हूँ।

आपका,
धनपतराय

३५

स्थान-तिथि नहीं।
अनुमानतः बस्ती, आरंभ १९१५

भाईजान

कल बस्ती जा रहा हूँ। देखूँ डाइरेक्टर साहब कब तक मास्टरी पर वापस भेजते हैं। बहरहाल इस दौरा-दौरी से अब तंग आ गया हूँ और मास्टरी को इस ज़िन्दगी पर तरजीह देता[३] हूँ। सिर्फ़ तनख़्वाह की कमी की शिकायत अलबत्ता है। अगर मुझे पचास रुपये देगा तो बख़ुशी चला जाऊँगा।

तम्हीद[४] ख़ूब। इसके लिये फ़ारूक़ शाहपुरी ज़्यादा मौज़ूँ आदमी हो सकते थे। इन हज़रत ने तारीफ़ ज़्यादा की है। अगर फ़ारूक़ न लिख सकें तो इसी को रहने दीजिये। मगर मिस्तर[५] ऐसा होना चाहिये कि एक पेपर में ज़्यादा न हो। आप की तरफ़ से मैंने एक मुख़्तसर-सा दीबाचा[६] लिख दिया है। अगर आप को पसन्द आये तो उसे अपनी तरफ़ से दर्ज कर दीजिये। आपकी मेहनत और तरद्दुद रफ़ा हो जायगी।

बस्ती से एक क़िस्सा अनक़रीब भेजूँगा। लिखा हुआ तैयार है, सिर्फ़ साफ़

---

१ ज़िन्दगी २ उड़ना ३ बेहतर समझता ४ प्राक्कथन ५ सतरों का हिसाब ६ भूमिका

करना बाक़ी है। अब मिज़ाज की क्या कैफ़ियत है। घर में सेहत हो गयी या नहीं। बच्चे कैसे हैं। मैं इस वक़्त यहाँ से तनहा जाता हूँ। दिसम्बर में ग़ालिबन फिर आऊँगा। 'प्रेम पचीसी' अब तक तैयार होगी।

ज़्यादा वस्सलाम

धनपतराय

३६

बस्ती

९ मार्च १९१५

भाईजान

आज रुखसत मंजूर होने के लिए कलक्टर साहब की सिफ़ारिश के साथ डाइरेक्टर के पास चली गयी। कल से मैं आज़ाद हो गया मगर असबाब वग़ैरह यहाँ पड़ा हुआ है। उसे लेकर मजबूरन बनारस जाना पड़ता है। बर्तन वग़ैरह गुड्स से भेजूँ तो टूटने-फूटने का डर रहता है। ग़ालिबन् दो या तीन दिन बनारस में लगेंगे। इसके बाद कानपुर आ जाऊँगा। मगर इरादा मुस्तक़िल तौर पर बनारस में रहने का है। तावक़्ते कि ज़नाना का इंतज़ाम ठीक नहीं हो जाता कानपुर रहूँगा।

दो मज़ामीन इरसाले ख़िदमत हैं। बाक़ी मज़ामीन जो मैं लाया था वो बेकार हैं। आपके दफ़्तर में अगर कुछ मज़ामीन आये हों तो वापसी डाक रवाना फ़रमा दीजिए ताकि देख जाऊँ। मेरा इरादा है कि 'वर्सन फ़िलासफ़ी का मुहाफ़िज़ाना रुझान' पर एक मज़मून लिखूँ। इसलिए नवम्बर और दिसम्बर के इण्डियन रिव्यू भी भेज दीजिए। ये सब इसलिए मँगवाता हूँ कि मुमकिन है मुझे बनारस में कुछ फ़ुर्सत मिल जाये। इस फ़ुर्सत के वक़्त में कुछ न कुछ काम कर सकूँगा। जनवरी की किताबत ग़ालिबन् शुरू हो गयी होगी। 'फ़लसफ़ाए वजदान' पर रिव्यू भी लिख रहा हूँ। अगर मज़मून आये हों और मेरी ज़रूरत ज़्यादा हो तो इण्डियन रिव्यू न भेजिएगा। सिर्फ़ ख़त डाल दीजिएगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है। कल तीन बजे की गाड़ी से बनारस जाऊँगा।

आपका

धनपत राय

पता

धनपत राय

मार्फ़त बाबू द्वारका प्रसाद

ब्रांच पोस्टमास्टर, डाकख़ाना—पांडेपुर, बनारस

---

१ [illegible]

३७

पाँड़ेपुर, बनारस
२ मार्च १९१५

भाई साहब

तसलीम। मैं कल यहाँ पहुँच गया और हस्बे दस्तूर वैसे का वैसा हूँ। ग़ालिबन् आपने मार्च का पर्चा कातिब के पास भेज दिया होगा। अगर आप मुझसे नोट लिखाना चाहें तो कामनवील के चारों पर्चे और अमृतबाज़ार पत्रिका के आख़िरी दो पर्चे रवाना फ़रमाइएगा आठ दस सफ़े लिख दूँगा। और अगर बिना नोट के रखना चाहें तो कोई ज़रूरत नहीं।

फ़रवरी के साथ जनवरी का एक पर्चा भी भिजवा दीजिएगा। मैं जनवरी का कोई पर्चा साथ नहीं लाया।

घर में अब कैसी तबीयत है?

आपका,
धनपत राय

३८

बनारस
१० अप्रैल १९१५

भाईजान

तसलीम। आपका कार्ड मिला। क्या ज़माना की मौजूदा हालत इस क़ाबिल है कि कोई शख़्स उसे लेकर १०) आपके नज़र करने के बाद १२) दीगर मसारिफ़ मसलन् तनख़्वाह मैनेजर, किराया मकान, पुरूफ़ एडीटर और तनख़्वाह चपरासी वग़ैरह के निकाल सके। माहवार मसारिफ़ किताबत और छपाई, काग़ज़ टिकट वग़ैरह क़रीबन् १५) होंगे। हम लोगों ने एक बार जो तख़मीने किये थे उसके हिसाब से मुझे और आपको बमुश्किल तमाम शायद १) फ़ी कस पड़ते थे। यह तो तयशुदा अम्र है कि कन्ट्रैक्टर को ज़माना के माली बार[1] से कोई ताल्लुक़ न होगा। लेकिन Debts में क्या तदबीरों की वह क़ीमतें नहीं महसूब होंगी जो उनसे वसूल की जा चुकी हैं। आप बराय मेहरबानी तहरीर फ़रमाइये कि कन्ट्रैक्ट किस तारीख़ से शुरू होगा उस तारीख़ से आप अपने कन्ट्रैक्टर पर कौन-कौन सी ज़िम्मेदारियाँ आयद करेंगे। मैंने अभी नौकरी पर जाने का कोई इरादा नहीं किया। दो माह की रुख़सत और ले ली है। अगर कन्ट्रैक्ट की

---

१ आर्थिक बोझ

सूरत निकल आये तो मैं फ़ौरन साल भर की मुद्दत बेतनख़्वाह की दरख़्वास्त कर साल भर तक़दीर आज़माई करना चाहता हूँ। जिस वक़्त मैं यहाँ पर कन्ट्रैक्ट का ख़याल न आपको आया और न मुझे। ग़ालिबन इस मुआमले बाहमी[1] तसफ़िया होना मुमकिन है। बस आपके मुफ़स्सल जवाब का इन्तज़ार।

प्रेम पचीसी के मुताल्लिक़ अभी फ़िक्र मुल्तवी। अगर यह मुआमला ठीक गया तो मैं ख़ुद ही छपवा लूँगा।

आपका
धनपत रा

३६

पाण्डेपुर, बनार
अनुमानतः जून १६१

भाईजान,

तसलीम। मुझे यहाँ आये क़रीबन दो हफ़्ते हुए।...क्या मेरी तरफ़ कोई ख़त[2] आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ था अभी अलमी तरद्दुदात की तरफ़ से निजा नहीं हुई। वालिद साहब की तबीयत तो अब ग़ालिबन रू-ब-सेहत-माइल[3] होगी ज़माना फ़रवरी ...अब तक तैयार नहीं हुआ। आज़ाद भी नहीं आया। मार्च की किताबत हो रही है या नहीं।

मालूम नहीं मेरी किताब का रिव्यू और अख़बारों ने किया या नहीं। मैंने कई अख़बारों से ख़त-किताबत की है और इश्तहार देने के लिए रिव्यू का इन्तज़ा कर रहा हूँ। बराहे करम बाबा श्यामसुन्दर से कह दीजिएगा कि अगर किसी अख़बार ने रिव्यू किया हो तो उसे काटकर दे दें। जिन हज़रात के पास किताब तोहफ़तन् तुम्हारे राय के लिए भेजी गयी थी उन हज़रात में से किसी ने जवाब दिया या नहीं। अगर कुछ ख़ुतूत आये हों तो वह मेरे पास रवाना फ़रमाइएगा। इश्तहार का काम दें। आपके यहाँ प्रेम पचीसी की किताबत कैसी हो रही है। यही रफ़्तार क़ायम है या बिलकुल सुस्त पड़ गयी। फ़रवरी का पर्चा अगर निकल गया तो रियासती एलान का कुछ असर हुआ या नहीं।

मेरी तबीयत बदस्तूर है। आजकल कोई दवा इस्तेमाल नहीं करता हूँ। सैर और एहतियात पर ही दारोमदार रखा है। लिटररी काम बिलकुल बंद है।

आप मेरे यहाँ आने जाने से कुछ तरद्दुद में तो नहीं पड़े। बात यह है कि

---

१ आपसी २ ख़त ३ सुधार पर

मैंने ज़माना की मौजूदा हालत को देखकर उस पर ज़्यादा बार डालना मुनासिब नहीं समझा। मेरा ख़याल था कि उसकी माली हालत में कुछ इस्तहकाम[1] आया होगा मगर जनवरी नम्बर ने मुझे वही और ज़्यादा नहीं रहने दिया। मेरे चले जाने से अगर ज़्यादा नहीं तो तीन सौ रुपये साल की बचत तो हो गयी। इसी तरह तसावीर की मद में आप चार-पाँच सौ रुपया बचा लेंगे। दो कलमों से भी पूरा काम निकल जायगा तीन की कोई ज़रूरत नहीं। अगर कोई हिस्सेदार है तो आप प्रेस में अपना शरीक बना लें। उसे कुछ कमीशन देने का वादा कीजिए तो इस तरह प्रेस की ज़िम्मेदारी से आप अलग हो जायेंगे। इस तरह से आप साल भर में कम से कम एक हज़ार रुपया बचा सकते हैं। हाँ आपको थोड़ी सी मेहनत करनी पड़ेगी।

जवाब से जल्द मसरूर फ़रमाइएगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

४०

पाँडेपुर, बनारस
१७ जून १९१५

भाई साहब

तसलीम। इश्तहार मालूम नहीं अभी तक छपा या नहीं। मैं उसका इन्तज़ार कर रहा हूँ। कई दिन हुए मैंने एक लिफ़ाफ़े में डाक्टर इक़बाल के ख़त की नक़ल भेजी थी ताकि वह भी उसमें शामिल कर दी जाये। मालूम नहीं आपने उसे शामिल करने की हिदायत कर दी या नहीं। बराहे करम उसे जल्द छपवाइए ताकि जून में इधर-उधर भेज दूँ। और अगर अभी तक काग़ज़ ज्यों का त्यों पड़ा हुआ हो तो उसे वापस ही कर दीजिए ताकि किसी पंजाबी प्रेस में छपवाकर मँगवा लूँ। नये इश्तहारात क्या हुए, लिखिएगा।

और सब ख़ैरियत है। जवाब बवापसी रवाना फ़रमाइए। मिस्टर राम शरण निगम की ख़िदमत में सलाम।

नियाज़मन्द
धनपत राय

४१

पांडेपुर
२५ जून १९१५

भाई साहब

तसलीम। कल आपका लिफ़ाफ़ा मिला। डा० सतीशचन्द्र के मर्गेनागहानी[1] पर जिस क़दर मातम हो थोड़ा है। बड़े आदमी जल्द मरते हैं, इस ख़याल की तसदीक़ हो गयी।

इश्तहार कई दिन हुए रवाना-ए-ख़िदमत कर चुका हूँ। डा० एकबाल के ख़त का इक़्तबास भी जो आपके पास मौजूद है उसमें शामिल करवा दीजिएगा।

मैंने इमसाल[2] इण्टरमीडिएट का इरादा किया है। मुझे ज़िन्दगी के तजुर्बे से मालूम होता है कि किसी लिटररी लाइन में बग़ैर ग्रेजुएट हुए कोई उम्मीद नहीं। इतने दिन क़िस्सा कहानी मज़ामीन लिखता रहा लेकिन आज बेरोज़गार हो जाऊँ तो कोई ऐसा रिसाला या अख़बार नहीं है जो क़लील[3] मुआवज़े पर भी मेरा निबाह कर सके। दस ग्यारह साल तक मैंने रियाज़त[4] की मगर कभी कहीं न पहुँचा। दो चार आदमियों के वाहवाह से जी ख़ुश होता है। मगर महज़ इतना ही काफ़ी नहीं है। अब इसी तरह मौक़े और फ़ुरसत के लिहाज़ से कुछ थोड़ा बहुत लिटररी काम करता रहूँगा। ज़्यादा सरगर्मी नहीं बाक़ी है। तीन साल की मामूली मेहनत में ग्रेजुएट हो सकता हूँ। बुढ़ापे में आराम मिलने का सहारा हो जायेगा हालाँकि मेरे लिए बुढ़ापे का ज़िक्र ही फ़िज़ूल है। मैं किस बूढ़े से कम हूँ।

मिस्टर रामसरन को मेरी तरफ़ से मुबारकबाद। सच्ची ख़ुशी हुई। निसार ए-हिन्द अगर मुमकिन हो तो भिजवा दीजिए।

आपका नियाज़मन्द
धनपत राय

४२

बनारस
६ जुलाई १९१५

भाई साहब

तसलीम। कल बस्ती जा रहा हूँ। इश्तहार दूसरी बार भेज चुका। एक हफ़्ते से ज़्यादा गुज़रा। मेरे ख़याल में क़रीब दो हफ़्ते के हुए। मगर अभी तक

१ अचानक मृत्यु २ इस साल ३ कम ४ मेहनत।

प्रूफ तक का पता नहीं। अगर आपके यहाँ न छप सके तो बराहे करम बस्ती के पते से मुत्तिला फ़रमायें ताकि कहीं और छपवा लूँ। इश्तहार के न छपने से इस एक महीने में मैं बुकसेलरों से उसकी किताबत कुछ न कर सका वर्ना मुमकिन था कि कुछ जिल्दें निकल जातीं।

उम्मीद है कि आप बहुत अच्छी तरह होंगे।

खैर अन्देश
धनपत राय

बस्ती
२६ जुलाई १९१५

४२

भाई साहब

तसलीम। नवाज़िशनामे[1] का शुक्रिया। परमात्मा आपके इरादों में बरकत दे। बस आइडियल ऊँचा रहे। तब और अब में कोई उसूली फ़र्क न होने पाये और मुझे यक़ीन है कि आप उसमें कामयाब होंगे। अगर इश्तहार छप गया है और आप उसे ज़माना के साथ तक़सीम करना चाहते हों तो दो माह के लिए दो हज़ार या जितनी ज़रूरत हो अपने पास रख लें बाक़ी मेरे पास भेज दें। हाँ अगर आपका मुहर्रिर १ परत उन्नाव के एजेन्ट के पास और ५० परत राय बरेली के एजेन्ट के पास भेज दे तो बहुत अच्छी बात हो। वर्ना ज़्यादा तरद्दुद हो तो ज़माना के लिए रखकर बाक़ी बज़रिये रेलवे पार्सल या वज़न ज़्यादा न हो तो डाक पार्सल मेरे पास रवाना कर दें। मशकूर होऊँगा। कोताह क़लम[2] ज़रूर हो गया हूँ। एफ़ ए का इम्तहान देना चाहता हूँ। इस महकमे में इसके बग़ैर गुज़र नहीं। मकान मदरसे से दो मील। क़िस्सा बहुत जल्द भेजूँगा। क्या बतलाऊँ। ख़रीदार तो बनने के लिए मैं बना रहूँ मगर जब तक आप नहीं बनाते नहीं बनता। यह शबोरोज़[3] की गुमनामी किस मर्ज़ है मगर मज़ाया[4] की सूरत या तो होना ज़रूरी है। अगर आप अपने तजवीज़ पर नज़रसानी करें और ऐसी सहूलतें दें जो मेरे जैसे कमहिम्मत (ज़रूरतन) शख़्स के लिए क़ाबिले तहरीक हो तो अब भी मुमकिन है। अब तो आपको वक़्त और भी कम मिलेगा और एक मआविन की सख़्त ज़रूरत होगी। मैं अनक़रीब आपसे गुज़ारिश करूँगा कि मेरी तजवीज़ क्या है। शायद आप उन्हें गुज़ारिशों से ख़ाली न पायेंगे मगर किसी क़दर accomodative स्पिरिट की ज़रूरत है।

आपका
धनपतराय

१ कृपा पत्र २ कम लिखने वाला ३ दिन-रात ४ ख़ूबियाँ

४४

बस्ती

१० अगस्त १९१५

भाई साहब

तसलीम। मिजाज मुबारक। चिट्ठी मिली। आज किसी वक्त इश्तिहार भी आ जायगा। इसके लिये मशकूर हूँ। दायरातुल अदब देहली मुझसे प्रेम पचीसी छापने के लिए तलब करते हैं। उनकी निस्बत आपका क्या ख़याल है। हिस्सा दोयम की इशाअत के मुताल्लिक़ भी वह आमादा हैं। आपका जवाब आ जाये तो मैं भी उन्हें जवाब दूँ। अब रह गयी हमारी बाहमी शराकत[1] की बातचीत।

ज़माना चूँकि इस वक्त बिलकुल पेयिंग कन्सर्न नहीं है इस वजह से उसका good name उतना बेशक़ीमत नहीं है जितना दूसरी हालत में होता। मैं उसकी क़ीमत एक हज़ार क़यास करता हूँ क्योंकि गुड नेम के साथ ही इसमें बैड नेम की भी आमेज़िश[2] है। बहरहाल मेरा तख़मीना यह है मेरा ख़याल है कि अगर कोई नया माहवार क़ाबलियत के साथ एडिट किया जाये और उस पर एक हज़ार रुपया सर्फ़ कर दिया जाय तो उसे इतनी मुशतहरी[3] हासिल हो जायगी।

यह मैं तसलीम करता हूँ कि आप को इस माहवार की बदौलत बहुत ख़सारा होना पड़ा जिसकी मिक़दार ग़ालिबन् तीन या चार हज़ार तक हो। मगर ग़ालिबन् तुम्हें बाज़ार में इस चीज़ की इतनी क़ीमत हरगिज़ न मिल सकेगी। और फिर इस ख़सारे के और भी असबाब हैं जिनकी तफ़सील की यहाँ ज़रूरत नहीं। अगर एक हज़ार गुड नेम की क़ीमत हो तो उसका निस्फ़ हिस्सा पाँच सौ होता है। मैं इस रक़म को दो या तीन साल में अदा करने का जिम्मेदार हो सकता हूँ। सूद बशरहे बाज़ार[4] महसूब[5] करने को भी तैयार हूँ।

मैं इसका एडीटोरियल और बड़ी हद तक मैनेजीरियल चार्ज लेने पर तैयार हूँ। आप सिर्फ़ अपने रसूख़ और ज़ाती असर से और नीज़ इश्तिहारात के मुताल्लिक़ जितना मुनासिब समझें काम करेंगे। मैं कोशिश करूँगा कि जहाँ तक मुमकिन हो उसका ख़र्च कम हो। इसके अलावा इख़राजात चार्ज बिल्कुल आपका रहेगा। यानी काग़ज़ किताबत छपाई कटाई पोस्टेज वग़ैरह। उनका हिसाब आप माहवार अदा करने का बंदोबस्त करेंगे। साबिक़ा[6] बक़ाया का हिसाब इससे अलग रहेगा। तारीख़े शराकत[7] से आप जितना रुपया लगायेंगे वह हर माह के आख़िर

१ आपसी साझे २ मिलावट ३ अपार प्रसिद्धि ४ बाजार की दर से ५ जमा ६ पिछले ७ साझा

में या इसके गुंजाइश[1] दिसम्बर या जनवरी में पैदा होगा। जितना नफ़ा या नुक़सान होगा उसमें हम और आप बराबर के शरीक होंगे। मेरा ख़याल है कि जनवरी तक हम इस रक़म को अदा कर सकेंगे। लेकिन अगर उस वक़्त फिर कमी रहे और दूसरे साल के लिये रुपये की ज़्यादा ज़रूरत हो तो फिर इसके बन्द-स्त कोई तदबीर[2] करेंगे। मगर समझते कि ये ज़िम्मेदारियाँ बेबाक़ न हो जायँ आमदनी में से जहाँ तक इमकान में होगा कुछ न लेंगे। एडीटर चाहे आप रहें या मैं। अगर आपके नाम से ज़्यादा फ़ायदा हो तो मुझे कोई शिकायत नहीं। वर्ना मुझे भी ज्वाइंट एडीटर रहना होगा। अगर यह रिसाला आपकी और मुआविनों[3] के साथ जम जाये तो हम लोग दिसम्बर तक चार-पाँच नम्बर वक़्त पर निकालकर कुछ वक़ार[4] क़ायम कर लेंगे और जनवरी से ग़ालिबन ज़्यादा ख़ूबी के साथ आग़ाज़ हो। मैंने माली ज़िम्मेदारियाँ सब आप पर रक्खी हैं। इसके वजूह सुनिये। मेरे पास इन छः माह की रुख़सत के बाद इस वक़्त कुल आठ सौ रुपये हैं। तीन सौ रुपये मैंने तीन असामियों को अठारह फ़ी सदी सूद पर क़र्ज़ दे दिये हैं। मेरा नक़दी सरमाया इस वक़्त कुल पाँच सौ रुपया है। इसे मैं उस वक़्त तक के लिये सुरक्षित का वसीला समझता हूँ जब तक कि 'ज़माना' से मुझे कुछ फ़ायदा न हो। और कौन जानता है उस मुबारक वक़्त के लिये कितने दिनों तक इन्तज़ार करना पड़े।

ग़रज़ मैं माली ज़िम्मेदारियों का बोझ उठाने से बिल्कुल नाक़ाबिल हूँ। इसी असना[5] में अगर घोटक की शादी तय हो गयी तो ग़ालिबन यह रक़म भी मेरे हाथ से निकल जायगी। घोटक इमसाल फ़ेल हो गये। यहीं हैं। स्कूल सीनियर में नाम लिखा दिया है। चाची नहीं आईं। मकान पर हैं। बेज नरायन भी यहाँ नहीं। अपने मकान पर हैं।

मैंने अपनी माली हालत का जो क़िस्सा लिखा है यह हर्फ़ ब हर्फ़ सही है। मैं आप के जवाब का इंतज़ार करूँगा।

आजकल एक ए० क मुल में कुछ लिटरेरी काम नहीं होता। अभी से तहरीक[6] भी नहीं हुई। और मुफ़्त में क़लम घिसना फ़िज़ूल मालूम होता है।

बाक़ी सब ख़ैरियत है। अगर मेरी तजवीज़ में गुस्ताख़ी की बू आये तो मुआफ़ फ़रमाइयेगा।

लार्ड डलहौज़ी की नावेल देख रहा हूँ। इस पर एक रिव्यू करने का इरादा है जो ग़ालिबन ईद की तातील में पूरा हो सके।

वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

---

१ ऐसी गुञ्जाइश होगी २ उपाय ३ सहयोगी ४ प्रतिष्ठा ५ बीच ६ प्रेरणा

४५

बस्ती

१ सितम्बर १९१५

भाईजान

तसलीम। आपका एक लिफ़ाफ़ा पहले आया था दूसरा अलीगढ़ गज़ट के रिव्यू के साथ फिर मिला। पहले ख़त का जवाब मैंने लिखा था मगर सुस्ती से लिफ़ाफ़ा मेरी जेब में पड़ा रह गया। टिकट लगा कर छोड़ने की नौबत नहीं आयी।

मैं जो मायल हूँ वह मातहती से। काम ऐसा करना चाहता हूँ जिसमें बजुज़ मेरी तबीयत के और किसी का तक़ाज़ा न हो। अगर जी में आये तो रात-दिन करता रहूँ जी चाहे तो थोड़ा ही करूँ और यह सिर्फ़ मालिकाना हैसियत में हो सकता है। साल भर तक ठेके पर काम करना और वह भी जब अलालत[1] और फ़रायज़[2] का बोझ गले पड़ा हो—मुश्किल है। इसलिए फ़िलहाल इसी हालत पर क़नाअत करता हूँ।

एफ़ ए के लिए मेहनत करना ज़रूरी है और वही कर रहा हूँ।

प्रेम पचीसी हिस्सा दोम के मुताल्लिक़ दायरतुल अदब देहली से ख़त-किताबत की। वह राज़ी है मगर क़िस्से सब नहीं हैं। तीन-चार क़िस्से मियाँ इश्तियाक़ हुसैन ने लिये थे। अब उनसे तक़ाज़ा करता हूँ। साठ रुपये पर मुआमला तय हो जायगा। हिन्दी तर्जुमे के लिए कई जगह से इसरार हुआ है और मैं खुद ही इस काम को हाथ में लूँगा। अब हिन्दी लिखने की मश्क़ भी कर रहा हूँ। उर्दू में अब गुज़र नहीं है। यह मालूम होता है कि बालमुकुन्द गुप्त मरहूम की तरह मैं भी हिन्दी लिखने में ज़िन्दगी सर्फ़ कर दूँगा। उर्दू नवीसी में किस हिन्दू को फ़ैज़ हुआ जो मुझे हो जायेगा।

क़िस्सा जो आपके पास भेजता हूँ—

आपने एक ख़त में लिखा था कि ज़माना सब निकल गया। मेरे पास एक पर्चा भी नहीं आया। मार्च अप्रैल मई जून जुलाई—यह सब पर्चे बराहे करम भिजवा दीजिये।

मजिस्ट्रेटी का कुछ हाल लिखियेगा। कानपुर में तो खूब हलचल हुई होगी।

प्रेम पचीसी हिस्सा अव्वल कुछ बिक रही है या ज्यों की त्यों रखी है। इश्तहारों का बिल क्या हुआ? दो हज़ार पर्चे तक़सीम करवा दी। उनका कुछ असर बिक्री पर भी हुआ? मैं तो अभी सिह्हीबस्ती के बाइस किसी अख़बार में

---

१ रोगों २ कर्तव्यों, फ़र्ज़ों

यह होगी कि आप सरमाया पैदा करें। मैं तो अब भी ही इसरार लेकर आपके यहाँ गया था मगर रंग अच्छा न देखा खाली मुराजअत मगर आई। इस वजह से इस्तमज़ाह सलम्ना फ़िज़ूल समझा। अगर आपकी माली हालत बमुक़ाबिलए साबिक़ बेहतर हो गयी है तो आप मुझे बुलाइये मैं हाज़िर हूँगा और बाहमी[1] मशवरे से कोई सूरत निकालेंगे।

'प्रेम पचीसी' के लिए आपने क्या कोशिश की? इनामी कुतुब के सिलसिले में मंज़ूर हो जायगी? हिस्सा दोम आप ही छपवाइये। अगर आप का प्रेस जल्द छाप सके तो इससे और क्या बेहतर होगा। अगर आप छपवाएँ तो फिर समझौता हो जाना चाहिये। मैं आप ही के फ़ैसले पर राज़ी हो जाऊँगा। आजकल कोर्स की कुतुब के लिये इश्तहार का एलान हुआ है। अगर आप इस मैदान में आना चाहें तो मैं इसमें भी आपका साथ देने को तैयार हूँ। स्वर्ड आफ़ इंडिया सीरीज़ की तरह १४ सफ़हात पर नामवरों के सवानेह[2] लिखने का इरादा है। एफ़० ए० भी होता रहेगा। इसके लिए मैं घंटे भर से ज़्यादा वक़्त नहीं सर्फ़ करता। मैं करना तो बहुत कुछ चाहता हूँ मगर मुझमें न एंटरप्राइज़ है और न रुपया। आपमें एंटरप्राइज़ है मगर रुपया नदारद। जब तक कोई सरमायेवाला शरीक न हो कैसे काम चले।

प्रेम पचीसी हिस्सा अव्वल [illegible] देहली के पास कुछ क़िस्से भेज दी है और कुछ 'हिन्दुस्तानी' में तरमीम कराई, मगर अभी तक कुछ नतीजा नहीं निकला। मैं कोशिश करूँगा कि दसहरे की तातील में कानपुर आऊँ ताकि आप कोई मुफ़ीद मतलब मशवरा दे सकें।

नैनीताल का कुछ और हाल सुनने के लिए मुश्ताक़ हूँ। ज़्यादा नियाज़।

ख़ादिम

धनपत राय

४७

बस्ती

२ अक्तूबर १९१५

भाई साहब

तसलीम। कल लिफ़ाफ़ा मिला। इसके क़ब्लनामा[3] ख़त भी मिला था। मगर मलेरिया ने कई दिन सख़्त परेशान किया। अब अच्छा हूँ। सोचता हूँ क्या जवाब दूँ। इमसाल तो किताबें मँगवा ली हैं। कोर्स छाप है। इन्हें छोड़ भी नहीं सकता। यही फ़ैसला होता है कि एक बार फिर तालिबइल्मी के

१ आपसी २ जीवन-चरित्र ३ पहले वाला

उम्मीद-ओ-बीम का मज़ा ले लूँ। फिर आइन्दा साल से नया प्रोग्राम शुरू करूँगा। प्रेम पचीसी हिस्सा दोम के मुतात्लिक आपने मुझसे शरायत[1] तलब किये हैं। किताब आपकी है, जैसे चाहें। किसी तरह इसे इलहाकों[2] कुतुब में लाने की फ़िक्र करें। अगर इसमें कामयाबी हो जाये तो मैं डिप्टी इंस्पेक्टरों से तहरीक करके इसकी ख़रीदारी करवा सकता हूँ। हर दो हिस्सों में हम और आप निस्फ़ा-निस्फ़[3] के हक़दार हैं। चाहे हिस्सा अव्वल में भी यही मुआमला रखिये। हिस्सा दोम में मैं लागत का निस्फ़ देने पर तैयार हूँ। मेरी मेहनत आपका रसूख़। लागत मुसावी[4]। अगर आपको यह भी मंज़ूर न हो तो मुझे एक एडीशन के पचास रुपये नक़द अता फ़रमाइये। दरअस्ल अव्वल से मेरा मुतालबा[5] साठ का था। मगर फ़ैसला जल्द फ़रमाइए।

ज़माना के लिये एक और क़िस्सा लिखा है। मैं हिन्दी में भी लिख रहा हूँ। सरस्वती को एक मज़मून दिया। प्रताप के लिये लिखा। इसलिये ज़्यादा काम करने से माज़ूर[6] हूँ। क़िस्सा ख़िदमत में बाद दसहरा पहुँचेगा। जो कुछ अता फ़रमाइएगा शुक्रिये के साथ क़ुबूल करूँगा। बाबू राम चरन यहाँ क़ानूनगो हुए। ऐन मसर्रत है। उन्हें आप तहरीर करें जिस तारीख़ को वह यहाँ हाज़िर हों उसकी मुझे इत्तला दे दें ताकि मुसाफ़िरत की तकलीफ़ न उठानी पड़े। अगर यह न हो सके तो स्टेशन पर इक्केवाले से कहें पुरानी बस्ती डाकख़ाना ले चलो। डाकख़ाने के बाबू मेरे यार हैं। मेरे मकान पर आदमी साथ कर देंगे। मुझसे अगर उनकी कोई ख़िदमत हो सकी तो इसे अपनी ख़ुशक़िस्मती समझूँगा। नौकर एक पहले ही से तय कर रखा है। इसकी तकलीफ़ न होगी। दसहरे की तातील में ज़माना के लिये ईश्वर चाहेगा तो कुछ न कुछ ज़रूर लिखूँगा। प्रेम पचीसी को हिन्दी में भी लिख रहा हूँ। सेहत बदस्तूर। उन्नाव के सरजू परशाद निगम ने ख़त का जवाब नहीं दिया। बराहे करम एक बार आप भी उन्हें याददिहानी करा दें। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

४८

बस्ती

११ अक्तूबर १९१५

भाईजान

तसलीम। यह लीजिये एक कहानी इरसाले ख़िदमत है। इस तातील में एक और मज़मून लिखूँगा मगर वह क़िस्सा न होगा। आपने पचीसी हिस्सा दोम के

१ शर्तें २ सप्लीमेण्ट्स: परिशिष्ट ३ आधे-आधे ४ बराबर ५ माँग ६ विवश मजबूर

मुतअल्लिक़ अभी तक कोई फ़ैसला नहीं किया। क़िस्सा अव्वल भेजी डाइरेक्टर साहब के यहाँ?

बाबू रामचरन यहाँ आने के दूसरे दिन मुझसे मदरसे में मिले और एक बार चाय की फ़रमाइश की। दूसरे दिन उनको आरिज़ा हुई। तीसरे दिन मेरा आदमी चारपाई लिए उन्हें ढूँढ़ता फिरा। आज तक उनके दर्शन नहीं हुए। वह फत्तेपुर है और मैं पुरानी बस्ती में हूँ। उनके मकान का पता मुझे मालूम नहीं। अदालत की वजह से इस मुहल्ले में परदेसियों की बड़ी कसरत है। उनका एक मनीआर्डर सदर डाकख़ाने में पड़ा है। कल एक पोस्टकार्ड मेरे मार्फ़त आया था। वह भी पड़ा हुआ है। मालूम नहीं यहाँ हैं या देहात चले गये।

बारिश रोज़ होती है। नाकों दम है। ज़माना जुलाई का अब तक नहीं आया। कमला और कमाले मरहूम पर इस तातील में ज़रूर लिखकर भेजूँगा। कोई रिसाले या अख़बार इंतिख़ाब[1] के साथ भिजवा दिया कीजिए तो शायद कुछ लिख भी सकूँ। जब तक Current affairs से लगाव न रहे किसी मज़मून पर लिखने की तहरीक नहीं होती और मज़मून भी मुश्किल से सूझता है। आपके लिये कोई रिसाला या अख़बार भेज देना कुछ मुश्किल नहीं। वापस कर देने का ज़िम्मेदार मैं हूँ।

ज़्यादा वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

४६

नार्मल स्कूल, गोरखपुर

२४ नवम्बर १९१५

भाई साहब

तसलीम। कई दिन हुए लिफ़ाफ़ा मिला। मशकूर हूँ। क़िस्से लिख रहा हूँ। ज्यों ही तैयार हो गए भेजूँगा। अभी तक हिन्दी मजमूआ तैयार नहीं हुआ है। यह क़िस्से पहले पहल हिन्दी में निकलेंगे। इसके बाद उर्दू में भी। अभी इन्हें छाप देने से इनका नयापन जाता रहेगा। कोशिश कर रहा हूँ कि अपनी और कहानियाँ भी तर्जुमा करके छापूँ। एक साहब रुपया लगाने के लिये तैयार हैं। आपने अभी रुपये इरसाल न फ़रमाये। आप लखनऊ यक़ीनन् आयेंगे। मैं भी आनेवाला हूँ। मगर अभी तक मालूम नहीं ठहरना कहाँ होगा। आप कहाँ ठहरेंगे। वहीं मेरे लिए भी गुंजाइश रखिएगा। बच्चों के रिसाले के मुतअल्लिक़ भी वहीं

---

१ चयन

बातचीत होगी। प्रेम पचीसी हिस्सा दोयम को अब छापने की कोशिश की जावे। काग़ज़ की गरानी का ख़याल अब करना फ़िज़ूल है। इसके इंतज़ार में मुमकिन है दस पाँच बरस लग जायें। पतला काग़ज़ लगाइए मगर ताख़ीर फ़िज़ूल है। इस बारे में आपका जो ख़याल हो उससे मुत्तिला फ़रमाइएगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है। उम्मीद कि आप मय अयाल[1] बख़ैरियत होंगे।

नियाज़मन्द

धनपत राय

५०

बस्ती

१६ दिसंबर १९१५

भाईजान

तसलीम। लिफ़ाफ़ा मिले कई दिन हुए। मैं इसका बहुत मशकूर हूँ। इरादा था कि मज़ामीन और जवाब साथ साथ भेजूँ मगर कुछ ऐसा इत्तफ़ाक़ हुआ कि मज़ामीन के साफ़ करने की नौबत न आयी। अलहदीजी तो मैं उर्दू और हिन्दी दोनों पर्चों में एजूकेशनल गज़ट में ग़ालिबन् १५ दिन होते हैं, रवाना कर चुका। क़िस्सा तैयार है। कल या परसों तक चक्कर-बिल-चक्कर भेज दूँगा। नागरी प्रचारिणी में पराक्रम[2] पर एक बहुत आलिमाना मज़मून छपा है। तर्जुमा है। कहिए तो ज़माना के लिए कुछ नये उनवान से इसी पर लिखूँ। सरक़ा[3] बिल-जब्र[4] हो या बदस्तूर? जवाब से बहुत जल्द मुत्तिला कीजिए। क्योंकि मज़मून लंबा है।

ज़माना के लिए इंतज़ामात निहायत अच्छे हैं। हज़रत एडिटर ज़माना यक़ीनन् मुआमलात को राहे रास्त पर लाने में कामयाब होंगे। लाला रमाप्रसाद आदमी ज़हीन होनहार है। वह आते हैं तो बुला लीजिए।

प्रेम पचीसी के मुताल्लिक़ आपने जो कोशिश फ़रमायी है उसका तहेदिल से शुक्रिया। हिस्सा दोम मैं आज ही भेज देता मगर मुसीबत यह है कि कुछ क़िस्से आरियतन्[5] निकल गये हैं, ताहम नौ या दस यहाँ मौजूद हैं। बाक़ी आप बराह करम या तो इश्तियाक़ हुसैन से मंगवा लीजिए या दफ़्तर से। इश्तियाक़ हुसैन के पास जो मुसव्वदा[6] है वह सहीशुदा है। मेरे ख़याल में तीन क़िस्से उनके पास हैं १—मंज़िले मक़सूद २—अमावस की रात ३—याद नहीं आता।

---

१ बाल-बच्चों समेत २ [illegible] ३ चोरी ४ ज़बरदस्ती ५ मँगनी ६ मसौदा

अखबारात में आप मेरे पास ये भेजें तो ऐन इनायत हो

१—स्टेट्समैन (या बंगाली)
२—माडर्न रिव्यू (या कोई दूसरा रिव्यू)
३—ज़खीरा (उर्दू)
४—आर्य गजट और ५—हिन्दोस्तान
६—कामनवील
७—हिन्दी के एक या दो माहवार रिसाले

मैं माडर्न रिव्यू और कामनवील को बहिफ़ाज़त तमाम रखूँगा और हर माह रवाना कर दिया करूँगा। लीडर मिल जाता है। वर्तमान मेरे पास गया मगर अलग बैठा हूँ जहाँ लोग शतरंज और टेनिस खेलते हैं। ली सिवा ग़ालिबन् कोई रोज़ाना अखबार नहीं आता। उस पर चंदा दो माहवार।

बच्चों के क़ाबिल लिटरेचर होना ज़रूरी है। पहले मैं एक किताब लि हूँ जिसमें बच्चों के क़ाबिल छोटी छोटी अखलाक़ी तारीख़ी ज़ुगराफ़ी कहा होंगी। किताब छोटे साइज़ के ६४ सुफ़्हात से ज़्यादा न होगी। अगर या आम और टैक्स्ट बुक मंज़ूर कर ली तो फिर दूसरा काम शुरू किया जाए

मेरे पास जून तक ज़माना आया है।

जब मेरे पास यह पर्चे आने लगेंगे तो मैं ज़माना के लिए कुछ नाट्स एडिटोरियल लिखने की कोशिश करूँगा। और रिसालों से ज़माना के एकाध अच्छे मज़मून तर्जुमा कर दिया करूँगा। क़िस्सानवीसी होती जाय हम लोग ख़ैरियत से हैं। चाची बनारस बाक़ी तीन आदमी यहाँ। बाल-बच्चे हुए न उम्मीद न आरज़ू। ज़िम्मेदारियों के ख़याल से तबीयत घबराती है। समझ ही नहीं सकता कि अगर आज मेरे दो तीन लड़के होते तो उन्हें खिलाता और कैसे रखता। आपके अम्मा बाबू की सी दुर्गत होती। आपको इस मुझसे ज़्यादा तजरबा है। बाबू राम सरन फ़र्रुख़ाबाद गये। बहुत अच्छा हुआ अगर चाहें तो कभी मिलेंगे।

मैं एफ़० ए० का इम्तहान देने मार्च में कहीं न कहीं जाऊँगा। इम्त तैयार हूँ। और ज़रूर कामयाब होगा। बनारस इलाहाबाद और कानपुर लखनऊ—चारों में बनारस तकलीफ़देह है। कानपुर में खाने-पीने की तकलीफ़ लखनऊ में जाये क़याम कालिज से दूर इलाहाबाद सुभीता है। कहीं कानपुर चैन से रहता। बहरहाल गर्मी की तातील में ज़्यादा नहीं तो पंद्रह दिन त सोहबत रहेगी।

और क्या अर्ज़ करूँ। बच्चे बख़ैरियत होंगे और आपका मिज़ाज भी अच्छी तरह होगा।

आपका
धनपत राय

५१

स्थान-तिथि नहीं
अनुमानतः बस्ती, अंत १९१४

भाई साहब

तसलीम। हँसी पर एक मज़मून हस्ब वायदा रवानये ख़िदमत है। मज़मून नामुकम्मल है। अभी असल मज़मून ही पूरा नहीं शाया हुआ। जब वह पूरा हो जाये तो उसका दूसरा हिस्सा भेज दूँगा। क़िस्सा लिख रहा हूँ। जल्द रवाना करूँगा मगर तातील के बाद ख़त्म होगा। अबकी आज़ाद नहीं आया मालूम नहीं क्या बात है। इसके पहले जो ख़त और मज़मून भेज चुका हूँ वह ग़ालिबन पहुँचे होंगे। प्रेम पचीसी हिस्सा दोम कातिब के पास गयी या नहीं। और क़िस्से ढूँढ़वाने की तकलीफ़ आपको उठानी पड़ेगी।

बाक़ी सब ख़ैरियत है। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे। ज़माना कब तक निकलता है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

५२

बस्ती
१ फरवरी १९१५

भाई साहब

तसलीम। लिफ़ाफ़ा मिला। ज़माना भी आया। मशकूर हूँ। मज़ामीन अच्छे हैं। अभी सरसरी तौर पर देखा है। मज़ामीन के मुतालिक़ शिकायत का कोई मौक़ा नहीं। परमात्मा आपको ज़ाती परीशानियों से जल्द निजात दे। ग़ालिबन इस मुआमले[1] की पैरवी का बार अब आपके सर होगा। और किसके सर हो ही सकता था। ख़ैर किसी तरह आपने ज़माना को ज़िन्दा तो किया।

१ [illegible]

अब मुझे यह जानने की ख्वाहिश है कि खरीदारान का बर्ताव कैसा है और अभी उनकी तादाद इस क़दर कम तो नहीं है कि ख़सारा ही नज़र आये।

प्रेम पचीसी की जिल्दें यहाँ नहीं हैं। मैंने उन्नाव के लाला सरजू परशाद निगम को लिखा है कि वह अपने यहाँ की जिल्दें आपके दफ़्तर में भिजवा दें। ज़माना में पचीसी का इश्तहार न देखकर ताज्जुब हुआ। अगर भूलकर रह गया हो तो बराहे करम फ़रवरी से ज़रूर दर्ज करा दें।

हिस्सा दोम के मुताल्लिक़—अगर इत्तिफ़ाक़ हुसन आये करते हैं तो मजबूरी है। मज़ामीन की फ़ेहरिस्त मैंने भेज दी है। कोई तेरह क़िस्से होने चाहिए। म' मौजूद हैं साफ़ और इन्तख़ाबे ज़माना कीजिए। सिर्फ़ पुराने पर्चे तलाश करवाने पड़ेंगे।

मज़ामीन के मुताल्लिक़—आजकल मसरूफ़ नवीसी हूँ। राना जंगबहादुर वाली नैपाल की सवाने उमरी[1] लिखने का इरादा है। मसाला जमा कर लिया है। बहुत जल्द लिखकर रवाना करूँगा।

आपका
धनपत राय

५३

बस्ती
२४ फ़रवरी १९१६

भाई साहब

तसलीम। मिज़ाज कैसा है? मुक़दमे के मुताल्लिक़ क्या हुआ? क्या अभी तक दवा-दविश[1] जारी है? या नजात हो गयी? इससे तो आपके काम में बड़ा हर्ज होता होगा। मुझे यह जानने की ख्वाहिश है कि जनवरी नंबर का पब्लिक पर क्या असर पड़ा। ख़रीदारों में कुछ तो ज़रूर ही दाख़िल हो गये होंगे। मगर उनकी तादाद इतनी तो नहीं कि ख़सारा ज़्यादा हो? गवर्नमेंट की सरपरस्ती १५ जिल्दों तक महदूद है या कुछ और ज़्यादा हुई? मेरे ख़याल में अभी आपको इसमें कामयाबी नहीं हुई।

मालूम नहीं इन दिनों आपकी माली हालत क्या है। मैं तो परीशानहाल हूँ। अख़बारी मामलों मसरूर[2] सिर्फ़ तनख़्वाह पर गुज़ारा। सिर्फ़ मेरी फ़ीस और किताब वग़ैरह पर एक तनख़्वाह सर्फ़ हो गयी। और अभी पंद्रह दिन की रुख़सत भी पड़ गयी। कोई पचास रुपये का और सर्फ़ा है। क्या मैं आपको

तकलीफ़ देने की कुछ ज़रूरत नहीं। अगर आप मज़ामीन के मुताल्लिक़ तसफ़िया कर दें तो इस वक़्त मुझे मदद मिल जाये। प्रेम पचीसी का हिसाब और आपके इश्तहारात का हिसाब फिर होता रहेगा। मैंने मजबूर होकर आपको तकलीफ़ दी है वर्ना मैं आपकी ज़रूरतों की तरफ़ से बेख़बर नहीं हूँ। मुझे यक़ीन है कि मुझे मायूस न होना पड़ेगा।

प्रेम पचीसी का इश्तहार ज़माना में नहीं नज़र आया। बराहे करम उसे दे दीजिए। उन्नाव के सरजू प्रसाद के पास मेरी पचीस जिल्दें पड़ी हुई हैं। अगर आप उन्हें मँगवा लें तो बहुत अच्छा हो। मैंने तो उन्हें लिख दिया था मगर शायद उन्हें कुछ परवाह न हुई। किताबें बनारस में हैं इस वजह से फ़िलहाल भेजने में तरद्दुद है। पच्चीस जिल्दें दो माह तक हो जायेंगी। उन्नाव से तो आपके दफ़्तर में रोज ही कोई न कोई आता जाता रहता है। हाँ आपको ख़याल आना शर्त है। एक मज़मून मैंने ज़माना के लिए लिख रखा है। मगर साफ़ करने की मुतलक़ फ़ुर्सत नहीं मिलती मजबूर हूँ। दफ़्तर ज़माना में आजकल कौन साहब हैं? वही अलिफ़०बे० या और कोई। बाबू रामसरन का कुछ हाल कहिए। बाक़ी सब ख़ैरियत है। उम्मीद है कि बच्चे खुश होंगे।

जवाब का मुन्तज़िर,

नियाज़मन्द
धनपत राय

५४

बस्ती
११ मई १९१९

भाईजान

कल कार्ड मिला। आज बनारस जाता हूँ। मेरे एक साले साहब की शादी ८ जून को है। इसलिए मैंने यह बेहतर समझा है कि जून ही में बनारस से चलूँ और आपसे मुलाक़ात करता हुआ शादी में शरीक होने के बाद १९ तक बनारस वापस चला आऊँ। मज़ामीन बनारस पहुँचकर हाज़िर करूँगा। मेरा पता यह है

धनपत राय
गाँव—मढ़वाँ
बनारस कैंट

नियाज़मन्द
धनपत राय

५५

गोरखपुर
११ दिसंबर १९१६

भाई साहब

तसलीम। कृपा कार्ड मिला। मशकूर हूँ। दो चार रोज में कुछ इरसाले खिदमत करूँगा। एक क़िस्सा और कुछ और।

दिसंबर में लखनऊ जाने का इरादा तो करता हूँ। देखूँ, दैव से मदद मिलती है या नहीं। इसी के लिए कई रिसालों में लिखा। एक साहब ने तो खबर ली दूसरे साहब आइन्दा मैंने। हो सकेगा जाऊँगा नहीं तो न सही। तक़रीर मैं सुनता नहीं और तो कोई काम नहीं। अखबारों में पढ़ लूँगा। और क्या करूँ। जब शब-ओ-रोज़ की मेहनत पर यह हाल है तो मालूम होता है इफ़्लास[1] से कभी निजात न होगी।

ख़्वाहाँ नियाज़

धनपत राय

५६

गोरखपुर
२ जनवरी १९१७

भाईजान

तसलीम। आपका ख़त मिला था। उसका जवाब जल्द न दे सका। क्योंकि आप भी तो कांग्रेस में मसरूफ़ रहे होंगे। पहले यह बताइए कि Victor Hugo की मशहूर किताब Les miserables का उर्दू तर्जुमा हुआ है या नहीं। अगर हुआ है तो कहाँ मिल सकता है। अगर नहीं हुआ है तो मैं इस काम में जुटना चाहता हूँ। साल भर का काम है। किसी तरह से पता लगाकर बतलाइए। क़िस्सा दोम प्रेम पचीसी को भिजवाइए। इसके काग़ज़ पर सही। जिस काग़ज़ पर आज़ाद छपता है उसी पर हो तो क्या मुज़ायका। जल्द करना चाहिए क्योंकि प्रेम बत्तीसी भी पूरी हुआ चाहती है। ग़ालिबन् पच्चीस क़िस्से और हो चुके हैं। अब सात की और कमी है। इसके बाद मैं विक्टर ह्यूगो में जुटूँगा। 'पैके मस्त' की तसवीर भेजी थी मगर वह आपके यहाँ बेकार हो गयी क्योंकि किसी दूसरे साहब ने लिख दी। और जैसा मुनासिब समझें, करें।

---

१ ग़रीबी

बाक़ी ख़ैरियत है। उम्मीद कि आप और बच्चे बख़ैर-ओ-आफ़ियत होंगे।

नियाज़मन्द

धनपत राय

५७

गोरखपुर

१८ जनवरी १९१७

भाईजान

तसलीम। मुबारकबादियों के लिए तहे दिल से शुक्रिया। मेरी जानिब से भी यही दुआएँ क़बूल फ़रमाइए।

उम्मीद कि आप शादी की तक़रीब से वापस आ गये होंगे। कुछ इसका ज़िक्र लिखिएगा। आज मुद्दत के बाद यहाँ आफ़ताब देखा। फिर ज़िन्दा हुआ। प्रेम पचीसी के लिए जो क़िस्से चाहें ले लें। इसकी फ़ेहरिस्त तो मैंने पहले ही दे दी थी। मतबूआ[1] कापियाँ भी भेजी थीं। क्या वह कापियाँ ग़ायब हो गयीं। और मतलब तो तेरह कहानियों से है। मगर यह हों।

५८

नार्मल स्कूल, गोरखपुर

२४ जनवरी १९१७

भाईजान

तसलीम। कल कार्ड मिला। मशकूर हूँ। मनीआर्डर अभी नहीं मिला। आता होगा। मेरे इस मनीआर्डर के बाद पैंतीस रुपये और रह जायेंगे। हिसाब से मिला लीजिएगा। मैं आजकल एक क़िस्सा लिखते लिखते नाविल लिख चला। कोई सौ सफ़े तक पहुँच चुका हूँ। इसी वजह से छोटा क़िस्सा न लिख सका। अब इस नाविल में ऐसा जी लग गया है कि दूसरा काम करने को जी ही नहीं चाहता। मगर माघ के लिए दो तीन दिन में ज़रूर कुछ न कुछ भेजूँगा। ख़रचे के लिए मजबूरी है। आप अगर इस नाविल को मुसलसल देना चाहें तो कैसा हो? हालाँकि मुझे ख़ुद यह सूरत पसंद नहीं। मालूम नहीं कब तक ख़त्म होगा। और रिसाले की मौजूदा ज़ख़ामत[2] भी इस बोझ को नहीं सँभाल सकती। क़िस्सा दिलचस्प है और मुझे ऐसा ख़याल होता है कि मैं अबकी बार नाविलनवीसी में भी कामयाब हो सकूँगा। एक मज़मून हमारी आज तालीमी ज़रूरियात पर मुदाम

१ छपी हुई २ मोटापन

में है। देखिए बन जाये तो भेजूँ। फ़रवरी में मुझे इलाहाबाद आना है। कुँवर साहब सख़्त बीमार हैं। शायद इस सिलसिले में आपसे मुलाक़ात हो सके। बाबू राम भरोसे के घर तो जून में शादी होगी। बन पड़ा तो आऊँगा। अभी बहुत दिन हैं। बच्चों की चेचक का हाल पढ़कर रंज हुआ। क्या टीका नहीं लगा था? ईश्वर बच्ची को चंगा करे। अब की जो क़िस्सा आपके पास दो तीन दिन में जायेगा उसे अर्सा हुआ लिखा था मगर सौंठ के मारे नहीं भेजा। इसमें वाइज़[1] बन गया हूँ हालांकि कहीं मैं और कहीं पीरे फ़रतूत[2]। अगर पसंद आवे तो छापिएगा वर्ना हिन्दी में छप जायेगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

५९

नार्मल स्कूल, गोरखपुर
९ फ़रवरी १९१७

भाईजान

तसलीम। दो मज़मून बैरंग भेजे थे। जवाब न मिला। मालूम नहीं पहुँचे या नहीं। तरद्दुद है।

अब तो ज़माना ठीक वक़्त पर निकलने लगा है। मुझे यह जानने की ख़्वाहिश है कि इस पाबन्दी का तादाद ख़रीदारान पर कुछ असर पड़ा या नहीं। मुत्तला फ़रमाइएगा।

पचीसी हिस्सा दोम की किताबत ग़ालिबन् शुरू हो गयी होगी। सेहत का लिहाज़ रखना ज़रूरी है। इस किताब की इशाअत में मेरा क्या समझौता रहेगा। मेरी है या आपकी या मुश्तरक। मुश्तरक रखिए तो अच्छा।

जवाब से सरफ़राज़ फ़रमाइएगा। मैं इसी माह में आऊँगा मगर मालूम नहीं कब।

नियाज़मन्द
धनपत राय

६०

इलाहाबाद
२० फ़रवरी १९१७

भाईजान

तसलीम। मैं कल इलाहाबाद आ गया। १५ मार्च तक रहना पड़ेगा।

---

१ उपदेशक २ कहीं मैं और कहीं जर्जर बुड्ढा

हिफ़्ज़े सेहत[1] और First aid के मुताल्लिक़ लेक्चर होंगे। सरकार ने हर एक नार्मल स्कूल से एक एक आदमी को तैनात किया है। मैंने बस्ती से आपकी खिदमत में दो खत भेजे थे। लेकिन जवाब से महरूम रहा। ताज्जुब[2] है। खुदा न ख्वास्ता तबीयत तो खराब नहीं हो गयी। और आप इलाहाबाद तो नहीं आये। मुलाक़ात हो जाती। मैं खुद आता लेकिन बजुज होली के और कोई तातील नहीं पड़ती। ट्रेनिंग कालेज इलाहाबाद के पते से खत लिखियेगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

६१

ट्रेनिंग कालिज, इलाहाबाद
२ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। आज लिफ़ाफ़ा मिला। मशकूर हुआ। आपकी परेशानियों का हाल पढ़कर अफ़सोस हुआ। क्या बच्चे की आँख इस क़दर खराब हो गयी कि तालीम तर्क करना पड़ी। यही सब ख़ानादारी[3] की तकलीफ़ें हैं। आपकी ख़ामोशी से मैं समझ गया था कि ख़ैरियत नहीं है और अंदेशा सही निकला। ईश्वर बच्चे के हाल पर रहम करे। लिफ़ाफ़े के अन्दरवाले तुहफ़े देखे। खुश हुआ। हालाँकि मेरे पास बहुत-सी क़िस्सागोई के लिये न दिमाग़ है न वक़्त। आजकल अपना नाविल लिखने में महव हूँ। यह ख़त्म हो जाय तो कुछ और करूँ। हाँ 'ज़माना' के लिये स्टाक मौजूद है।

प्रेम पचीसी हिस्सा दोम में ज़रा ज़्यादा सरगर्मी फ़रमाइये। जल्दी ख़त्म हो जाय। अभी बहुत कुछ छपवाना है। अगर पहली मंज़िल में इतना रुके तो फिर इतनी लम्बी ज़िन्दगी कहाँ से आयेगी। तातीले गर्मी के पहले ख़त्म हो जाना ज़रूरी है। मैं शरीक हूँ।

'प्रेम पचीसी हिस्सा अव्वल की जिल्दें भेजी जायेंगी। मैंने गोरखपुर लिख दिया है। लेकिन अगर किसी वजह से इस वक़्त न गयीं तो मैं वहाँ पहुँचते ही भेज दूँगा। आप से भी 'यादगारे राम' की कुछ जिल्दें लूँगा। गोरखपुर के स्टेशन पर एक दुकान खुली है। वहाँ उर्दू की किताबें भी बिकती हैं। मुमकिन है 'यादगारे राम' कुछ निकले। 'प्रेम पचीसी' तो दस-पाँच निकल जाती है। मैं होली की तातील में आनेवाला हूँ। लेकिन मेरे पिछले हिसाब में कुछ रवाना

१ स्वास्थ्य रक्षा २ विस्मय ३ गृहस्थी

फ़रमाइये वर्ना मुझे गोरखपुर से मँगाना पड़ेगा जो ज़्यादा दर्दे-सर है। पिछला हिसाब मैं आपको लिख चुका हूँ। ग़ालिबन आप ने नोट कर लिया होगा।

'प्रेम पचीसी' का हिन्दी एडीशन छप रहा है। उसका मराठी एडीशन भी छप रहा है।

मुलाक़ात के लिए जी बहुत चाहता है। होली में शायद एक दिन वक़्त निकल सके।

और तो सब ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

६२

इलाहाबाद

१२ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। अफ़सोस है कि इस तातील में मैं कानपुर न आ सका। बहुत कोशिश की कि आऊँ लेकिन एक तरफ़ ससुराल का तक़ाज़ा दूसरी तरफ़ हमज़ुल्फ़[1] साहब का इसरार। तीन दिन की तातील में बमुश्किल तमाम इन दोनों तक़ाज़ों से नजात मिली। अब आया हूँ और फिर कालेज शुरू हुआ। रसाले के लिए दो मज़ामीन तैयार हैं मगर गोरखपुर जाने पर साफ़ होंगे। नाविल ग़ालिबन् एक माह में पूरा होगा और उम्मीद करता हूँ कि मई में उसे आपके मुलाहज़े के लिए हाज़िर कर सकूँगा। बच्चों की नासाज़ी-ए-तबीयत बाइसे हैजान[2] है। अख़बार से मालूम हुआ कि आजकल कानपुर में प्लेग की भी कमी नहीं है। ईश्वर ख़ैरियत से रखें। ऐसी कोशिश कीजिए कि प्रेम पचीसी हिस्सा दोम जून तक निकल जाये। प्रेम पचीसी की ४४ जिल्दें भेज दी गयी हैं, पहुँची होंगी। और सब ख़ैरियत है।

वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

६३

नार्मल स्कूल गोरखपुर

२ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। मैं १९ को यहाँ बख़ैरियत आ गया। कई हिन्दी के बुकसेलर प्रेम-

---

१ साढ़ू २ बेचैनी

पचीसी को शाया करने की इजाज़त माँगते हैं। मैं हिस्सा दोम का इन्तज़ार कर रहा हूँ। किताब पूरी हो जाये तो किसी को दे दूँ। आपने होली के बाद उसके मुतअल्लिक़ मुफ़स्सल[1] लिखने का वादा किया था। अब उसे पूरा कीजिए। 'ज़माना' के लिए मज़मून साफ़ कर रहा हूँ। तीन दिन लगेंगे। अभी मार्च का 'ज़माना' नहीं आया। क्या देर है?

बाबू महताब राय लखनऊ से टाइप सीखकर आ गये हैं। आप इन्हें वहाँ किसी मिल या फ़र्म में इम्प्लोइमेन्ट करा सकते हैं। अगर ऐसा हो सके तो मुझ पर ख़ास इनायत होगी। मुत्तिला फ़रमाइएगा। किताबें पहुँची होंगी। रुपया इलाहाबाद ही में मिल गया था। मशकूर हूँ।

कानपुर में प्लेग की क्या कैफ़ियत है। यहाँ तो निजात है। मगर देहातों में बड़ा ज़ोर-शोर है।

जवाब से सरफ़राज़[2] फ़रमाइएगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

६४

भाईजान

गोरखपुर
२१ मार्च १९१७

तसलीम। यह मिसाले हिरायत ख़िदमत में हाज़िर है। कोई प्लाट नहीं है। सिर्फ़ जज़्बात मौजूदा का मुरक्क़ा[3] दिखाने की कोशिश की गयी है। उम्मीद है पसन्द आयेगी।

मुझे ४१) में से १) मिले ३१) और रहे। इसमें इस मज़मून को और इज़ाफ़ा फ़रमाइये तो १८) होते हैं। मगर हिन्दी शोफ़ा वाला सिलसिला पसंद हो तो एक शायर को रवाना करूँ। वरना 'हनुमान' में भेज दूँ।

यहाँ मेरे एक दोस्त ने स्टेशन पर उर्दू किताबों का स्टाल खोला है। उन्हें कुछ 'ज़माना' प्रेस की किताबें दरकार हैं। आप बीस भी किताबें रवाना करा दें। हिसाब मय कमीशन के लिख भेजें। चाहे मेरे हिसाब में मुजरा हो जायगी चाहे क़ीमत रवाना हो जायगी। मेरा ज़िम्मा है। फ़ेहरिस्त हस्ब ज़ैल है

आरपारे राम	
भारत दर्शन	५ जिल्दें
	२

१ विस्तारपूर्वक २ सम्मानित कीजिएगा ३ तस्वीर

फ़रमाइये वर्ना मुझे गोरखपुर से मँगाना पड़ेगा जो ज़्यादा तरद्दुद-तलब है। पिछला हिसाब मैं आपको लिख चुका हूँ। ग़ालिबन आप ने नोट कर लिया होगा।

'प्रेम पचीसी' का हिन्दी एडीशन छप रहा है। उसका मराठी एडीशन भी छप रहा है।

मुलाक़ात के लिए भी बहुत चाहता है। होली में शायद एक दिन वक़्त निकल सके।

और तो सब ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

६२

इलाहाबाद

१२ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। अफ़सोस है कि इस तातील में मैं कानपुर न आ सका। बहुत कोशिश की कि आऊँ लेकिन एक तरफ़ ससुराल का तक़ाज़ा दूसरी तरफ़ हमज़ुल्फ़ों' का इसरार। तीन दिन की तातील में बमुश्किल तमाम इन दोनों तक़ाज़ों से नजात मिली। आज आया हूँ और फिर काम शुरू हुआ। ज़माना के लिए दो मज़ामीन तैयार हैं मगर गोरखपुर जाने पर साफ़ होंगे। नाविल ग़ालिबन एक माह में पूरा होगा और उम्मीद करता हूँ कि मई में उसे आपके मुलाहज़े के लिए हाज़िर कर सकूँगा। बच्चों की नासाज़ी-ऐ-तबीयत मूजिब मलाल[1] है। पर्चे से मालूम हुआ कि आजकल कानपुर में प्लेग की भी कमी नहीं है। ईश्वर ख़ैरियत से रखें। ऐसी कोशिश कीजिए कि प्रेम पचीसी हिस्सा दोयम जून तक निकल जाये। प्रेम पचीसी की ४४ जिल्दें भेज दी गयी हैं, पहुँची होंगी। और सब ख़ैरियत है।

वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

६३

नार्मल स्कूल गोरखपुर

२ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। मैं १९ को यहाँ बख़ैरियत आ गया। कई हिन्दी के बुकसेलर प्रेम-

---

१ दुख २ बेचैनी

पचीसी को शाया करने की इजाजत माँगते हैं। मैं हिस्सा दोम का इन्तजार कर रहा हूँ। किताब पूरी हो जाये तो किसी को दे दूँ। आपने होली के बाद उसके मुताल्लिक मुफस्सल[1] लिखने का वादा किया था। अब उसे पूरा कीजिए। जमाना के लिए मजमून साफ कर रहा हूँ। तीन दिन लगेंगे। अभी मार्च का जमाना नहीं आया। क्या देर है?

बाबू महताब राय लखनऊ से टाइप सीखकर आ गये हैं। आप इन्हें कहीं किसी मिल या फ़र्म में इम्प्लॉयमेन्ट करा सकते हैं। अगर ऐसा हो सके तो मुझ पर खास इनायत होगी। मुत्तला फ़रमाइएगा। किताबें पहुँची होंगी। रुपया इलाहाबाद ही में मिल गया था। मशकूर हूँ।

कानपुर में प्लेग की क्या कैफ़ियत है। यहाँ तो निजात है। मगर देहातों में बड़ा जोर-शोर है।

जवाब से सरफ़राज़[2] फ़रमाइएगा।

नियाजमन्द
धनपत राय

६४

गोरखपुर
११ मार्च १९१७

भाईजान

तसलीम। यह 'मिसतमसे हिकायत' खिदमत में हाजिर है। कोई प्लाट नहीं है। सिर्फ़ जमानए मौजूदा का मुरक्का[3] दिखाने की कोशिश की गयी है। उम्मीद है पसन्द आयेगी।

मुझे ४१) में से १०) मिले ३१) और रहे। इसमें इस मजमून को और इजाफ़ा फ़रमाइये तो ?) होते हैं। अगर हिन्दी रोमन वाला सिलसिला पसंद हो तो एक शायर को रवाना करूँ। वरना 'तर्जुमान' में भेज दूँ।

यहाँ मेरे एक दोस्त ने स्टेशन पर उर्दू किताबों का स्टाल खोला है। उन्हें 'जमाना' प्रेस की किताबें दरकार हैं। आप वी० पी० की किताबें रवाना करा दें। हिसाब मय कमीशन के लिख भेजें। चाहे मेरे हिसाब में मुजरा हो जायगी चाहे कीमत रवाना हो जायगी। मेरा जिम्मा है। फ़ेहरिस्त हस्ब ज़ैल है

दास्ताने राम	५ जिल्दें
भारत दर्शन	२

१ विस्तारपूर्वक २ सम्मानित कीजिएगा ३ तसवीर

सैरे दरवेश	२
मसायेह चाकबस्त	१
हमारे-हुक्काम	५
तरीक़े दोस्तमंदी	५
महादेव गोविंद रानाडे	५
आर्य समाज और पालिटिक्स अज इस्वातराय	१
मुसद्दसे हाली	५
उर्दू मज़मून नवीसी	२

इन किताबों के भिजवाने में देर न फ़रमायें। 'प्रेम पचीसी' हिस्सा दोम के मुताल्लिक़ अब तक जो कुछ हो चुका है उससे मुत्तिला कर दें। मेरा नाविल चल रहा है। अब ज़रा इतमीनान हो जाये तो ख़त्म करूँ। ख़ून हो रहा है। चाहता हूँ कि जल्द अंजाम की तरफ़ चलूँ।

एक और क़िस्सा तैयार है। अच्छा क़िस्सा है। मगर ज़रा सफ़ाई में देर है। जल्द भेजूँगा। 'ज़ाकिर' का 'अजमस्त' देखा। क्या किस्सा हो गया? आप को मालूम हो तो कुछ उसकी कैफ़ियत लिखियेगा।

बच्चों की तबीयत कैसी है। कानपुर में प्लेग तो नहीं है?

सोज़े वतन की एक जिल्द ज़रूर रवाना करें। यहाँ एक भी नहीं है।

नियाज़मंद

धनपत राय

६५

सलेमपुर

डाकख़ाना बनवार इलाहाबाद

८ जून १९१७

भाई साहब

तसलीम। आप परसों लौटेंगे। यह ख़त आप ही जाता है। मैं यहाँ बुरा आ फँसा। वाक़ई सब बीमार हो रहे हैं। अब देखूँ किस तारीख़ तक पिंड छूटता है। अगर मेरी कोई चिट्ठी-पत्री आये तो उसे गोरखपुर भेजिएगा।

(शेष मिट गया है।—अ)

६६

गोरखपुर
२ जुलाई १९१७

भाईजान

तसलीम। मैं यहाँ तीन जून को आ पहुँचा लेकिन अभी इत्मीनान से काम नहीं कर सका। आपने वहाँ किसी से इमदाद[1] के मुतालिक़ गुफ़्तगू की या नहीं। मैंने वादा तो कर लिया है और उसे पूरा करने का ख़याल भी है लेकिन नये प्रास्पेक्टस को देखकर जी ज़रा घबराता है। और इसे आप भी ग़ालिबन तसलीम करेंगे कि मुझे इन दो हुक़ूक़ की ज़्यादा ज़रूरत है। ऐसी हालत में मैं मुस्तक़िल तौर पर इमदाद ज़ाहिर न कर सकूँ। हाँ अफ़साना इनायत के लिए हाज़िर हूँ। ज़माना और प्रेम पचीसी की कापियाँ कानपुर में एक लेटर बक्स में डाल आया था। मिल गयी होंगी। इस वक़्त अमीन[2] प्रेमी के बाइस मिल न सका। और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है।

बारिश ख़ूब हो रही है। फ़ीवर आजकल ख़ूब धूम से निकलता है और अख़बार में भी ज़ोर है। इस वक़्त मामूली तजरुबों से काम चलता नहीं नज़र आता। मक़ैरेरी[3] की ज़रूरत है। और क्या लिखूँ। उम्मीद है कि बच्चे अच्छी तरह होंगे।

नियाज़मंद
धनपत राय

६७

गोरखपुर
९ जुलाई १९१७

भाईजान

तसलीम। नार्मियाल की फ़ेहरिस्त छप गयी। क्या ख़बरें हैं। अफ़सोस लाख लाख न सही हज़ार दो हज़ार कुछ हाथ लगा। दोस्तों में कोई मुवफ़्फ़क़[4] हुआ।

चार दिन से बच्चे को ब्रान्काइटिस की शिकायत हो गयी है। डाक्टर की दवा कर रहा हूँ। अख़बार के मुतालिक़ आपने कुछ तहरीर नहीं फ़रमाया। *देखने में ही नहीं आया। मैं तो अभी तक अपनी झंझट से नहीं छूटा।*

भवदीय
धनपत राय

---

१ सहायता २ अस्वस्थता ३ दफ़्तरी मिस्टर मैरवड ४ कामयाब

६८

गोरखपुर
२५ जुलाई १९१७

भाईजान

तसलीम। आज एक काम से फ़ुर्सत मिली। शेख़ सादी के हालात एक साहब की फ़र्माइश से हिन्दी में लिखे हैं। अब 'ज़माना' के लिये कुछ लिखने की फ़िक्र में हूँ। लॉटरी ने फिर धोखा दिया। इसका अफ़सोस रहा। ठाकुर जी की मसिल किस उम्मीद पर की जाय। 'प्रेम पचीसी' प्रेस में चली गयी बहुत अच्छा हुआ। प्रूफ़ अगर बहुत ख़राब हों तो यहाँ भिजवा दीजिये और अगर ग़लतियाँ कम नज़र आयें तो वहीं दिखवा लीजिये। आने जाने में देर होगी। मेरे हिसाबे साबका में बाद मिनहाई[1] क़ीमत कापी[2] ११) निकलते हैं। इसे महसूस करके मेरे ज़िम्मे जो कुछ साफ़ हो उससे मुत्तिला कीजियेगा। क़िस्सा अब्बास की अगर जिल्दें दरकार हों तो भेज दूँ। हर दो जिल्दें १॥) में मुश्तहिर हो जाना चाहिये। आपकी बुक एजेंसी कुछ और चली या नहीं। अख़बार 'आज़ाद' ग़ालिबन दस्तूर चला जाता है, मुझे तो कोई तग़य्युर[3] नहीं नज़र आता। अब मुझे स्टेट्समैन मिलने लगा है। चाहता हूँ कि लिखा करूँ लेकिन मुश्किल यह है कि मेरा कुछ न कुछ वक़्त अब हिन्दी-नवीसी में चला जाता है। बच्चे अब दोनों अच्छी तरह हैं। और तो कोई ताज़ा हाल नहीं। उम्मीद कि आपके यहाँ सादगी की मामूली के अलावा और सब ख़ैरियत होगी।

नियाज़मंद
धनपतराय

६९

गोरखपुर
८ अगस्त १९१७

भाईजान

तसलीम। अभी तक प्रेम पचीसी के प्रूफ़ नहीं आये। प्रेस में क्या देर हो रही है। आपका इधर कोई ख़त नहीं आया। शायद आप बहुत मसरूफ़ हैं। मेरी भी यही हालत है। एक क़िस्सा ज़माना के लिए अब परसों तक रवाना होगा। आपकी किताबों की एजेन्सी का क्या हश्र हुआ। कुछ काम चला या ठण्डा पड़ गया।

१ कटौती २ झगड़ा ३ अन्तर

अपना नाविल ख़त्म कर रहा हूँ। उसे पहले हिन्दी में तबा[1] कराने का क़स्द[2] है। उर्दू में तो पब्लिशर अटका[3] है। अपने हालात से मुत्तला फ़रमाइए। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे। हम लोग अच्छी तरह हैं।

नियाज़मंद
धनपतराय

७०

माईजान

गोरखपुर
११ सितम्बर १९१७

तसलीम। आपकी ख़मोशी तअज्जुब ख़ाती है। मज़मून भेजा 'सप्त-सरोज' भेजा। लेकिन आपने एक रसीद की तकलीफ़ भी गवारा न की। आप ज़रूर अदीमुलफ़ुर्सत हैं लेकिन मेरे लिये एक कार्ड लिखना कुछ मुश्किल न था। 'प्रेम-पचीसी' के मुताल्लिक़ आपने क्या कार्रवाई की। लखनऊ या पटना या कानपुर ही में कोई दूसरा इन्तज़ाम हुआ या उसकी इशाअत का ख़याल ही तर्क कर दिया। अगर ऐसा हो तो किताबत की कापियाँ मेरे पास रवाना फ़रमा दें मैं उन्हें अपना लूँ वर्ना फिर कापियाँ ख़राब हो जायँगी। जवाब से जल्द मुमताज़ फ़रमायें।
उम्मीद है कि अयाल बच्चे अच्छी तरह होंगे।

आपका
धनपतराय

७१

माईजान

हिन्दी पुस्तक एजेंसी गोरखपुर
१५ सितम्बर १९१७

तसलीम। अभी आपका कार्ड मिला। बहुत ख़ुश हुआ। ईश्वर करे जल्द निकले। आपने काउण्ट टाल्सटाय का सवानही[4] मज़मून जो ख़ास तौर से निगाहनज़र अलग रख लिया है उसकी मुझे सख़्त ज़रूरत है। अगर बराहे इनायत उसे भेज दीजिए तो मशकूर होऊँगा। एक मज़मून लाला मायापत राय का है और दूसरा किसी और साहब का। दोनों मज़ामीन इरसाल फ़रमायें। एक हफ़्ते में वापस हो जायेंगे। इसी के साथ मूड़ भी आ जायें तो बेहतर है।

---

१ छपाने २ इरादा ३ कयाम ४ जीवनी-खाका
५

७२

गोरखपुर
१७ सितम्बर १९१७

भाईजान

तसलीम। प्रेम पचीसी आज भेजी जायगी। मिस्टर मुंगिया के ख़त का जवाब दे दिया है। एक क़िस्सा आपके लिए लिखा था। वही वहाँ भेज दूँगा। आपके यहाँ भी वही शाया हो जायेगा। ग़ालिबन् इसमें आप कोई हर्ज न समझेंगे। कल मैंने काउण्ट टाल्सटाय पर सवालही मज़ामीन जो आपके यहाँ निकले हैं मांगे हैं। उनका एक हिन्दी एडीशन शाया करने की नीयत है। वैरंग भेजिएगा। एक हफ़्ते में वापस कर दूँगा।

बाक़ी सब ख़ैरियत है। अभी तक प्रूफ़ नहीं आया।

नियाज़मंद
धनपतराय

७३

गोरखपुर
२ अक्तूबर १९१७

भाईजान

तसलीम। मिज़ाज शरीफ़। फिर कोई प्रूफ़ नहीं आया। क्या एक एक फ़ार्म में दो हफ़्ते का वक़्फ़ा होगा? इस तरह तो कई महीने लग जायेंगे। हमारा स्कूल बदक़िस्मती से १० अक्तूबर से बंद होगा। इन्सपेक्टर से दरख़्वास्त की गयी थी कि इसे इमसाल ही से बंद करने की इजाज़त दें लेकिन मंज़ूर नहीं की। इस वजह से मेरा सीतापुर जाना मंसूख़। अब बशर्ते ज़िन्दगी कलकत्ते की सैर होगी। उम्मीद कि आप बहुत अच्छी तरह होंगे।

नियाज़मन्द
धनपतराय

७४

गोरखपुर
२६ जनवरी १९१८

भाईजान

तसलीम। किताबें लाहौर पहुँच गयीं। वहाँ से भी किताबें ग़ालिबन् कानपुर

आ गयी होंगी। मैंने ताकीद तो कर दी थी। अरे वर्क़[1] की तबदीली करने का ख़याल ज़रूर रखिएगा। लाहौर वाले और तो सब पसंद करते हैं सिर्फ़ यही शिकायत उन्हें भी है।

मज़मून अभी साफ़ नहीं हो सका। अपना नाविल हिन्दी में लिख रहा हूँ। फ़ुरसत नहीं मिलती। न कोई तातील ही पड़ती है। मगर आज इरादा करता हूँ कि साफ़ करने में हाथ लगा दूँ।

हिसाब अभी तक जनाब इशारा साहब ने नहीं भेजा।

प्रेम पचीसी का दूसरा एडीशन लाहौर आ रहा है। आप पब्लिशर बनना पसन्द ही नहीं करते इस वजह से मजबूरी है। मैं ख़ुद पब्लिशर बनने का दर्द सर नहीं चाहता। मुझे दूसरे एडीशन के दो सौ रुपये मिल जायेंगे। × में मिल जायेंगी जो शायद लागत से ज़्यादा नहीं। उम्मीद है कि आपकी तबीयत अब अच्छी होगी।

अज़ीज़ बाबू बिशन नारायण को भी आशीर्वाद। ज़्यादा वस्सलाम।

आपका
धनपत राय

७५

तिथि नहीं
अनुमानतः मार्च १९१८

भाई साहब

तसलीम। एक कार्ड भेज चुका हूँ। आज यह क़िस्सा इरसाले ख़िदमत है।

आप के ख़त को पढ़कर निहायत अफ़सोस हुआ। मुझे आप से कमाल हमदर्दी है। काश मुझसे कुछ मदद हो सकती।

राजा धर्म बहादुर को सवानेहउमरी लिखी है। कल परसों तक पूरी हो जायगी। साफ़ न करूँगा क्योंकि कई दिन की देर हो जायगी। फ़रवरी के 'ज़माना' में तसहीह की बहुत ज़रूरत है।

मेरे मज़मून के आजकल बहुत चोर हो रहे हैं। मुमकिन है आप को ज़्यादा नज़र आते हों। मुझे 'शिवशम्भु' देखने का मौक़ा मिला। उसे गौरीशंकर लाल अख़्तर निकालते हैं। हज़रत ने मेरी हकायत के पूरे पूरे पैराग्राफ़ नक़ल कर लिये हैं। जनवरी फ़रवरी मार्च तीनों नम्बरों में यही हाल है। अटपटांग क़िस्सा

[1] आवरण-पृष्ठ

लिखकर उसे शर्तों[1] के लिबास से बचाने की कोशिश की है। ज़माने के ज़खीरा में 'परीख़ुफ़्ता' एक किस्सा है। लखनऊ के एक साहब ने लिखा है। इसे पढ़िये और मेरा क़िस्सा 'मनावन' पढ़िये साफ़ चर्बा मालूम होगा। सिर्फ़ जुज़इयात[2] में रद्दोबदल कर लिया गया है। लिबास पर गौर न डाला जाये और मज़मूननिगार बनने का खब्त या जुनून सवार।

घोटक की शादी के दो एक जगह से तज़किरे हो रहे हैं। शायद तातील में हो जाये।

गर्मी सख्त पड़ रही है।

'प्रेम पचीसी' का इश्तहार अबकी 'ज़माना' में भी नहीं है। क्यों? क्या वक़्त से ज़्यादा जिल्दें फ़रोख्त हो गयीं?

कहिये तो इन चोरियों पर एक छोटा सा तिब्सरा लिखूं? यह इनायत बिल[3] होगी। कृपा करें।

शाकिर का पता नहीं है। मालूम नहीं इस दुनिया में है या उस दुनिया में।

मैं कानपुर २ मई तक शायद आ जाऊँ। और दो-एक रोज़ आपसे सोहबत उठाऊँगा।

बाक़ी सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपतराय

७६

गोरखपुर
अप्रैल १९१८

भाईजान

कल आपका लिफ़ाफ़ा मिला। मिस्टर अब्दुल्ला की राय पर अमल करूँगा हालांकि Supernatural element इन्सान की ज़िन्दगी में दाखिल है।

प्रेमपचीसी की इशाअत[4] के लिए आपने जो सूरत सोची है उससे जल्द मुत्तला कीजिए। ऐसा न हो कि मैं पायमाल[5] हो जाऊँ। मैं हर तरह से राज़ी हूँ।

नाविल के लिए मेरी राय में लाहौर ही बेहतर रहेगा। वहाँ से मुझे कुछ नक़द मिल जायेगा जिसकी मुझे ज़रूरत है। आप क्या कहते हैं ज़िन्दगी की उम्मीद यहाँ भी कम है। मगर यह चाहता हूँ कि या तो छाप डालें या क़तई[6]

---

१ चोरी २ छोटी-छोटी बातें ३ [illegible] ४ प्रकाशन ५ [illegible] ६ [illegible]

सी तकरीम[1] व तावार[2] हो। मैं आपका पेशरौ बनना चाहता हूँ। मौत की फ़िक्र मारे डालती है। कितना चाहता हूँ कि परमात्मा पर भरोसा रखूँ मगर दिल मुत्ती है, समझता नहीं। किसी महात्मा की सोहबत मिले तो शायद रास्ते पर आये। यही फ़िक्र है कि मैं आज मर जाऊँ तो इन बाल-बच्चों का पुरसानेहाल कौन होगा। घर में कोई ऐसा नहीं। बालक से कोई उम्मीद नहीं रही। दोस्तों में अगर हैं तो आप और नहीं हैं तो आप। और न होगा तो मेरे बाद साल दो साल इन बेकसों की ख़बर तो ले सकते हैं। इसी फ़िक्र में घुला जाता हूँ। कुछ सरमाया जमा करने की कोशिश करता हूँ मगर कामयाबी नहीं होती। कभी किसी दुकान की कभी किसी दूसरे कारोबार की नीयत बाँधता हूँ।

ज़माना का सिलसिला मैं भी कायम रखना चाहता हूँ मगर यह भी चाहता हूँ कि मेरे और आपके दरमियान ख़ालिस बरादराना बर्ताव हो। इसमें मैं अदना[3] और आला[4] की हिमाक़त से बेलौस[5] चाहता हूँ। और जब आपकी तरफ़ से दीन देखता हूँ तो मायूस हो जाता हूँ और हैरान होता हूँ कि अब कौन-सा दरवाज़ा खटखटाऊँ।

यह मज़मून जा रहा है। पसंद हो तो लिखिएगा। महज़ [illegible] यही नहीं चाहता कि ज़माना में छपे बल्कि आपको पसंद भी हो।

प्रेम बत्तीसी के मुसव्वदे आप मुझसे क्या माँगते हैं। वह तो आपके क़ब्ज़ा में है। हाँ दस-पाँच क़िस्से जो मेरे दूसरी जगह छपे हैं वह बवक़्त ज़रूरत मैं मुहय्या कर दूँगा। मगर मैं आपकी तजवीज़े इशाअत का मुन्तज़िर हूँ। मुफ़स्सल लिखिएगा।

हाँ प्रेम पचीसी हिस्सा दोम की पाँच जिल्दें बवापसी डाक बज़रिये बिल बज़र भिजवा दीजिएगा। कई दोस्तों को देना है।

वस्सलाम

धनपत राय

७७

बनारस

२ जून १९१८

भाईजान

तसलीम। आपके दो कार्ड मिले। आपको शिफ़ा[6] हुई इस ख़बर से निहायत तस्कीन हुई। मैं २९ मई को शादी से फ़राग़त पा गया। अभी दो एक रोज़ की

१-२ हेर-फेर, माल सौदा ३ छोटा ४ बड़ा ५ [illegible] ६ रोग से मुक्ति

भारी भाव में कम है। मुंशी गोरखप्रसाद साहब मरहूम की मसनवी 'हुस्ने फ़ितरत' के मुतालिक़ आपने क्या फ़ैसला फ़रमाया है। जल्द मुत्तिला फ़रमाइए। उम्मीद है कि अब अहबाब खुश-ओ-खुर्रम होंगे। यहाँ सब परमात्मा का फ़ज़्ल-ओ-करम[1] है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१२१

गोरखपुर
२ अप्रैल १९२०

भाई साहब

तसलीम। ग़ालिबन् अब आपको डिस्ट्रिक्ट कान्फ्रेंस की मसरूफ़ियत[2] से निजात हो गयी होगी। मैं आप और मिस्टर नारायण प्रसाद निगम की सलामतरवी[3] का क़ायल हूँ। आपको दाद देता हूँ।

इसके क़ब्ल दो चिट्ठियाँ लिख चुका हूँ। मसनवी 'हुस्ने फ़ितरत' के मुतालिक़ आपने क्या फ़ैसला किया है। अगर उसकी इशाअत मंज़ूर न हो तो बराहे करम उसे मिस्टर रघुपति सहाय अस्मी भवन गोरखपुर के पते से वापस फ़रमा दें। मेरा मदरसा १ मई को बंद होगा। इरादा करता हूँ कि कानपुर न आकर निजात हासिल करूँ लेकिन इसके क़ब्ल एक माह तक अपीलेन्ट रहना ज़रूर है। प्रेम-बत्तीसी की तैयारी में अब कितनी देर है? कितने फ़र्में छप चुके हैं? बराहे करम जवाबे ख़त से मुमताज़[4] फ़रमायें। मैं १ को यहाँ से चला जाऊँगा। अगर जवाबे ख़त में देर हो तो मेरा पता नोट फ़रमा लें

डाकख़ाना रामपुर
गाँव रामपुर
ज़िला आज़मगढ़

मैं १ मई तक इस मौज़े में रहूँगा। उम्मीद कि आप मय अहबाब खुश होंगे।

मुहक़्क़र
धनपत राय

---

१ कृपा २ व्यस्तता ३ अपने देख-भाल रखना ४ सम्मानित

१२२

देहरादून

९ जून १९२०

भाईजान

तसलीम। आज कई दिन के बाद आपको खत लिखने बैठा हूँ। मुआफ़ कीजिएगा। मैं हरद्वार कनखल ऋषीकेश वगैरह होता हुआ आज देहरादून आ गया और बहुत जल्द यहाँ से भागने का क़स्द रखता हूँ। मेरी तबीयत दौराने सफ़र में ज्यादा खराब हो गयी। बजाय इसके कि आबहवा की तबदील से कुछ फ़ायदा होता उल्टा और नुक़सान हुआ। मुझे यहाँ यह तजरबा हुआ कि बग़ैर मुलाज़िम के सख्त तकलीफ़ होती है। हरद्वार और कनखल और ऋषीकेश में बहुत अच्छे-अच्छे धर्मशाले मौजूद हैं। वहाँ आप बहुत आराम से रह सकते हैं लेकिन अपना आदमी साथ रहना ज़रूरी है वर्ना तकलीफ़ होने लगती है। खाना बाज़ार से भी हो सकता है लेकिन बहुत मामूली। रोटी और दाल कोई एक तरकारी खर्च ज्यादा नहीं। चार आने में सेर हो सकते हैं। यहाँ देहरादून में भी वही आदमी की ज़रूरत महसूस हो रही है। अगर मसूरात[1] के साथ हरद्वार का सफ़र कीजिए तो खास लुत्फ़ आये। हरद्वार निहायत पुरलुत्फ़ और पुरफ़िज़ा जगह है। और तो कोई खास अम्र नहीं। मैं दो तीन दिन में यहाँ से देहली आगरा होता हुआ जल्द ही वापस आ जाऊँगा। सख्त तकलीफ़ हो रही है।

वस्सलाम

धनपत राय

१२३

गोरखपुर

२९ जून १९२

भाईजान

तसलीम। मालूम नहीं मैंने आपको कोई खत लिखा या नहीं। यहाँ ४ को आ गया और आते ही सबसे छोटा बच्चा बीमार हो गया। आजकल इसी परीशानी में हूँ। मज़मून नातमाम पड़ा हुआ है। मेरी तबीयत भी ज्यों की त्यों है। इस नयी मुसीबत से ख़लासी हो तो अपनी फ़िक्र करूँ। उम्मीद है कि आप मय बाल-बच्चों के खुश होंगे।

पानी खूब बरसा है।

वस्सलाम

धनपत राय

---

१ स्त्री, औरतें

१२४

गोरखपुर
५ जुलाई १९२०

भाईजान

तसलीम। कल कार्ड मिला। दोनों कामयाबियों की खबर सुनकर बहुत खुशी हुई। शंभू तो मेरा शागिर्द ही था।

आज रात को मुझ पर एक सानिहा[1] गुजरा। गरीब मुन्नू मेरा छोटा बच्चा इलाहाबाद से आकर चेचक में मुब्तिला हो गया था। उसने नौ दिन तक गरीब को घुला घुलाकर आखिर जान ही लेकर छोड़ा। तकदीर ने तो अपनी दानिस्त[2] में मुझे सजा दी होगी लेकिन मैं खुश हूँ कि फ़िक्रों का आधा बोझ सर से दूर हो गया।

उम्मीद है कि आप खुश होंगे। अब मुझे यहीं मरने दीजिए। इसी मौसम में।

आपका
धनपत राय

१२५

गोरखपुर
१२ अगस्त १९२०

भाईजान

तसलीम। क्या ईश्वर के साथ अहबाब भी मुझसे रूठ जाएँगे। दो महीने के करीब होने आये हैं और आपने एक खत तक न लिखा। इस मसरूफियत[3] की भी कोई इन्तहा है।

अभी तक मेरी सेहत इस काबिल नहीं हुई कि कुछ लिटरेरी काम कर सकूँ। मगर पहले से कुछ बेहतर जरूर हूँ। आपके लिए जो किस्सा शुरू किया था वह नातमाम पड़ा हुआ है। ईश्वर ने चाहा तो जल्द ही खत्म करके भेजूँगा। बलीमी का क्या हाल है? कुछ और आगे बढ़े? जरा जनाब मैनेजर साहब का हफ्ते में दो एक बार खटखटाइएगा तो शायद वह इसी साल के अन्दर निकल सके वर्ना खाक है। और तो कोई हाल ताजा नहीं है। आजकल मामू साहब का कुनबा भी यहीं आया है और छोटे भाई का भी। घर में चहल-पहल है।

वस्सलाम

धनपत राय

---

१ विपत्ति घटना २ समझ ३ व्यस्तता

१२६

नार्मल स्कूल, गोरखपुर
६ अगस्त १९२

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए कार्ड मिला था। आपका पता आज किसी वजह से मुझे नहीं मिला। शिकायत की मुआफ़ी का तालिब।

प्रेम बत्तीसी हिस्सा दोम छप गयी। मेरे पास एक जिल्द आ भी गयी। अब फ़रमाइए क्या हो। वह हिस्सा अव्वल तलब कर रहे हैं। उसके बगैर उन्हें इश्तहार देने में तामुल[1] है। बराहे करम मुत्तिला फ़रमाइए कि अभी हिस्सा अव्वल के कुल कितने फ़ार्म बाकी हैं। मैं लाहौर वालों से सख्त नादिम[2] हूँ। मैं बराबर उनसे ताकीद करता रहा इस उम्मीद में कि हिस्सा अव्वल पहले तैयार हो जायेगा। मगर अब शिकस्त[3] उठानी पड़ रही है। क्या अभी मुमकिन है कि किताब सितंबर के महीने में मुकम्मल हो जाये। वापसी जवाब से मसरूर फ़रमाइए। उम्मीद है कि आप मय बाल-बच्चों के खुश होंगे।

वस्सलाम

धनपत राय

१२७

गोरखपुर
२१ सितम्बर १९२

भाईजान

तसलीम। खत मिला। हालात मालूम हुए। मैं आजकल एम० ए० के लिए तैयार हो रहा हूँ। सेहत भी अच्छी नहीं है। इस वजह से काम भी बहुत कम हो गया है। प्रेम बत्तीसी के लिए चश्म बराह[4] हूँ। प्रेस के मुताल्लिक मैं क्या लिखूँ। महताब राय आजकल ही में एक प्रेस से मामला कर रहे हैं। जिस प्रेस में वह हैं वह बिक रहा है। उनका इरादा है कि नये खरीदारों के साथ शरीक हो जायें। मैंने उन्हें आपकी तजवीज़ लिख भेजी है। अगर कानपुर आने पर मामला तय हो जाये तो आपको इत्तला दूँ। प्रेस की क्या कीमत है? कितने रुपये की ज़रूरत है? यह अब आपने कुछ न लिखा। टाटा शुगर के हिस्सों में आपका कुछ लिया था नहीं? रीटन मिल के हिस्सों का क्या हश्र हुआ?

---

१ संकोच, आपत्ति २ लज्जित ३ विफलता, झेंप ४ आँख बिछाये

और सब खैरियत है। उम्मीद है कि आप बाल-बच्चों के साथ खैरियत से होंगे। मेरे लिये बराये खुदा अब कोई दुआ न करें। किस्सी बरसे मुर्दा दंबूरा ही जियेगा।

आपके यहाँ 1 Deighton's Antony and Cleopatra
2 Much Ado About Nothing
तो नहीं है। अगर हों तो मेरे पास भेज दीजिये पढ़कर वापस कर दूँगा।

जवाब से जल्द सरफ़राज़ फरमाएँ। 'कहकशाँ' शामिले-ग़म हो रहा है। ख़सारा[1] बहुत हुआ।

आपका
धनपत राय

१२८

गोरखपुर
२ अक्तूबर १९२

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। मशकूर हूँ। किताबें मैंने मंगवा ली। अब आप तरद्दुद न फ़रमायें। 'बत्तीसी' आप के यहाँ पहुँची या नहीं? मुत्तला कीजिये तो यहाँ से भेज दूँ। आप के ज़माना साहब ऊटपटाँग जवाब देते हैं। कैसी मज़ामीन की फ़ेहरिस्त? और कहाँ दफ़्तरी चिपकायेगा? मेरी समझ में नहीं आता। 'बत्तीसी' २१२ सफ़हात पर ख़त्म हुई है। काग़ज़ अच्छा है। किताबत मअक़ूलता ज़रा खफ़ी[2] है। मगर और जली[3] होती तो नाम ज़्यादा होता। हिस्सा अव्वल की भी यही क़ीमत रक्खी जायगी। हाँ बढ़िया काग़ज़ वाली किताबों के १।) रक्खे जावें। अब कितने फ़ार्म बाक़ी हैं इसका मुफ़स्सल जवाब चाहता हूँ। इस माह में किताब तैयार होगी?

'ज़माना' के लिये मज़ामीन लिखूँगा और ज़रूर लिखूँगा। अक्तूबर ही में इंशाअल्लाह एक किस्सा हाज़िरे ख़िदमत होगा। अब 'कहकशाँ' तो रहा नहीं 'ज़माना' है और मुझसे उम्मीद'।

मैंने कलकत्ते के प्रेस में १।२ का मामला कर लिया। २) देने पड़ेंगे। इस वक्त अगर आप की माली हालत ख़राब न हो तो आप कुछ मेरी इमदाद फ़र्माइये। मुझे इस वक्त २) की सख़्त ज़रूरत है। यह रकम मुझे बतौर क़र्ज़ दे सकें तो ऐन एहसान समझूँगा। 'बत्तीसी' हिस्सा अव्वल छप जाने के बाद जब हिसाब-किताब हो जायेगा तो मुझे मालूम हो जायेगा कि मैं कितने का देन

१ घाटा २ महीन ज़्यादा बारीक ३ मोटे ज़्यादा साफ़

चार हूँ। किताब की बिक्री में आप २०) वसूल करके तब मुझे दीजियेगा। मगर अब की कमीशन मैं १० फीसदी से ज्यादा न दे सकूँगा। हाँ अगर आप १ जिल्दें दोनों हिस्सों की खरीद लें तो ४ फीसदी कमीशन ले लीजिए। इस तरह आपको २२) में १ •) की किताबें मिल जायेंगी। बहरहाल किसी तरीके से इसके २) या इससे कुछ ज्यादा जरूर भेजिये क्योंकि दशहरे तक मुझे ४ •) की फ़िक्र जरूर करना है। तंगदस्ती के हीलों की यहाँ समाअत[1] न होगी। और न आप का अपने रुपयों के मुताल्लिक कोई खतरा है। ज्यादा से ज्यादा सूद का नुकसान। जवाब में जल्दी सरफराज फ़रमाइये कि किस तारीख तक रजिस्ट्री बीमा का इन्तजार करूँ।

वस्सलाम

धनपत राय

१२६

गोरखपुर

२० अक्तूबर १९२०

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। बवालमी जवाब लिख रहा हूँ। अब आप चेक न भेजें क्योंकि कलकत्ते में ताम्हा करने का इरादा फ़िस्ख हो गया है। १२) भेज चुका था मगर बाद को ऐसी बातें हुईं जिससे यह तजवीज तर्क करनी पड़ी। तफ़सीली मुलाक़ात पर मुफ़स्सल बयान करूँगा। अब आप ही की सलाह पक्की रही यानी बनारस इलाहाबाद या कानपुर में प्रेस। दीक्षित यहाँ आ गए हैं और अब शायद कलकत्ते न जायें। बनारस में उन्हें ७) की पोस्ट ज्ञानमंडलवालों ने आफ़र की है। वहीं जाते हुए हैं। लेकिन कल मैंने 'प्रताप' में नाइट प्रेस कानपुर के फ़रोख्त होने का इश्तहार देखा। क्यों न हम और आप मिल कर इस प्रेस को ले लें। मेरे पास ८ •) है। मुमकिन है फ़िक्र करने से कुछ और बहम[2] पहुँच जाये। अगर आप को यह प्रस्ताव काम का और चलता हुआ मालूम हो तो इससे मुत्तला कीजिये और कीमत वगैरह तय फ़रमाइये। तब मुझे नोटिस दीजिये ताकि मैं भी आ जाऊँ और मुआमला तय हो जाय। तब दीक्षित को कानपुर छोड़ दूँ। वह मैनेजर रहें और आप सुपरवाइज़र, मगर पार्टनरशिप। बीस में आने ही यह काम आपको मिलेगा। मैं तीन-चार दिन में जवाब का इन्तजार करूँगा।

वस्सलाम

धनपत राय

---

1 सुनवाई 2 मिल जाये

और सब खैरियत है। उम्मीद है कि आप बाल-बच्चों के साथ खैरियत से होंगे। मेरे लिये बराये खुदा अब कोई दुआ न करें। जिस्मी बक्से मुर्दा ढूँढ़ा ही जियेगा।

आपके यहाँ 1 Deighton's Antony and Cleopatra
2 Much Ado About Nothlng

तो नहीं है। अगर हों तो मेरे पास भेज दीजिये पढ़कर वापस कर दूँगा।

जवाब से जल्द सरफ़राज़ फरमाएँ। 'कहकशाँ' ग़ालिबन् बन्द हो रहा है। खसारा[1] बहुत हुआ।

आपका
धनपत राय

१२८

गोरखपुर
१ अक्तूबर १९१९

माईडियर

तसलीम। कार्ड मिला। मशकूर हूँ। किताबें मैंने मँगवा ली। अब आप तरद्दुद न फ़रमायें। 'बत्तीसी' आप के यहाँ पहुँची या नहीं? मुत्तला कीजिये तो यहाँ से भेज दूँ। आप के ज़्यादा साहब उल्टपटांग जवाब देते हैं। कसी मज़ामीन की फ़ेहरिस्त? और कहाँ बक़ाया चिपकायेगा? मेरी समझ में नहीं आता। 'बत्तीसी' २१२ सफ़्हात पर ख़त्म हुई है। काग़ज़ अच्छा है। किताबत अलबत्ता ज़रा कच्ची[2] है। मगर और कभी[3] होती तो दाम ज़्यादा होता। हिस्सा अव्वल की भी यही क़ीमत रक्खी जायगी। हाँ बढ़िया काग़ज़ वाली किताबों के १।) रक्खे जायें। अब कितने फ़र्मे बाक़ी हैं इसका मुफ़स्सल जवाब चाहता हूँ। इस माह में किताब तैयार होगी?

'ज़माना' के लिये मज़ामीन लिखूँगा और ज़रूर लिखूँगा। अक्तूबर ही में इंशाअल्लाह एक क़िस्सा हाज़िरे ख़िदमत होगा। अब 'कहकशाँ' तो रहा नहीं 'ज़माना' है और मुझे उम्मीद'।

मैंने कलकत्ते के प्रेस में १।२ का मामला कर लिया। ५०) देने पड़ेंगे। इस वक्त अगर आप की माली हालत ख़राब न हो तो आप कुछ मेरी एआनत फ़र्माइये। मुझे इस वक्त २) की सख़्त ज़रूरत है। यह रकम मुझे बग़ैर सूद दे सकें तो ऐन एहसान समझूँगा। 'बत्तीसी' हिस्सा अव्वल छप जाने के बाद जब हिसाब-किताब हो जायेगा तो मुझे मालूम हो जायेगा कि मैं कितने का देन

---

१ घाटा २ अर्थात् कच्ची कापी ३ थोड़े कच्ची कापी

वार हूँ। किताब की बिक्री में आप ५) वसूल करके तब मुझे दीजियेगा। मगर अब की कमीशन में १) फ़ीसदी से ज़्यादा न दे सकूँगा। हाँ अगर आप १) जिल्दें दोनों हिस्सों की ख़रीद लें तो ४ फ़ीसदी कमीशन ले लीजिए। इस तरह आपको २२) में १) की किताबें मिल जायेंगी। बहरहाल किसी तरीक़े से मुझे २) या इससे कुछ ज़्यादा ज़रूर भेजिये क्योंकि दसहरे तक मुझे ४०) की फ़िक्र ज़रूर करना है। तंगदस्ती के हाथों की यह सब आफ़तें न होतीं। और न आप को अपने रुपयों के मुताल्लिक़ कोई ख़तरा है। ज़्यादा से ज़्यादा शुक्र का मुश्ताक़। जवाब से जल्दी सरफ़राज़ फ़रमाइये कि किस तारीख़ तक रजिस्ट्री बीमा का इन्तज़ार करूँ।

वस्सलाम

धनपत राय

१२६

गोरखपुर

२ अक्तूबर १९२०

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। जवाबी जवाब लिख रहा हूँ। अब आप चेक न भेजें क्योंकि कलकत्ता में साझा करने का इरादा फ़स्ख़ हो गया है। १२०) मेरा पूरा था लेकिन बाद ऐसी बातें हुईं जिनसे यह तजवीज़ तर्क करनी पड़ी। बरवक़्ते मुलाक़ात मुफ़स्सल बयान करूँगा। अब आप ही की सलाह पक्की रही यानी बनारस, इलाहाबाद या कानपुर में प्रेस। घाटक यहाँ आ गए हैं और अब ग़ालिबन कलकत्ता न जायेंगे। बनारस में उन्हें ७) की पोस्ट ज्ञानमंडलवालों ने आफ़र की है। वहीं गये हुए हैं। लेकिन कल मैंने प्रताप में लाइट प्रेस कानपुर, के फ़रोख़्त होने का इश्तहार देखा। क्यों न हम और आप मिल कर इस प्रेस को ले लें। मेरे पास ४) हैं। मुमकिन है फ़िक्र करने से कुछ और रक़म पहुँच जाय। अगर आप को यह प्रेस काम का और चलता हुआ मालूम हो तो उससे ख़तो-किताबत कीजिये और क़ीमत वग़ैरह तय फ़रमाइये। तब मुझे नोटिस दीजिये ताकि मैं भी आ जाऊँ और मुआमला पक्का हो जाय। अब घाटक को कानपुर भेजता हूँ। वह मैनेजर रहें और आप सुपरवाइज़र, मगर आनरेरी। घाटा न आने ही यह काम आपको मिलेगा। मैं तीन चार दिन में जवाब का इन्तज़ार करूँगा।

वस्सलाम

धनपत राय

मुकर्रर १. लिख चुके

१३०

गोरखपुर

१ अक्तूबर १६२

भाईजान

तसलीम। खत का अभी तक इन्तजार कर रहा हूँ। प्रेम बत्तीसी अब और कितनी बाकी है। हिस्सा दोम की कुछ जिल्दें निकल भी गयीं और हिस्सा अव्वल अभी तक पड़ा हुआ है। अक्तूबर भी खत्म हुआ। अब ऐसी हालत में आप मुझे प्रेम पचीसी के दूसरे एडीशन को मासिवा कानपुर में छपवाने की हरगिज इजाजत न देंगे। मैं इसे भी लाहौर से निकलवाऊँगा।

'रूहे हयात' इरसाले खिदमत है। हरचन्द कोशिश की कि किस्सा बन जाय लेकिन न बन सका। इसके बाद जो किस्सा आपके पास पहुँचेगा वह सच्चे मानों में किस्सा होगा। यह तो एक ख्याल ही है।

बरादरे अजीज घोटक ने ज्ञानमण्डल में सत्तर रुपये की नौकरी कर ली। कलकत्ते से इस्तीफा दिया। परसों यहाँ से जायेंगे। हाँ अगर हम लोगों का मुआमला कानपुर में कुछ तै हो जायगा तो बुला लिये जायेंगे। बशर्ते कि हम उन्हें इतनी ही तनख्वाह दे सकें। आपको अभी तक शायद लाइट प्रेस की तरफ जाने की मोहलत न मिली। कहीं से थोड़ा सा वक्त निकाल लीजिए।

और तो कोई ताजा हाल नहीं है। प्रेम बत्तीसी का हर रोज इन्तजार है।

आपका

धनपत राय

१३१

गोरखपुर

१२ नवम्बर १९२०

भाईजान

तसलीम। खत मिला। प्रेम बत्तीसी छप गयी बड़ी खुशी की बात है। अब टाइटिल छप जाये और किताब मेरे सामने आ जाये तो पूरी खुशी हो। प्रेम पचीसी का फैसला फिर होगा। अगर अपना प्रेस हो गया तो कोई बात ही नहीं। वहीं छपेगी। लाइट प्रेस के मुताल्लिक आपने कोई फैसला नहीं किया। जब मालिके प्रेस से मुलाकात ही नहीं हो सकी तो आप बजुज़[1] प्रेस देख आने के और कर ही क्या सकते थे। इसकी कीमत वगैरह का फैसला हो जाय तब मैनेजर का

---

१ सिवाय

मसला है हो। इसका कोई मैनेजर तो होगा ही। मालूम नहीं क्या तनख्वाह पाता है। घोटक को ज्ञानमण्डल से हटा लेना मुनासिब नहीं है। कुछ दिनों तक हम दूसरों के सहारे काम करना पड़ेगा। हमारे शरीक क्या बाबू रामभरोसे भी रहेंगे। प्रेस की मालियत और आनेवाले मसारिफ़[1] का अंदाज़ा करके मुझे मुत्तला फ़रमाइएगा। तब मैं भी आने की कोशिश करूँगा।

मज़मून आज की डाक से रवाना करता हूँ। हिन्दी में छप चुका है। शायद वालों का सख्त तकाज़ा था। मगर अब वहाँ जवाब लिख दूँगा। आप उसे शाया कर दें।

बच्चियाँ सब ख़ैरियत हैं। मेरी सेहत बदस्तूर चली जाती है। बहुत कम काम करता हूँ। एम ए का इरादा तक कर दिया। चालीस-पचास रुपये किताबों में सर्फ़ हुए। कुछ सेल्फ़ पर देख लिया तस्कीन हो गयी। वस्सलाम

धनपत राय

आपके छोटे भाई का सानिहा सुनकर सख्त रंज हुआ। ज़िन्दगी मुद्दत के बाद यह दिन देखना नसीब हुआ था। वह भी आसमान से न देखा गया। ग़रीब माँ के दिल से कोई इस दर्द को पूछे। परमात्मा उन्हें सब्र दे।

१३२

गोरखपुर
१ दिसम्बर १९२

भाईजान

तसलीम। अर्से से कोई ख़त नहीं आया। लाइट प्रेस का मुआमला इल्तिवा[2] में पड़ गया। ख़ैर जाने दीजिए। प्रेम बत्तीसी का टाइटिल अभी लगाया नहीं। अब तो लिल्लाह[3] देर न कीजिए। जैसा कागज़ दस्तयाब[4] हो लेकर किताब निकाल दीजिए। लाहौर से तबादला हो जाये तो दो चार जिल्दें इधर-उधर रिव्यू के लिए भेजी जायें। मेरा मशवरा है कि लीडर में एक छोटा सा नोटिस दे दिया जाय। शायद कुछ फ़ायदा हो जाये। मुकम्मल हिसाब से मुझे जल्द मुत्तला कीजिए। मज़मून पहुँचा होगा।

वस्सलाम

धनपत राय

१ ख़र्चे २ मुल्तवी हो जाना ३ ख़ुदा के वास्ते ४ मिले

गोरखपुर
११ दिसम्बर १९२०

भाईजान

तसलीम। आपका इनायतनामा मिला। बड़े मशकूर। दीगर उमूर[1] का जवाब फ़ौरन सोचकर दूँगा। मेरी सेहत ऐसी नहीं है कि अखबारी काम का बार[2] ले सकूँ। इस ख्याल से मैंने एम ए का इरादा तर्क कर दिया है। रहा टाइटिल। आपको बाजार में जैसा कागज मिले अच्छा सुर्ख बढ़िया बढ़िया ब्राउन काला पीला नीला सब्ज सुर्ख मार्बली लेकिन टाइटिल पेज छपवा दीजिए और किताब की दो सौ जिल्दें (किस्म अव्वल ५ किस्म दोम १) लाहौर भिजवा दीजिए। जाड़े के मौसम में भिजवाने से किताबें बहिफ़ाज़त पहुँच जायेंगी। लाहौर वालों के तक़ाज़ों ने मेरा नाक में दम कर रखा है। बोरे में न भिजवायें वर्ना बहुत सी किताबें खराब हो जायेंगी।

और सब खैरियत है। मुफ़स्सल ख़त कल लिखूँगा। इतवार है। इत्मीनान रहेगा। प्रेस का ख़्याल अब शायद गया। मैंने गवर्नमेण्ट के कागज़ात में रुपये लगा दिये। अब बीस रुपये माहवार घर बैठे मिल जायेंगे। रुपयों का अन्देशा नहीं।

वस्सलाम

धनपत राय

१३३

गोरखपुर
२९ दिसम्बर १९२

भाईजान

तसलीम। नौरोज़ मुबारक। कई दिन से नाक़ाबिल बीमार हूँ। दस्तों ने दिक कर रखा है। प्रेम बत्तीसी निकल गयी। निहायत खुश हुआ। लाहौर जिल्दें भिजवाने के लिये मालगाड़ी खुलने का इंतज़ार करना ही मुनासिब होगा। पारसल से महसूल और दीगर मसारिफ़[3] बहुत पड़ेंगे। वहाँ से हिस्सा दोम की ४ जिल्दें भेजने के लिए लिखता हूँ। अनक़रीब आ जायेंगी। बाबू रघुपति सहाय आजकल नागपुर गये हुए हैं। उन्हें मज़ामीन लिखने की अब फ़ुरसत कहाँ। शायद इसे भी नान-कोआपरेशन समझें। बहरहाल पूछूँगा। मिस्टर इक़बाल वर्मा सेहर

१ बाक़ी २ बोझ ३ ख़र्चे

ने अपनी मौसमी वाली नज़्में दीबाचा लिखने के लिए यहाँ भेजी हैं। इरादा था इस तारीख़ में लिख डालता लेकिन दर्दों ने मजबूर कर दिया। आज़ाद मेरे पास बरसों से नहीं आया। अब मिलवायें तो देखूँ। उम्मीद कि आप बख़ैर होंगे।

जनाब मैनेजर साहब से कहिए मुझे प्रेम बत्तीसी वग़ैरह कुल हिसाबात से मुत्तिला करें। मुफ़स्सल हिसाब चाहता हूँ। आमदनी और ख़र्च का ताकि मुझे अपनी पोज़ीशन मालूम हो सके।

आपका
धनपत राय

१३४

गोरखपुर
१ जनवरी १९२१

जनाब भाई साहब

तसलीम। उम्मीद है आप ने मेरे 'हुस्न-कमतरमा' • जिल्दों का पार्सल लाहौर भिजवा दिया होगा। इसका लिहाज़ भी ग़ालिबन रख लिया होगा कि वज़न का महसूल ज़्यादा न देना पड़े ख़्वाह जिल्दों की तादाद में कमी-बेशी कर ली जाय। २० सेर के पार्सल में शायद १ या इस से कुछ कम जिल्दें आ जायें। ५ जिल्दें यहाँ भिजवा दें। इनायत होगी। मैंने लाहौर वालों को भी लिख दिया है। वहाँ से जिल्दें आती होंगी। हिसाब से भी मुत्तला किया जाना चाहता हूँ। एक मज़मून 'ज़माना' के लिए लिख रहा हूँ। ग़ालिबन आप को पसन्द आए। इधर एक ख़ूब लिखता रहा हूँ मगर आख़िरी नहीं। नवम्बर में सम्पादक अबुलहाशिम का मज़मून ख़ूब था। वो रवीन्द्र बाबू के मज़मून से माख़ूज़ है, मगर मॉडर्निज़्म रंग आ गया है। लिखा है। नाविल को हिन्दी कर रहा हूँ। और 'प्रेम बत्तीसी' की फ़िक्र पाए जा रही है। उम्मीद है आप मय तमाम घर के बख़ैरियत होंगे। क्या हम ग़रीबख़ाने[१] को आपके क़दमों की ज़ियारत कभी नसीब न होगी। ग़रीबों से इतनी बे-नियाज़ी। मौक़ा मिले तो दो दिन के लिए चले आइये। रात ही भर का तो सफ़र है। मैं तो अपनी सेहत से लाचार हूँ।

आपका
धनपत राय

---

१ [illegible] २ [illegible]

१३५

गोरखपुर
१८ जनवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। शुक्रिया। बत्तीसी का पैकेट मिला। टाइटिल देखकर रो दिया। बस और क्या लिखूँ। किताब की मिट्टी खराब हो गयी। आपने बेहतर कागज न पाकर यह कागज इस्तेमाल कराया होगा। गालिबन् किताब की तकदीर में इस तरह बिगड़ना लिखा था। खैर, फ़िलहाल चलने दीजिए। लाहौरवालों से कह दूँगा कि वह टाइटिल बदल डालें। आपके यहाँ भी अच्छा कागज मिलते ही टाइटिल बदलना पड़ेगा। कुछ नुकसान होगा मगर गम नहीं। आप माघ में तशरीफ़ लायेंगे। अभी से दिन गिन रहा हूँ। ज़रूर आइए। क़िस्सा तमाम हो गया। साफ करके भेजूँगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१३६

अनुमानतः गोरखपुर,

.. बसीवे दुश्मनाँ कुछ तबीयत तो खराब नहीं हो गयी।

प्रेम बत्तीसी अभी तक तैयार होकर नहीं आयी। बहुत ज्यादा तरद्दुद था और अब उसके तैयार होने की उम्मीद इस भी सात सौ जिल्दें बगैर टाइटिल ही कि लाहौर रवाना फ़रमा दें। वह अपना टाइटिल छपवाकर लगवा लेंगे। उजरत लेंगे। मगर लाहौर भेजिएगा क्योंकर—रेलवार के बक्स सात सौ जिल्दों के भेजने के लिए पाँच बोरे लगेंगे। किताबों अन्दर भर देना जरूरी होगा ताकि किताबें खराब न हों आसानी से दस्तयाब हो जायें और रुपये की बचत ही में भिजवायें। इसमें किताबों के खराब हो जा वहाँ से तीन सौ जिल्दें ही मिलेंगी। मैंने लाहौरवालों को

देने का फ़ैसला कर लिया है और वह राज़ी है। मई तक सब क़ीमत अदा कर देंगे। बाज़ारे हुस्न और हिस्सा दोम अख़लाक़ी के बाबत उन्होंने मेरा मुतालबा[1] बिलकुल बेबाक़ कर दिया है। अब हिस्सा अव्वल के लिए जल्दी कर रहे हैं। पचीसी का हक़्क़े तालीफ़[2] और मेरे नए नाविल का हक़्क़े तालीफ़ भी लेने पर आमादा हैं। मैं ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारी पर छपवाने की बनिस्बत यह मुआमला बेहतर समझता हूँ। और ग़ालिबन् आप भी मुझसे मुत्तफ़िक़ होंगे।

इस ख़त का जवाब बवापसी तहरीर फ़रमाइए। और मुझ पर रहम करके एक रोज़ अपने आदमियों को थोड़ी सी तकलीफ़ देकर किताबें वहाँ भिजवा दीजिए। अगर आपको इसमें ज़्यादा तरद्दुद हो तो मैं ख़ुद आकर इस काम को अंजाम दूँ। हालाँकि मुझे तकलीफ़ बेहद होगी और बेजान हो रहा हूँ। बहरहाल जवाब का सख़्त इंतज़ार है।

ज़ियादा वस्सलाम

नियाज़मन्द
धनपत राय

१३७

गोरखपुर
१५ फ़रवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए जनाब ख़्वाजा साहब से हिसाब मंगा था। मिला। इत्मीनान हो गया। मैं कुछ ज़्यादा मक़रूज़[3] नहीं हूँ। कुछ कम रुपये का मुआमला है। इंशा अल्ला माह दो माह में साफ़ हो जायगा।

मैं अब सरकारी मुलाज़मत से सुबुकदोश हो गया। आज इस्तीफ़ा भी मंज़ूर हो गया। यहाँ से एक हफ़्तेवार उर्दू अख़बार निकालने का क़स्द है। प्रेस भी भी तय्यार है। ग़ालिबन् यहाँ रुपये का भी इंतज़ाम हो जायगा। अर्से से यह ख़याल था। अब इसके पूरा होने के दिन आये। फ़िलहाल शुरू १ली पर्चे से सिलसिला। *दो चार रोज़ में अपने नये इरादा से आपको मुत्तिला करूँगा। क्या कानपुर में* कोई सीधी मशीन मिल सकेगी। अगर मुमकिन हो तो मुत्तिला फ़रमाइए। इसी हीले से ज़रा मुलाक़ात हो जाये। उम्मीद है आप खुश होंगे।

आपका दुआगो
धनपत राय

---

१ माँग २ कापी राइट ३ कर्ज़ में

१३५

गोरखपुर
१८ जनवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। शुक्रिया। बत्तीसी का पैकेट मिला। टाइटिल देखकर रो दिया। बस और क्या लिखूँ। किताब की मिट्टी खराब हो गयी। आपने बेहतर कागज न पाकर यह कागज इस्तेमाल कराया होगा। गालिबन् किताब की तकदीर में इस तरह बिगड़ना लिखा था। और फ़िलहाल चलने दीजिए। लाहौरवालों से कह दूँगा कि वह टाइटिल बदल डालें। आपके यहाँ भी अच्छा कागज मिलते ही टाइटिल बदलना पड़ेगा। कुछ नुकसान होगा मगर ग़म नहीं। आप मार्च में तशरीफ़ लायेंगे। अभी से दिन गिन रहा हूँ। ज़रूर आइए। किस्सा तमाम हो गया। साफ़ करके भेजूँगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१३६

स्थान तिथि नहीं
अनुमानतः गोरखपुर, जनवरी १९२१

...नसीब दुश्मनां कुछ तबीयत तो खराब नहीं हो गयी।

प्रेम बत्तीसी अभी तक तैयार होकर नहीं आयी। टाइटिल पेज में अगर बहुत ज्यादा तरद्दुद हो और जल्द उसके तैयार होने की उम्मीद न हो तो आप उस की सात सौ जिल्दें बगैर टाइटिल ही के लाहौर दफ़्तर कहकशाँ को रवाना फ़रमा दें। वह अपना टाइटिल छपवाकर लगवा लेंगे। ज़रूरतन[1] मुझसे मशवरा[2] कर लेंगे। मगर लाहौर भेजिएगा क्योंकर—देवदार के बक्स में या मामूली बोरों में। सात सौ जिल्दों के भेजने के लिए पाँच बोरे लगेंगे। किताबों के साथ रद्दी कागज अन्दर भर देना ज़रूरी होगा ताकि किताबें खराब न हों। अगर चीड़ के बक्स आसानी से दस्तयाब हो जायें और रुपये दो रुपये से ज्यादा फ़र्क न हो तो आप बक्स ही में भिजवायें। इसमें किताबों के खराब हो जाने का अन्देशा कम है।.... यहाँ से तीन सौ जिल्दें ही मिलेंगी। मैंने लाहौरवालों को चालीस रुपये कमीशन

१ हाजत २ सलाह

देने का फ़ैसला कर लिया है और वह राज़ी है। मई तक सब क़ीमत अदा कर देंगे। आपके हुस्न और हिस्सा दोम कलीमी के बाबत उन्होंने मेरा मतालबा[1] बिलकुल बेबाक कर दिया है। अब हिस्सा अव्वल के लिए जल्दी कर रहे हैं। पचीसी का हक़्क़े तालीफ़[1] और मेरे नये नाविल का हक़्क़े तालीफ़ भी लेने पर आमादा हैं। मैं ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारी पर छपवाने की बनिस्बत यह मुआमला बेहतर समझता हूँ। और ग़ालिबन् आप भी मुझसे मुत्तफ़िक़ होंगे।

इस ख़त का जवाब बवापसी तहरीर फ़रमाइए। और मुझ पर रहम करके एक रोज़ अपने आदमियों को थोड़ी सी तकलीफ़ देकर किताबें वहाँ भिजवा दीजिए। अगर आपको इसमें ज़्यादा तरद्दुद हो तो मैं ख़ुद आकर इस काम को अंजाम दूँ। हालाँकि मुझे तकलीफ़ बेहद होगी और बेकाम हो रहा हूँ। बहरहाल जवाब का सख़्त इंतज़ार है।

ज़ियादा वस्सलाम

नियाज़मन्द
धनपत राय

१३७

गोरखपुर
१५ फ़रवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए जनाब ख़्वाजा साहब ने हिसाब भेजा था। चलो। इत्मीनान हो गया। मैं कुछ ज़्यादा मक़रूज़[1] नहीं हूँ। कुल दस रुपए का मुआमला है। ऐसा अस्सी माह दो माह में साफ़ हो जायगा।

मैं कल सरकारी मुलाज़मत से सुबुकदोश हो गया। आज इस्तीफ़ा भी मंज़ूर हो गया। यहीं से एक हफ़्तेवार उर्दू अख़बार निकालने का क़स्द है। प्रेस भी तलाश है। ग़ालिबन् यहीं रुपए का भी इंतज़ाम हो जायगा। बरसों से यह ख़याल था। अब उसके पूरा होने के दिन आये। फ़िलहाल मुफ़स्सल इसी पत्र से लिखूँगा। दो चार रोज़ में अपने नये हालात से आपको मुत्तला करूँगा। क्या कानपुर में कोई सीधी मशीन मिल सकेगी। अगर मुमकिन हो तो मुत्तला फ़रमाइए। इसी हीले से ज़रा मुलाक़ात हो जाये। उम्मीद है आप ख़ुश होंगे।

आपका मुख़लिस
धनपत राय

---

१ [illegible]

१३८

गोरखपुर
२१ फरवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। ज़माना के कई पर्चों का पैकेट मिला। बेशक इस अखबार ने तरक्क़ी की है और इस पर मैं आपको और नीज़[1] असिस्टेंट एडीटर साहब को मुबारकबाद देता हूँ। इसका दर्जा अब मुल्क के बेहतरीन उर्दू अखबारात में है। ग़ालिबन् इशाअत[2] पर भी कुछ असर ज़रूर पड़ेगा।

प्रेम बत्तीसी हिस्सा दोम की जिल्दें ग़ालिबन् आपके यहाँ पहुँच गयी होंगी। कुछ मालूम नहीं आपके यहाँ से भी बक़िया ५ जिल्दें गयीं या नहीं।

मैंने तर्के मुलाज़िमत कर दी थी। आप मुझे बहुत अर्से से इसकी तहरीक[3] कर रहे थे। हालाँकि यह आपकी तहरीक का असर नहीं है बल्कि रफ़्तारे ज़माना का। मगर किसी तरह अब मैं आज़ाद हो गया। अब बतलाइए क्या करूँ। प्रेस और अखबारनवीसी और क़ुतुबनवीसी के सिवा मैं कोई दूसरा काम करने के क़ाबिल नहीं। कपड़े बुनने के लिए तैयार नहीं। काश्तकारी मेरे किये हो नहीं सकती। क्या आपका इरादा अब भी प्रेस की तरफ़ है। मैं चार पाँच हज़ार का सरमाया और अपना सारा वक़्त आपके नज़्र करने को तैयार हूँ बशर्ते कि आप भी मेरे मुआविन[4] और शरीक हों। मैं अब ज़्यादा तज़बज़ुब[5] में नहीं रहना चाहता। जल्द कोई न कोई फ़ैसला करना चाहता हूँ। मेरे लिए गोरखपुर बनारस और कानपुर तीन मुक़ामात हैं और भी जगह थोड़ी बहुत आसानियाँ हैं लेकिन कानपुर में जितनी आसानी नज़र आती है उतनी और कहीं मिलनी नहीं। मैं एक अच्छा प्रेस उर्दू हिन्दी और अंग्रेज़ी का खोलना चाहता हूँ जो फ़िलहाल महज़ जाब वर्क पर चले। अखबार से उसे कोई ताल्लुक़ न रहे। मैं ज़ाती तौर पर अखबार का काम भी कर सकता हूँ मगर ज़्यादा नहीं। अगर आप चाहें तो दो एक दिन के लिए कानपुर आ जाऊँ और जिन मुनाफ़े[6] उमूर[7] तै हो जायें। शायद प्रेस अभी ग़ालिबन् फ़रोख़्त न हुआ होगा। अगर वह बिक भी गया हो तो कलकत्ते से मशीन और टाइप मँगाया जा सकता है। जेबी प्रेस का इंतज़ाम भी ज़रूरी है ताकि अपने घर के काम के लिए दूसरों का दस्तनिगर न होना पड़े। मैनेजरी का काम हम और आप दोनों मिलकर खूब कर सकते हैं। एडिटरी के काम में भी हत्तुल इमकान आपकी थोड़ी मदद कर सकता हूँ। इस बात के जवाब का मुन्तज़िर हूँ। अगर आपने कुछ तस्मीम न दिखायी तो और कोई

---

१ साथ और २ प्रसार-संख्या ३ प्रेरणा ४ सहयोगी ५ दुविधा ६ लाभप्रद ७ बातें

सबील सोचूँगा। यहाँ मैंने फ़िलहाल एक कपड़े का कारख़ाना खोल रखा है जिसमें आठ करघे चल रहे हैं। कुछ बर्तन वग़ैरह भी बनवाये जा रहे हैं। एक मैनेजर पचीस रुपये माहवार पर रख लिया है। जो उससे मुझे माहवार कुछ न कुछ नफ़ा ज़रूर होगा लेकिन इतना नहीं कि मैं उस पर तकिया कर सकूँ। बावजूद नान-कोआपरेशन करने के अभी तक मैं दौलत की तरफ़ से बिलकुल मुस्तग़नी नहीं हूँ। और मैं ज़ाती तौर पर हो भी जाऊँ लेकिन मेरी बीवी को यक़ीन हो जाये कि अब इसी तरह उसकी ज़िन्दगी बसर होगी तो वह मुझे हरगिज़ मुआफ़ न करेगी।

और क्या अर्ज़ करूँ। आजकल एक देहात में मुक़ीम हूँ। ख़ूब आराम से दिन कट रहे हैं। आज़ादी का लुत्फ़ उठा रहा हूँ। आप तार इस पते पर रवाना फ़रमायें

धनपत राय
मार्फ़त महादेव प्रसाद पोद्दार
उर्दू बाज़ार
गोरखपुर

तालीमी नान-कोआपरेशन के मुताल्लिक़ आपका मालूम नहीं क्या ख़याल है। मैंने इस पर एक मज़मून लिख रखा है। मैं इसकी अपनी अहमियत दिखलानी चाहता हूँ। इसके ग़ैर एक क़िस्सा भी तैयार है। वह भी जल्द ज़माना के नज़्र होगा।

ज़ियादा वस्सलाम

आपका
धनपत राय

१३९

भाईजान

गोरखपुर
७ मई १९२१

तसलीम। कल कार्ड मिला। जो मज़ामीन भेजे थे, ग़ालिबन् पहुँचे होंगे। मैं कानपुर नहीं आ सका। कई दिन से बुख़ार की तकलीफ़ हो रही है। कानपुर में आपने यह नहीं लिखा कि मैं क्या काम करूँगा। महज़ मन मारकर बैठे रहना तो मेरे लिए महबूस-सा मालूम होता है। मैनेजरी करने की मुझमें लियाक़त नहीं।

---

१ जिल्द

अख़बार का काम कर सकता हूँ लेकिन उसकी सूरत क्या है? इसके मुक़ाबले में तो मुझे यही ज़्यादा मुनासिब मालूम होता है कि यहीं से एक अच्छा उर्दू अख़बार निकालूँ। मैं दो चार दिन में प्रेस वग़ैरह की फ़िक्र में कानपुर आऊँगा। लखनऊ दो एक दिन ठहरूँगा और प्रेस मिलते ही अख़बार का डिक्लेरेशन दिया जायगा। काम ही तो करना चाहिए, क्या कानपुर और क्या गोरखपुर। रोज़ी यहाँ भी है और वहाँ भी है। दौलत की हवस नहीं।

और ज़्यादा क्या लिखूँ। बवक़्ते मुलाक़ात ख़ूब बातें होंगी।

आपका

धनपत राय

१४०

जाय मस्कन, बनारस सिटी

२१ मार्च १९२१

बरादरम

तसलीम। मैं यहाँ १९ तारीख़ को आ गया और घर पर मुक़ीम[1] हूँ। होली के एक दो दिन बाद कानपुर आने का क़स्द करता हूँ। ज़माना के लिए 'लाल फ़ीता' नाम का एक क़िस्सा लिखा है। उसे भी साथ लेता आऊँगा।

गोरखपुर से उर्दू अख़बार निकालने का इरादा ख़त्म हो गया। वहाँ एक हफ़्तेवार मशरिक़ जो पहले बन्द हो गया था फिर जारी हो गया और उसकी मौजूदगी में किसी दूसरे हफ़्तेवार की जगह नहीं हो सकती। आपके नौजवान दोस्त ग़ालिबन् मेरे तवक़्क़ुफ़[2] से बददिल न हुए होंगे। मैं होली के बाद चलूँगा।

बाक़ी सब ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

१४१

ज्ञानमण्डल, काशी

५ अप्रैल १९२१

भाईजान

तसलीम। मैं नादिम[3] हूँ कि अब तक कानपुर नहीं आ सका। मेरा अख़बार निकालने का मुसम्मम[4] इरादा है बशर्ते कि काफ़ी सरमाया फ़राहम हो जाये

१ स्थित २ देरी ३ लज्जित ४ पक्का

और मददगार काफ़ी मिल जायें।

तो एक रोज़ में ज़रूर आऊँगा। और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है।

आपका
धनपत राय

१४२

भाईजान

बनारस
१४ मई १९२१

तसलीम। बख़ैरियत हूँ। उम्मीद है मकतूब बख़ैर-ओ-ख़ूबी अंजाम पा गया होगा। ख़ुम-ए-तमाकू वाला मज़मून आपने देख लिया या नहीं। अगर देख लिया हो और उसमें कुछ क़ाबिले-एतराज़ न हो तो बराहे करम कातिब को दे दें। वर्ना बैरंग ज्ञानमण्डल के पते से मेरे पास भेज दें। मैंने सार्टीफ़िकेट वग़ैरह महाराज काशीनाथ के पास भेज दिये हैं। अब उनके जवाब का मुन्तज़िर हूँ। सेन बाबू अगर वापस आये हों तो उनसे कहिएगा 'मंजरी' प्रताप के दफ़्तर में महाशय बालकृष्ण शर्मा के पास भिजवा दें। मैं उन्हीं के पास से लाया था। और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है।

एक क़िस्सा तालीफ़-ख़त्म लिखा है। ठाकुरद्वारा का मकान बनना शुरू हुआ या नहीं। मेरा माना आप मुश्तरका[1] समझें अगर महाराज जो हों तो तरफ़ से कोई रुकावट न हुई। ठाकुरद्वारा मिल जाय तो मुझे आपके क़र्ज़[2] के अलावा शिकायत होगी। ज़्यादा वस्सलाम। बच्चों को दुआ।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१४३

भाईजान

बनारस
२७ मई १९२१

तसलीम। आप शायद सीधे मग होंगे। मुझे आज आपके दोनों ख़ुतूत मिले क्योंकि बाबू महताब राय नाना साहब के यहाँ बरेली में बस गये थे और मेरे नाम चिट्ठियाँ न पहुँच सकती थीं। मैं ख़ुद तो अभी कानपुर न आ सकूँगा लेकिन बाज़ार के लिए हुसूल इमारत[3] लिखने की कोशिश करूँगा। अभी इसकी सिहूदत

१ मिलीवत २ मिल्कत ३ बजाज़त

की है कि बैठने की हिम्मत ही नहीं पड़ती। महाशय जी का खत आया था। अनक़रीब वह बाक़ायदा खत भेजनेवाले हैं। शिमले से वहाँ की कार्रवाइयों की खबर देते रहियेगा बशर्ते कि खिलाफ़ वाज़्आ न हो।

वस्सलाम

धनपत राय

१४४

ज्ञानमण्डल, काशी

११ जून १९२१

माईबान

तसलीम। ग़ालिबन् आप शिमले से वापस आ गये होंगे। वहाँ की तरावत ने तो आपको ताज़ा कर दिया होगा। यहाँ तो गर्मी के मारे तबल्लीरें[1] हो रही हैं। न दिन को चैन है न रात को।

तालीमी अदम-ए-तआवुन वाला मज़मून अगर वेद छपे हों तो उसके मुतअल्लिक़ अपने फ़ैसले से मुत्तला कीजिएगा। 'लाल फ़ीता' साफ़ कर रहा हूँ जल्द भेजूँगा। अभी तक महाशय काशीनाथ जी ने मेरे पास प्रश्नोत्तर खत नहीं भेजा। आपके खत से मालूम हुआ था कि जून के पहले ही हफ़्ते में भेज देंगे। आज तो ११ जून आ गयी।

उम्मीद है कि आप मय अयाल खुश होंगे।

नियाज़मन्द

धनपत राय

१४५

बनारस

१९ जून १९२१

माईबान

तसलीम। आपके मुतवातिर तीन कार्ड आये। एक का जवाब दे चुका हूँ। दूसरे का जवाब दे रहा हूँ और तीसरे के जवाब में बनफ़्से नफ़ीस[2] हाज़िर हो जाऊँगा। कल सब तैयारियाँ कर चुका था। इक्का तक मंगवा लिया था (देहात में यह आसान काम नहीं है) लेकिन शाम को पोस्टल भाभा साहब का खत आये कि मैं सोमवार को तुमसे मिलने आ रहा हूँ। इसलिए तूअन् ओ करहन्[3]

---

१ तड़पने की कैफ़ियत २ बज़ाते ३ मजबूरन

रुकना पड़ा। और वही पहली मुहर्रम तारीख मुकर्रर रही। मैं २२ को चलूँगा और २३ को पहुँचूँगा। पहले इरादा था कि अयाल को इलाहाबाद छोड़ दूँ और कानपुर में मकान तय करके लिवा लाऊँ। अब आप फ़रमाते हैं कि मकान भी रोक लिया गया है। यह मुश्किल भी आसान हो गयी। अब मय अयाल के कानपुर आऊँगा। मुमकिन हो सका तो आपको ठीक वक़्त से मुत्तला कर दूँगा। मकान मौजूद ही है। कोई तरद्दुद न होगा। मेरी ज़रूरतों से आप वाक़िफ़ हैं ही लेकिन बफ़रज़ मुहाल अगर मकान मुझे पसंद न भी आया तो फिर दूसरा तलाश करूँगा। हाँ अगर आते ही आते मकान न मिला तो फिर मुझे आपके घर का खाना बेतकल्लुफ़ खाना पड़ेगा। तो एक दिन मस्तूरात[1] को भी एक देहक़ानी औरत की मेहमाननवाज़ी करनी पड़ेगी जिसमें ग़ालिबन् ज़्यादा तकल्लुफ़ न होगी। आप मामा साहिबा को तैयार अमलन कर दें ताकि वह इस आमद को बलाये नाख़्वास्ता[2] न ख़याल करें।

म्युनिसिपल सेक्रेटरी का ज़िक्र आप फ़िज़ूल करते हैं। एक मुआहिदा[3] तय हो जाने के बाद अब मैं किसी दूसरी मुलाज़िमत का ख़याल भी नहीं कर सकता। मैंने म्युनिसिपल मुलाज़िमत की कोशिश उस हालत में की थी जब महाशय काशीनाथ जी ने कोई हतमी वादा न किया था। उनके और आपके यक़ीन दिलाने के बाद फिर मैंने इस ख़याल को दिल में जगह ही नहीं दी—वर्ना यहाँ मुझे डेढ़ सौ रुपया माहवार मकान मुफ़्त और काम इससे कमतर की सूरत पेश हो गयी थी। वह मैंने मंज़ूर न किया। कुछ तो मुआहिदे का ख़याल था और इससे ज़्यादा आपके क़ुर्ब का ख़याल। महाशय जी की हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही[4] भी इस फ़ैसले में मुमिद[5] हुई। बस यह आख़िरी फ़ैसला है। अभी बारिश नहीं हुई हालाँकि हवा में इतनी हिद्दत[6] नहीं है। दीगर हालात साबिक़ दस्तूर हैं। चल बसता रहा हूँ। कोई बड़ी मुश्किल से मिलते हैं।

ज़ियादा वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

माल फ़ौरा तामीले हुक्म वग़ैरह कानपुर आकर ही साफ़ होंगे। अब तो यहाँ जी नहीं लगता।

---

१ स्त्रियों २ अप्रत्याशित विपत्ति ३ छोटी बात ४ शुभकामना ५ सहायक ६ कमी

१४६

मारवाड़ी विद्यालय, नयागंज, कानपुर
२ नवंबर १९२१

बरादरम

तसलीम। मुझे चपरासी की ज़बानी मालूम हुआ कि आपको किसी चपरासी की ज़रूरत है। हामिल-ए-रुक्का शिवप्रसाद इसी विद्यालय में १४ साल तक चपरासी रह चुका है। जून में पैरों में चोट लग जाने के बाइस बेकार हो गया था। आदमी तजुर्बेकार मालूम होता है। कम-से-कम शहर के मुहल्लों और गली-कूचों से वाक़िफ़ है। हालाँकि बहुत ज़हीन[1] नहीं है। मगर आप मुनासिब समझें इसे रख लें। अभी इम्तहानन् एक महीने के लिए रखें। अगर इत्मीनान हो जाये तो फिर मुस्तक़िल रखें। आज शाम को साढ़े चार बजे आऊँगा। ग़ालिबन् आपसे मुलाक़ात हो जायगी मगर मेरी वजह से आप अपने engagements में कोई हर्ज न होने दीजिएगा।

आपका
धनपत राय

१४७

कानपुर
२८ दिसम्बर १९२१

माईजान

तसलीम। इधर दो तीन दिन से आ न सका। मालूम नहीं अज़ीज़ सल्लम की तबीयत कैसी है।

जिस दिन आप के यहाँ से आया उसी दिन रात को सोने पर से गिर पड़ा। दोनों घुटनों में सख़्त चोट आई और एक कुहनी भी फूट गयी। कमर में भी चोट लगी। इस वजह से घर में मक़य्यद[2] हूँ।

लाहौर से सैयद इम्तियाज़ अली ताज का एक ख़त आया है। वह अब पचीसी हिस्सा दोम (१।।।) में इशाअत कर रहे हैं और कहते हैं इन नामों वहाँ इसके ख़रीदार हैं। ख़्वाजा साहब से ताक़ीद फ़रमा दें कि वह 'ज़माना' और अपने 'आज़ाद' में हिस्सा दोयम की क़ीमत (१।।) के बजाय (१।।।) लगवा दें वर्ना लाहौर वालों को शिकायत होगी। ईश्वर ने चाहा तो कल परसों तक हाज़िर हो सकूँगा।

नियाज़मंद
धनपत राय

---

१ तीक्ष्ण बुद्धि २ कैद

१४८

मारवाड़ी विद्यालय कानपुर
१२ फ़रवरी १९२२

मान्यवर

तसलीम। मैंने आज इस्तीफ़ा दे दिया। बहुत तंग आ गया था।

मेरे पाँच किस्से 'ज़माना' में निकल चुके हैं—१ 'बड़े हुज़ूर' २ मुअम्मा ३ लाल फ़ीता ४ तक़रीर ५ मोठ। इनका जो मुआवज़ा मुनासिब समझें भेज दें।

मेरी किताबों का हिसाब भी अर्से से नहीं हुआ है। बराहे करम जनाब ख़्वाजा साहब से कह दीजिये कि वह दिसम्बर के आख़ीर तक का हिसाब कर दें। जनवरी से फिर हिसाब चलता होगा। इसमें यह भी दर्ज कर दें कि अब मेरी कितनी जिल्दें 'बत्तीसी' और 'पचीसी' की दफ़्तर 'ज़माना' में हैं। इस तकलीफ़देही के लिये मुआफ़ कीजियेगा। मैं जुमे के रोज़ हाज़िर हूँगा। आप आने की तकलीफ़ न कीजियेगा।

बाबू रघुपति सहाय का ख़त आया है। आपने उनकी ग़ज़ल नहीं शाया की। इसकी शिकायत की है। चन्द और ग़ज़लें और रुबाइयाँ भेजी हैं। मुझे दे दिन लेता आऊँगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

१४९

ज्ञानमण्डल, काशी
२९ अप्रैल १९२२

भाईसाहब

तसलीम। कार्ड के लिए मशकूर हूँ। इसके पहले के दोनों ख़ुतूत भी मिले थे। हिन्दी में आजकल नये रिसालों की धूम है। लखनऊ से एक निकल रहा है, दूसरा कलकत्ते से। दोनों बड़ी-बड़ी तैयारियाँ कर रहे हैं। मज़ामीन की फ़रमाइशें रोज़ाना मौसूल[1] होती हैं। इसलिए उर्दू लिखने की तरफ़ ख़याल ही नहीं गया। इधर चैत और वैशाख की 'मर्यादा' को वैशाख ही में निकालने का इरादा है। हालाँकि आधा वैशाख गुज़र गया और अभी चैत भी नहीं निकला।

मैंने मेरे बरबरा की एक जिल्द माँगी थी। बराहे करम भिजवा दें। शादी में ज़रूर आपको मुबारकबाद[2] कर रखा है। अब तो वक़्त भी क़रीब आ गया। पी

१ प्राप्त २ बधाई

जी चाहता है कि आऊँ लेकिन मौक़ा ऐसा है कि आपको तरद्दुद और मुझे तक्लीफ़। ख़ैर परीशानी सही। अख़बार में अब नहीं बटाना चाहता। बाबू शिवप्रसाद साहब गुप्त की तजवीज़ है।

हुमायूँ क्या अब तक नहीं निकला।

वस्सलाम

नियाज़मन्द
धनपतराय

१५०

४६।१ मध्यमेश्वर, बनारस
११ मई १९२२

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए एक मज़मून और ख़त इरसाले ख़िदमत कर चुका हूँ। जवाब का इंतज़ार है। अगर मज़मून इस माह में न निकला तो बेकार हो जायेगा। मशीन फ़िट हो रही है। ऊपर मकान का पता है। इसी पते से ख़त का जवाब देने की इनायत कीजिए।

और तो सब ख़ैरियत है। उम्मीद है आप भी बख़ैर-ओ-आफ़ियत होंगे। आजकल देहात में घर पर हूँ।

वस्सलाम

धनपत राय

१५१

ज्ञानमण्डल काशी
२५ मई १९२२

भाईसाहब

तसलीम। ७ मई को शादी थी। १८ दिन गुज़र गये। उम्मीद है कि शादी बहुस्न-ओ-ख़ूबी तय हो गयी और अब ग़ालिबन् मेहमानों की शोरिश[1] भी दूर हो गयी होगी। अब तो ख़ैरियत-ए-मिज़ाज से मुत्तिला फ़रमाइए। यहाँ पर ख़ैरियत है।

बच्चों को दुआ।

नियाज़मन्द
धनपतराय

---

१ शोर, लड़ाई

१५२

ज्ञानमण्डल बनारस
११ मई १९२२

माईडियर

तसलीम। मसर्रतनामा[1] मिला। खूब खुश हुआ। मेरी यह बदनसीबी थी कि इस जुलूस में शरीक न हो सका। एतराज सिर्फ एक है। आपने अंग्रेज हुक्काम की दावत नाहक की। क्या फायदा। क्या अभी आपने शोहरते गंज लखीमाबाद लखीमपुर वगैरह के वाकये नहीं देखे? ऐसी हालत में यह हमनवाई[2] बेमौका है ख्वाह[3] इससे अपना कितना ही जाती नफा क्यों न होता हो।

बाजारे हुस्न पढ़िएगा। मैं जमाना में रिव्यू का मुन्तजिर हूँ। मेरा न मनाविम भी शाया हो गया। बड़े अच्छे रिव्यू हो रहे हैं।

मेरे रुपये अगर आप बैंक में न देकर उसके ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन के कुछ Deferred हिस्से खरीद सकें तो अच्छा हो। बराहे करम लिखिएगा कि उनका निर्ख आजकल क्या है।

जनाब ख्वाजा साहब मुकर्रम से मेरी किताबों के हिसाब दुरुस्त करने की ताकीद फरमा दीजिएगा। मैं जानना चाहता हूँ कि जनवरी सन् २१ में दफ्तर जमाना में प्रेम पचीसी अव्वल दोम प्रेम बत्तीसी अव्वल दोम की कितनी जिल्दें थीं कितनी लाहौर गयीं कितनी लाहौर से आयीं कितनी फरोख्त हुईं अब स्टाक में कितनी हैं और कमीशन की मिनहाई के बाद अब कितनी रकम मुझे मिलनी चाहिए। इसका इश्तहार बन्द करा दें। जमाना में और आजाद में भी। मैं अनकरीब दूसरा इश्तहार भेजूँगा। जब मालूम हो जाये कि मुझे आपसे कुल क्या मिलेगा तो मैं फैसला करूँ कि कितने हिस्से ले सकूँगा। चालीस हिस्सों के लिए मुझे क्या देना पड़ेगा। इस तफसील में जरा जोर तो लगेगा मगर मेरी खातिर से इसे कबूल कीजिएगा।

उम्मीद है बच्चे अच्छी तरह होंगे। मेरा मकान बन रहा है।

वस्सलाम

धनपत राय

---

१ खुशी का पत्र २ मेलजोल ३ चाहे

१५३

ज्ञानमण्डल बनारस
१६ जून १९२२

बरादरम

तसलीम। अर्सा हुआ कार्ड लिखा था मालूम नहीं पहुँचा या नहीं। जवाब से महरूम हूँ। मैंने ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन के ज़ेरफ़ हिस्सों के मुताल्लिक लिखा था। मालूम होता है कि वह फ़िलहाल न मिल सकेंगे। अखबारों में उनकी कीमत सोलह रुपये फ़ी हिस्सा नज़र आती है। अगर न मिल सकें तो बराहे करम रुपये रजिस्टर्ड और बीमा करके रवाना फ़रमाइए। कानपुर मे चार आठ के करोबार आसानी से मिल जायेंगे। यहाँ मैं कहाँ बैंकों मे मारा-मारा फिरूँगा। मेरा फिर प्रेस खोलने का इरादा है। और ग़ालिबन् जल्दतर[1] होगा। प्रेस तय भी हो गया है। *सिर्फ़ एक मेशिन की और ज़रूरत है। आइन्दा एक मशीन ले लूँगा।*

किताबों के हिसाब के मुताल्लिक मैंने तफ़सील से अर्ज़ किया था लेकिन उसका भी कुछ न मालूम क्या हुआ। जनवरी २१ से हिसाब करना है, मुफ़स्सल। मौजूदात बिक्री बाकी वग़ैरह। उम्मीद है कि दुबारा इसके लिए तकलीफ़ देने की ज़रूरत न होगी। मैं अगस्त में मिलने का इरादा करता हूँ। ग़ालिबन् उस वक़्त तक अपना प्रेस हो जायगा और मैं अपने तईं आज़ाद महसूस करूँगा। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे। आजकल एक ड्रामा लिखने में और अपने घर की तामीर[2] मे ऐसा मसरूफ़ हूँ कि कोई क़िस्सा लिखने का मौक़ा न पा सका। मुआफ़ कीजिएगा।

बच्चे बख़ैरियत होंगे। बाज़ारे हुस्न को सेन बाबू ने पसंद किया या नहीं।

खैरअंदेश
धनपत राय

१५४

ज्ञानमण्डल, बनारस
२४ जून १९२२

भाईजान

तसलीम। अर्से से हालात न मालूम हुए। मुतरद्दिद[3] हूँ। यहाँ बाबू शिव प्रसाद जी ने ज्ञानमण्डल को एक तरह से शिकस्ता[4] कर दिया। खसारा हो रहा था। इसलिए सब आदमियों को अलहदा करके अब सिर्फ़ एक एडीटर रह गया है जो एडिटिंग का काम ठेके पर कराने का इन्तज़ाम करता। मेरे लिए विद्यापीठ में

१ जल्द २ निर्माण ३ वर्तमान ४ तोड़ दिया

इंतजाम हो रहा है। पर मैं यहाँ आने पर रजामन्द नहीं हूँ। अपना प्रेस खोलने का मुसम्मम इरादा है। यहाँ एक प्रेस—लकड़ी के सामान और टाइप दो हजार रुपये में मिले हैं। अभी मिले तो नहीं मगर मिलने की पूरी उम्मीद है। अब एक ट्रेडिल और एक मशीन की जरूरत है। सोमवार को इलाहाबाद जाऊँगा। सुनने में आया है कि वहाँ यह दोनों चीजें बिकाऊ हैं। अगर मिल गयीं तो मेरा प्रेस तैयार हो जायेगा और अपना काम जारी कर दूँगा।

किताबों के हिसाब में ११ दिसम्बर तक मेरे हजूर जमाना पर १ १॥) निकले। इस हिसाब को ३१ मई सन २२ तक मुकम्मल करा दीजिए। मुझे मजामीन के मुतालिक मिनजुमला[1] पैंतीस रुपये के बीस मिले थे। इसके बाद मैंने एक मजमून और दिया। इस तरह मजामीन की मद में मुझे १५) और मिलने चाहिए। १२१॥) यो यह होते हैं। जनवरी से ३१ मई तक की बिक्री के शामिल कुछ और निकल आयेंगे। इस वक्त मैं आपको तकलीफ नहीं देना चाहता था पर जरूरत मुझे मजबूर कर रही है। मुझे प्रेस के लिए पाँच हजार दरकार होंगे। प्रेस जमने जमाने एक हजार लग जायेंगे। प्रेस को चलाने के लिए एक हजार की फिक्र और है। मैंने चार हजार का इंतजाम कर लिया है। एक हजार मेरे इंदौरी भाई साहब दे रहे हैं। अभी कम अज कम एक हजार की और जरूरत है। आपके यहाँ से आठ सौ मिल जाय तो गोया एक छोर से ट्रेडिल मशीन का दाम निकल आये। अगर मुझे मालूम होता कि इस कदर जल्द मुझे प्रेस खोलना पड़ेगा तो मैंने तामीर मकान में हाथ न लगाया होता जिसमें अभी तक तकरीबन दो हजार सर्फ हो चुके हैं और प्लास्टरिंग फर्श वगैरह का काम बाकी है। यह समझ लीजिए कि प्रेस खुल जाने के बाद मेरे एकाउण्ट में एक कौड़ी भी न रहेगी। इस दाँव पर अपना सब कुछ रखकर किस्मत आजमा रहा हूँ। देखूँ क्या नतीजा होता है।

मैं जानता हूँ कि इस वक्त आपके हाथ खाली है। नादिम हूँ कि आपको तकलीफ दे रहा हूँ। पर जरूरत मजबूरन यह सतरें मुझसे लिखवा रही है। मुझे यकीन है कि साल के अन्दर मैं इस काबिल हो जाऊँगा कि घर बैठे दो रुपये भी पैदा कर सकूँ। नाना-नानी से मदद[2] उम्मीद नहीं। बड़े दलगीर निकले। घोटर के पास चार पाँच सौ थे वह मकान की नजर हो गये।

मैं उम्मीद करता हूँ कि इलाहाबाद से वापस पर मुझे मशीन और ट्रेडिल का दाम चुकाने वक्त आपके यहाँ से रुपये मिल जायेंगे। बेचारे रघुपति सहाय जेल में हैं। नहीं तो उनसे भी मेरे साथ भी वसूल हो जाते—धीर।

---

१ पूरा हिसाब १ से ३ नम्बर की

१५३

ज्ञानमण्डल बनारस
१६ जून १९२२

बरादरम

तसलीम। अरसा हुआ कार्ड लिखा था मालूम नहीं पहुँचा या नहीं। जवाब से महरूम हूँ। मैंने ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन के डेफर्ड हिस्सों के मुताल्लिक लिखा था। मालूम होता है कि वह फ़िलहाल न मिल सकेंगे। अखबारों में उनकी कीमत सोलह रुपये फी हिस्सा नजर आती है। अगर न मिल सकें तो बराहे करम रुपये रजिस्टर्ड और बीमा करके रवाना फरमाइए। कानपुर में चार बार साहब के खरीदार आसामी से मिल जायेंगे। यहाँ मैं कहाँ बैंकों में मारा-मारा फिरूँगा। मेरा फिर प्रेस खोलने का इरादा है। और गालिबन् बारबर[1] होगा। प्रेस तय भी हो गया है। सिर्फ एक ट्रेडिल की और जरूरत है। आइन्दा एक मशीन ले लूँगा।

किताबों के हिसाब के मुताल्लिक मैंने तफ़सील से अर्ज किया था लेकिन उसका भी कुछ न मालूम क्या हुआ। जनवरी २१ से हिसाब करना है मुफ़स्सल। मौजूदात बिक्री बाकी वगैरह। उम्मीद है कि दुबारा इसके लिए तकलीफ़ देने की जरूरत न होगी। मैं अगस्त में मिलने का इरादा करता हूँ। गालिबन् उस वक्त तक अपना प्रेस हो जायगा और मैं अपने तईं आजाद महसूस करूँगा। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे। आजकल एक ड्रामा लिखने में और अपने घर की तामीर[2] में ऐसा मसरूफ़ हूँ कि कोई क़िस्सा लिखने का मौक़ा न पा सका। मुआफ़ कीजिएगा।

बच्चे बख़ैरियत होंगे। बाजारे हुस्न को सेन बाबू ने पसंद किया या नहीं।

खैरअंदेश
धनपत राय

१५४

ज्ञानमण्डल, बनारस
२४ जून १९२२

भाईजान

तसलीम। अरसे से हालात न मालूम हुए। मुतरद्दिद[3] हूँ। यहाँ बाबू शिव प्रसाद जी ने ज्ञानमण्डल को एक तरह से शिकस्ता[4] कर दिया। खसारा हो रहा था। इसलिए सब आदमियों को अलहदा करके अब सिर्फ एक एडिटर रह गया है जो एडिटिंग का काम ठेके पर कराने का इंतजाम करेगा। मेरे लिए विद्यापीठ में

---

१ वजन २ निर्माण ३ परीशान ४ तोड़ दिया

इंतज़ाम हो रहा है। पर मैं वहाँ जाने पर रज़ामन्द नहीं हूँ। अपना प्रेस खोलने का मुसम्मम इरादा है। यहाँ एक प्रेस—लकड़ी के सामान और टाइप दो हज़ार रुपये में मिले हैं। अभी मिले तो नहीं मगर मिलने की पूरी उम्मीद है। अब एक इंजिन और एक मशीन की ज़रूरत है। सोमवार को इलाहाबाद जाऊँगा। सुनने में आया है कि वहाँ यह दोनों चीज़ें बिकाऊ हैं। अगर मिल गयीं तो मेरा प्रेस तैयार हो जायेगा और अपना काम जारी कर दूँगा।

किताबों के हिसाब में ३१ दिसम्बर तक मेरे ऊपर ज़माना पर १ ३॥) निकले। इस हिसाब को ३१ मई सन २२ तक मुकम्मल करा दीजिए। मुझे सज़ा मौत के मसविदात मिनजुमला[1] पैंतीस रुपये के बीस मिले थे। इसके बाद मैंने एक मज़मून और दिया। इस तरह मज़ामीन की मद में मुझे ३) और मिलने चाहिए। १२३॥) का यह हासिल है। जनवरी से ३१ मई तक की बिक्री के बाक़ियात कुछ और निकल आवेंगे। इस वक़्त मैं आपको तकलीफ़ नहीं देना चाहता था पर ज़रूरत मुझे मजबूर कर रही है। मुझे प्रेस के लिए पाँच हज़ार दरकार होंगे। प्रेस जमने जमाते एक हज़ार लग जायेंगे। प्रेस को चलाने के लिए एक हज़ार की फ़िक्र और है। मैंने चार हज़ार का इंतज़ाम कर लिया है। एक हज़ार मेरे इसी भाई साहब दे रहे हैं। अभी कम से कम एक हज़ार की और ज़रूरत है। आपके यहाँ से मान भी मिल जाय तो गोया एक ढोंगे में [illegible] ट्रेडिंग का काम निकल जाय। अगर मुझे मालूम होता कि इस क़दर जल्द मुझे प्रेस खोलना पड़ेगा तो मैंने तामीरे मकान में हाथ न लगाया होता जिसमें अभी तक तख़मीनन दो हज़ार ख़र्च हो चुके हैं और प्लास्टरिंग फ़र्श वग़ैरह का काम बाक़ी है। यह समझ लीजिए कि प्रेस खुल जाने के बाद मेरे अख़राजात में एक कौड़ी भी न बढ़ेगी। इस दाँव पर अपना सब कुछ रखकर क़िस्मत आज़मा रहा हूँ। देखूँ क्या नतीजा होता है।

मैं जानता हूँ कि इस वक़्त आपके हाथ ख़ाली हैं। नादिम हूँ कि आपको तकलीफ़ दे रहा हूँ। पर ज़रूरत मजबूरन यह सतरें मुझसे लिखवा रही है। मुझे यक़ीन है कि साल के अन्दर मैं इस क़ाबिल हो जाऊँगा कि घर बैठे दो ढाई सौ पैदा कर सकूँ। खाना-दाना से मुतअल्लिक़ उम्मीद नहीं। बड़े लिट्रेचर निकम्मे। थोड़े से पास चार पाँच सौ थे वह मकान की नज़र हो गये।

मैं उम्मीद करता हूँ कि इलाहाबाद से वापस पर मुझे मशीन और इंजिन का दाम चुकाते वक़्त आपके यहाँ से रुपए मिल जायेंगे। हमारे रघुपति सहाय जेल में हैं। नहीं तो उनसे भी मेरे काम में मदद हो जाती—ख़ैर।

[1] कुल किस्तवार ९ के १ हिस्से भी

अच्छा अच्छी तरह हैं। मैं आजकल अपना नया नाविल गोशए आफ़ियत साफ़ लिख रहा हूँ। एक हिन्दी ड्रामा भी लिख रहा हूँ। इस वजह से क़सस[1] की तरफ़ तबीयत माइल नहीं होती। मेरा इरादा है कि अपने प्रेस में 'संसार दर्शन' सीरीज निकालूँ जो Peeps At Many Lands के ढंग की किताबें होंगी। यह मैदान हिन्दी में खाली है और ग़ालिबन् इसकी ज़रूरत भी है। हिन्दी पुस्तक एजेन्सी से तय हो गया है कि वह मेरी किताबों को चालीस फ़ी सदी कमीशन पर यकमुश्त नक़द ख़रीद लिया करेगी।

उम्मीद है कि मअ़-ख़ैर[2] होंगे।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१५५

बनारस
७ जुलाई १९२२

भाईजान

तसलीम। इस तरफ़ बहुत परीशान रहा। यहाँ ज्ञानमण्डल से अलहदा हो गया। बाबू साहब ने स्टाफ़ कम कर दिया है। मुझे विद्यापीठ के स्कूल महकमे की हेडमास्टरी मिल गयी है। आना जाना बहुत दूर पड़ता है। प्रेस जो यहाँ मिलने वाला था उसकी तरफ़ से मायूसी हुई। मालिक के एक वकील ने ख़रीद लिया। इलाहाबाद में मशीन है मगर बहुत दिनों की चली हुई है। ट्रेडल है। एक साहब का भेजा था। वह देख आये हैं। अब मैं किसी मिस्त्री को लेकर ख़ुद जाऊँगा और मिस्त्री से मुवाफ़िक़ राय हो तो क़ीमत वग़ैरह तय कर लूँगा। कानपुर आना अब मेरे लिए मुश्किल है। मकान तैयार हो जाता है तो घर ही रहूँगा और लौट आया करूँगा। अब परदेस का क़स्द[3] नहीं है। मुझे यहाँ नफ़ा ज़्यादा न होगा तो नुक़सान का अंदेशा भी नहीं है। कुछ पब्लिशिंग का काम ख़ुद करूँगा। इससे बिलकुल बाहर के काम का सहारा न रहेगा। मशीन दो हज़ार के एक फ़ार्म रोज़ छाप लेगी। महीने में तातील वग़ैरह निकालकर ग़ालिबन् २४ फ़ार्म निकल सकेंगे। बारह फ़ार्म मैं ख़ुद छापूँगा बारह फ़ार्म के लिए बाहर का मुन्तज़िर रहूँगा। हाँ काम बाहर से लाना पड़ेगा। आपने बावर ग़ालिबन् कलकत्ता बैन्ड होने के लिए भेज दिये होंगे। लाहौर ने अभी तक ख़त का जवाब नहीं दिया। बड़े ज़ालिम हैं। तीन सौ जिल्दें ख़रीदना चाहते हैं। मेरे दरवेश की मुझे सख़्त

---

१ किस्सों २ खैरियत से ३ इरादा

ज़रूरत है। मगर एक जिल्द भी मिल जाती तो काम निकल जाता। आपके यहाँ एक जिल्द ज़रूर निकल आयेगी। मुझे परमिशन[1] दे दें। तर्जुमा करके लौटा दूँगा। उम्मीद है कि मिज़ाज ख़ुश होंगे।

आपके यहाँ सफ़दर हैदर प्रेसों की फ़ेहरिस्त थी। बराये करम भेज दीजिये।

वस्सलाम

नियाज़मन्द
धनपतराय

१५६

आशा भवन, कबीर चौरा
बनारस शहर
१४ जुलाई १९२२

भाई साहब

तसलीम। इनायतनामा मय चेक मिला। मशकूर हूँ। सूद ज़रूरत से ज़्यादा है। ज़माना के लिये जो कुछ लिखा है वह कल भेज दूँगा। किताबों का हिसाब लाहौर से आनेवाला है। शायद दो चार रोज़ में आ जाये। विद्यापीठ से मैं आरज़ी तौर पर हो गया हूँ। बाबू भगवानदास जी ने स्कूल का हिस्सा मेरे सिपुर्द कर दिया है। वक़्त नहीं देते। इस लिये कोई तरद्दुद नहीं। गोरखपुर में भी काफ़ी आराम था। विद्यापीठ में ख़िदमत का मौक़ा है। और आराम भी। मुझे मारवाड़ी स्कूल में जितनी तकलीफ़ हुई उतनी कहीं और हो ही नहीं सकती। मालूम नहीं महाराज से मेरी क्यों अनबन हो गयी।

प्रेस के बाबत पशोपेश किया। अब की इतवार को इलाहाबाद गया था। मशीनें दो देखीं। एक अच्छी थी। मगर क़ीमत तीन हज़ार। इस लिये लोगों ने ख़रीदने की सलाह नहीं दी। वहाँ से वापस आने पर मालूम हुआ कि बनारस ही में एक कारख़ाना मुस्तक़िल बिक रहा है। अब उससे बातचीत हो रही है। मशीन कोई नयी नहीं मगर अब दो हैं और मुतफ़र्रिक़[2] सामान है। देखूँ क्या नतीजा होता है। काम का मुझे भरोसा है। मैं ॥।) की किताबों का एक सिलसिला निकालने का इरादा कर रहा हूँ। ग़ालिबन हर दूसरे महीने ऐसी एक किताब निकल जायेगी। कुल ४) मिल जायेंगे। प्रेस की छपाई वग़ैरह सब इस में निकल आयेगी।

---

१ इजाज़त २ फुटकर

यहाँ आराम तो है मगर परेशानियाँ काफ़ी हैं। नया नाविल एक हजार निकल गया। अब किस्सों का मजमूआ[१] निकलनेवाला है। मुझे मालूम होता है कि शायद एक नाविल और अफ़साना लिखकर मैं खानानशीन[२] हो सकता हूँ। इससे जरूरत भर बैठे मिल जायगा।

यहाँ बारिश ने नाक में दम कर दिया। 'बाजारे हुस्न' का रिव्यू जरूर कराइएगा। लाहौर से 'हजार दास्तान' निकल रहा है। एक किस्सा बहुत इसरार के बाद मैंने भी लिखा है। बच्चे अच्छी तरह हैं। उम्मीद है आप भी मय अयाल खुश होंगे। किस्सा मुकर्रम[३] व मुअज्जम[४] की कैफ़ियत से आप ने मुतला नहीं किया। तय हो गयी या नहीं। मकबूल सेठ ने 'बाजारे हुस्न' को पसन्द किया या नहीं। मैं उनके फ़ैसले का मुन्तजिर हूँ। और सब ईश्वर की कृपा है। जन्माष्टमी में लखनऊ कैदियों से मिलने आऊँगा। उस वक्त आप से भी मुलाकात होगी।

वस्सलाम

धनपतराय

१५७

बनारस

१९ सितम्बर १९२२

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। मूक वापस है।

लाला काशीनाथ की हिन्दी किताब तफ़सील से पढ़ी हुई थी। इस पर मैंने रिव्यू कर दिया है। किताब अच्छी है। एक शिकायत हो गयी। मैंने जो हिसाब भेजे हैं उसमें 'प्रेम पचीसी' या 'जमाना' के दफ़्तर से आई हुई किताबों का हिसाब शामिल नहीं है। दफ़्तर के जिम्मे मेरी १४ जिल्दें प्रेम पचीसी की हैं मेरे जिम्मे दफ़्तर की मतबूआ कुतुब।[५]

मैं खुद ऐसी कोशिश में हूँ कि मजामीन का सिलसिला न टूटे। आजकल कुछ तो खुद पढ़ता हूँ कुछ वक्त नाविल की तैयारी में निकल जाता है। 'प्रताप' के खास नम्बर के लिये भी एक मजमून लिखा। यह कमी किस्से से नहीं किसी दूसरे मजमून से पूरा करूँगा।

कोशिश करूँगा कि १२ को लखनऊ आऊँ। गालिबन आऊँगा। लेकिन स्कूल का ठिकाना कहाँ होगा? सब पहले से तय कर दीजियेगा।

आपका

धनपत राय

१ संग्रह २ घर बैठ सकता हूँ ३ मेहरबान ४ बुजुर्ग ५ छपी हुई किताबें

१५८

मामा भवन कबीर चौरा,
बनारस
१ अक्तूबर १९२२

भाईजान

तसलीम। ज़माना के लिए एक मज़मून लिखा था। उसका हिन्दी तर्जुमा कलकत्ते के एक रिसाले में निकला था। मैंने मज़मून साफ़ किया मगर हिन्दी में निकलने के तीसरे ही दिन उसका तर्जुमा लाहौर के प्रताप में नज़र आया। इसलिए उस क़िस्से को न भेज सका। संदूक़ में साफ़ किया हुआ पड़ा है। हालाँकि लाहौरी तर्जुमा बिलकुल भद्दा है मगर क़िस्सा तो वही है। अब कुछ और लिखूँगा।

प्रेस का सामान कुछ कलकत्ते से मँगवाया। टाइप का आर्डर दे दिया है मगर मशीन अभी तक नहीं मिली। Woodroff & Co से ख़त-किताबत कर रहा हूँ। ग़ालिबन् वहीं से मिलेगी। इसमें एक दो माह का अर्सा लगेगा। मगर आपको किसी मशीन का पता हो तो मुझे इत्तिला दीजिएगा। प्रेस खुला और मैं घर बैठा। ज़माना में कौशिक जी का क़िस्सा ख़ूब था। ज़बान का क्या कहना। सरशार मरहूम का अच्छा ख़ाका उतारा। हिन्दी में कौशिक जी इतना अच्छा नहीं लिखते। उन्हें मेरी तरफ़ से मुबारकबाद।

बड़ा साहब क़िब्ला[1] की सेहतयाबी की ख़बर बाइसे इत्मीनान हुई। उम्मीद है लड़के अच्छी तरह होंगे। यहाँ भी सब ख़ैरियत है। छोटक अच्छी तरह है। नाना साहब तशरीफ़ लाये हुए हैं। उनके आ जाने से ख़ानगी जंग शुरू हो गयी। भाई-बन्दों से उनकी तनहापुरी[2] न बर्दाश्त हो सकी। अब बटवारे का मसला दरपेश है। मेरे मकान में हुल्लड़ हो रहा है। जन्माष्टमी क़रीब आ रही है। मुसम्मम इरादा है कि इस तातील में आपसे मुलाक़ात करूँ। ज़िन्दगी का ऐतबार नहीं। रस्मे मुलाक़ात क़ायम रहे तो बेहतर। आप तो कुतुब हैं। ख़ैर। प्यासा कुएँ पर जाते हैं कुआँ नहीं दौड़ा आता। बारिश ने नाक में दम कर दिया। फ़स्ल को भी नुक़सान पहुँचा। आपको यह सुनकर ख़ुशी होगी कि प्रेमाश्रम की १२ जिल्दें निकल गयीं। अब दूसरे एडीशन की तैयारी है। और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

---

१ आदरणीय २ अकेले अकेले खाना

१५९

लाजा भवन कबीर चौरा
बनारस
७ नवम्बर १९२२

भाईजान

तसलीम। मुबारकबाद। इधर अर्से से आपके हालात मालूम नहीं हुए। मैंने खुद कोई खत नहीं लिखा। इसलिए शिकायत की गुंजाइश नहीं। परमात्मा आपको कानपुर का गंगा प्रसाद वर्मा बनाये। उम्मीद है कि बाल-बच्चे अच्छी तरह होंगे। यहाँ भी खैरियत है। अभी प्रेस कलकत्ते से नहीं आया। शायद इस माह के आखीर तक आ जाय। मैंने इधर कोई ऐसी चीज न लिखी जो जमाना के काबिल समझता। और रिसालों में तराजिम[1] कहानियाँ दे दिया करता हूँ। आपको कुछ ओरिजिनल देना चाहता हूँ। मालिकनिगारी स्कूल और घर के झंझट—यह सब परीशान किया करते हैं।

देहली में एक बुकसेलर है। उनके पास बीस की किताबें बजरिये वी पी भिजवाने की इनायत करें। (शायद वह ज्यादा जिल्दें खरीदें। पता यह है)

Messrs Gupta & Co
Publishers, Booksellers & Stationers
Egerton Road
Delhi

प्रेम बत्तीसी हर दो हिस्सा

प्रेम पचीसी हर दो हिस्सा अगर दस्तयाब हो सके। शायद वह इसका दूसरा एडीशन निकालने पर रजामन्द हैं वर्ना हिस्सा दोम ही सही।

जवाब और दीगर हालात से मुत्तिला फ़रमायें।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१६०

बनारस
२ दिसम्बर १९२२

भाईजान

तसलीम। फोड़ों ने आपका पीछा पकड़ लिया है। अभी हैम बाबू को लिखा अब वही शिकायत आपको पैदा हुई। खैर यह सुनकर इत्मीनान हुआ

---

१ अनूदित

हुआ कि अब ज़ख्म मुन्दमिल[1] हो रहा है। परमात्मा करे आपको जल्द सेहत हो। यहाँ तो ईश्वर की कृपा से सब ख़ैरियत है। हाँ छोटे बच्चे को खाँसी आती है। प्रेस इम्पीरियल से रवाना हुआ है। शायद दिसंबर के आख़ीर तक यहाँ आवे। मकान बार हो गया है। मैं बदस्तूर विद्यापीठ में हूँ। ज़माना ने इधर मिज़ाज की ख़ूब कलई खोली। देखूँ हज़रत क्या जवाब देते हैं। यहाँ आज़मगढ़ की तरफ़ से एक अंग्रेज़ी हफ़्तेवार निकलने की तजवीज़ दरपेश है। मुंशी शीतल राय साहब का ताल्लुक़ तो अब अवध अख़बार से नहीं रहा। क्या कर रहे हैं। आप बनारस आते ही आते रह गये। क्या इरादा तर्क कर दिया ?

बच्चों को दुआ। सेन बाबू तो अब तैयार हो रहे होंगे।

ज़्यादा वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपतराय

१६०

काशी विद्यापीठ, बनारस

१७ फ़रवरी १९२१

भाईजान

तसलीम। एक मुद्दत के बाद आपने याद फ़रमाया। ममनून हूँ। मैं बख़ैरियत हूँ और उम्मीद करता हूँ कि आप भी बख़ैर-ओ-आफ़ियत हैं। मैं सख़्त[2] नादिम हूँ कि ज़माना के लिए अर्से से कुछ न लिख सका। बार बार इरादा करता हूँ लेकिन कभी तो वक़्त नहीं मिलता और कभी मज़मून नहीं सूझता। हिन्दी रिसालों में लिखने के बाइस वक़्त ही नहीं निकलता। फिर अपना नया नाविल भी लिखना चाहता हूँ। ज़माना को फिर मुक़ाबले का सामना करना पड़ा। अफ़सोस है। उर्दू में शायद अच्छे रिसालों का क़ायम रहना ग़ैरमुमकिन हो गया है। मालूम नहीं इसका क्या बाइस है। उर्दू पढ़नेवालों की तादाद तो कम नहीं है लेकिन ग़ालिबन् सब मुफ़्त के पढ़नेवाले हैं। ज़्यादातर शायद नामानिगारी[3] हैं। सभी लिखने वाले हैं पढ़नेवाला कोई नहीं। अब इलाहाबाद से एक नया रिसाला 'चाँदनी' निकलने वाला है। देखूँ यह कितने दिनों चलता है।

आपने मुझसे पूछा मैं किस पार्टी में हूँ। मैं किसी पार्टी में भी नहीं हूँ। इसलिए कि दोनों में से कोई पार्टी कुछ अमली काम नहीं कर रही है। मैं तो उस आनेवाली पार्टी का मेम्बर हूँ जो कोतहमलागन[4] की सियासी तालीम का

१ भर रहा है २ बेहद शर्मिन्दा ३ लिखने-लिखाने का दावा ४ दो कौमों

अपना दस्तूर-उल अमल[1] बनायें। स्वराज्य-खिलाफ़त पार्टी की जानिब से जो कान्स्टीट्यूशन निकला है उससे अलबत्ता मुझे कुल्ली[2] इत्तफ़ाक़[3] है। मगर ताज्जुब यही है कि यह एक पार्टी से क्यों निकला। मेरे ख़याल में दोनों ही पार्टियाँ इस मुआमले में मुत्तफ़िक़[4] हैं।

जिस मज़मून का आप ज़िक्र फ़रमाते हैं वह पहले बनारस के मर्यादा मे निकला था। उसके बाद हुब्बारदास्तां मे शाया हुआ। इसके मुताल्लिक़ आपने ताज्जुब का इज़हार क्यों किया।

मिस्टर गोपाल कृष्ण ने जो तजवीज़ लिखी है उसकी कामयाबी मे मुझे बहुत शक है। इंगलैंड म मज़मूननिगारों को हज़ारों मिले होंगे तब इस क़िस्से की तकमील[5] की होगी। यहाँ ऐसी कोई तरग़ीब[6] नहीं है। महज़ तफ़रीह क लिए शायद कोई लिखने पर तैयार न हो। बहरहाल अगर मुझे लिखिए तो मैं एक बाब[7] लिखने की कोशिश कर सकता हूँ।

अब प्रेस की बात। आज तक प्रेस नही आया। सितंबर के महीने मे मुनरात क पास रुपये रवाना किये गये थे। ४ अक्तूबर को जवाब और रसीद आ ही गयी थी। मालूम हुआ था उसने दो मशीनें रवाना की हैं। दोनों इस्टवोर्ड थी। लेकिन तब से अब तक कोई ख़बर नहीं। १ फ़रवरी को मायूस होकर फिर याददिहानी की गयी है। देखूं कब तक पहुँचती है। टाइप वग़ैरह जमा कर लिया है और जमा करता जाता हूँ। लेकिन इस तूलानी[8] इंतज़ार के बाइस हौसला पस्त हुआ जाता है। रुपये की तो कोई कमी नही है। साढ़े छ हज़ार की रक़म हाथ में है। हाँ मेरा मकान तैयार हो गया और होली से उसे आबाद भी कर दिया जायगा।

बाबू महताब राय साहिब बदस्तूर [illegible] में हैं। बच्चे अच्छी तरह हैं। यहाँ भी कई दिनों अब्र रहा। लेकिन आज मतला[9] साफ़ हो गया है। आख़िरी बात यह कि जनाब ख़्वाजा साहब से मेरी किताबों का हिसाब तैयार करने की फ़रमाइश कीजिए। फ़रवरी ख़त्म हो रहा है। मार्च में मैं कानपुर आने की उम्मीद करता हूँ लेकिन अगर किसी वजह से न आ सका तो मैं बहुत मशकूर होऊँगा अगर आप यह रक़म मेरे नाम किसी बैंक की माफ़त रवाना फ़रमायेंगे। इस तरफ़ मेरा एक हिन्दी ड्रामा भी निकला है। बच्चों को दुआ।

नियाज़मन्द
धनपत राय

---

१ कार्यप्रणाली २ पूर्ण ३ सहमति ४ सहमत ५ समापन-पूर्णाहुति ६ प्रेरणा प्रलोभन ७ अध्याय ८ दीर्घ ९ आकाश

१६२

माधो भवन, कबीर चौरा, बनारस
२२ अप्रैल १९२३

भाईजान

तसलीम। शायद इस मकान से यह आखिरी खत आपके पास भेज रहा हूँ। आज प्रेस के लिए मकान तै हो गया, मशीन आ गयी, टाइप, स्याही, कागज़ों के केस वगैरह पहुँच गये। उम्मीद है कि इस मई के महीने में प्रेस मुकम्मल तौर पर काम करने के क़ाबिल हो जायगा। अब डिक्लेरेशन दाखिल करना रह गया है। सोमवार को दाखिल कर दूँगा। अभी तक नाम नहीं तजवीज़ कर सका। साहित्य प्रेस, सरस्वती प्रेस, संसार प्रेस वगैरह नाम ज़ेहन में हैं। आप भी कोई नाम तजवीज़ कीजिए क्योंकि नामों के इंतखाब[1] में आपको कमाल है। इसके क़ब्ल आपको इसलिए तकलीफ़ नहीं दी कि आप म्युनिसिपल इंतखाबात में परेशान थे। अब आपको फ़ुर्सत है। हालांकि अब तक मुझे यह नहीं मालूम हुआ कि आप बोर्ड में आये या नहीं। यहाँ तो पूरा बोर्ड कांग्रेसी है।

मेरा इरादा एक लीथो प्रेस रखने का भी है। क्या कोई कानपूर में लीथो प्रेस है। बराहे करम इसकी मुझे इत्तला दीजिएगा। लोग कहते हैं बनारस में लीथो प्रेस नहीं चल सकता लेकिन मैं एक बार कोशिश करके देखना चाहता हूँ। मेरी कई किताबें निकलने के लिए तैयार हो रही हैं। प्रेम पचीसी ख़त्म हो गयी। चौगाने हस्ती? महज़ इसलिए नातमाम है कि कोई पब्लिशर नहीं है। ताज़ा ड्रामा संग्राम भी उर्दू में निकालना चाहता हूँ। जब तक यह किताब तैयार होगी गालिबन् मेरा नया नाविल तैयार हो जायगा। कहानियाँ भी दस-बारह तैयार हो गयी हैं। बहरहाल कोशिश ज़रूर करूँगा। कानपूर में अब हैंड प्रेस ख़ाकट? माऊ रेट हो गया है। शायद वहाँ सस्ते दामों मिल जाये।

ख़्वाजा साहब के हिसाब की परतों में मालूम हुआ है कि ज़माना एजेंसी पर मेरे साबिक़[2] और हाल मिलाकर २१८) आते हैं। यह रकम अगर आप इस वक़्त दे दें तो मुझ पर बड़ा एहसान हो। मुझे मकान प्रेस के लिए न मिलता था। बड़ी मुश्किलों एक मौक़े का मकान मिला है। इसमें अब तक डी० ए० वी० स्कूल था। अब स्कूल अपनी नयी इमारत में चला गया। मगर पुरानी इमारत में उसने कुछ इज़ाफ़े किये हैं जिसके लिए वह मालिक मकान से १२००) रुपये का तालिब[3] है। मालिक मकान से मेरा समझौता यह हुआ है कि मैं साल भर तक एक

१चुनाव २.पिछले ३.तलबगार

सौ रुपया माहवार के हिसाब से आर्यसमाज को दूँ और पचास रुपये के हिसाब से किराये में मिनहा[1] करूँ। आर्यसमाज ने यह शर्त मंजूर की है। एक और पुराना प्रेस जो बहुत मशहूर है लक्ष्मीनारायण प्रेस इस मकान के लिए उधार खाये बैठा है। १२) पचमुश्त देने के लिए आमादा है मगर समाज के दो एक मेम्बरों की इनायत से अभी तक उसका आफ़र मंजूर नहीं हुआ है। अगर मैं यह शर्त न पूरी कर सका तो यह मकान निकल जायगा और महीनों की दवा-दविश[2] अकारथ हो जायगी। मेरे बजट में इस बार सौ की गुंजायश न थी। आप तीन सौ रुपये दे दें तो तीन महीने तक किराये की फ़िक्र न करनी पड़े। तब तक मुमकिन है प्रेस से कुछ आमदनी होने लगे तो किराया अदा होता जाय। मगर इस वक़्त रुपयों की ज़रूरत शदीद[3] है। अगर आपको यकमुश्त देने में तरद्दुद हो तो तीन महीने तक सौ रुपये माहवार दे दें। मुझे उम्मीद है आप मायूस नहीं करेंगे।

मैंने इधर लिखना बंद सा कर रखा है। फ़ुर्सत ही नहीं मिलती। मलकाना शुद्धि पर एक मुख़्तसर मज़मून लिख रहा हूँ। मुझे इस तहरीक से सख़्त इख़्तिलाफ़ है। तीन चार दिन में भेज सकूँगा। आर्यसमाजवाले बिगड़ेंगे लेकिन मुझे उम्मीद है आप ज़माना में इस मज़मून को जगह देंगे।

मेरा इरादा कानपुर आने का है। मई के पहले या दूसरे हफ़्ते में आने का क़स्द करता हूँ। अगर कोई नया झंझट सर पर सवार न हो गया तो।

आप इस तरफ़ मुझसे कुछ नाराज़ से हो रहे हैं। महीना तक कोई ख़त ही नहीं। मैं शिकायत नहीं करता ख़ुद भी इसी इल्लत में गिरफ़्तार हूँ। ईश्वर ने चाहा तो अब मेरी तरफ़ से यह सिलसिला हस्बे साबिक़ जारी रहेगा।

यहाँ सब ख़ैरियत है। उम्मीद है आप मय अयाल अच्छे होंगे। बेन बाबू ने पर्चे अच्छे लिये होंगे। बच्चों को मेरी तरफ़ से दुआएँ और।

और क्या लिखूँ। जवाबे ख़त का बेताबी से इन्तज़ार रहेगा।

आपका,
धनपत राय

---

१ कटौती २ दौड़-धूप ३ सख़्त

१६३

आशा भवन, बनारस
२१ अप्रैल १९२१

भाईजान

तसलीम। कल सुबह एक खत लिखा शाम को आपका कार्ड मिला। पढ़कर निहायत सदमा हुआ। बीमारियाँ और परेशानियाँ तो ज़िन्दगी का खास्सा[1] हैं लेकिन बच्चे की हसरतनाक मौत एक दिलशिकन हादसा है और उसे बर्दाश्त करने का अगर कोई तरीका है तो यही कि दुनिया को एक तमाशागाह या खेल का मैदान समझ लिया जाय। खेल के मैदान में वही शख्स तारीफ का मुस्तहक़[2] होता है जो जीत से फूलता नहीं हार से रोता नहीं जीते तब भी खेलता है, हार तब भी खेलता है। जीत के बाद यह कोशिश होती है कि हारें नहीं। हार के बाद जीत की आरज़ू होती है। हम सब के सब खिलाड़ी हैं मगर खेलना नहीं जानते। एक बाज़ी जीती एक गोल जीता तो हिप हिप हुर्रे के नारों से आसमान गूँज उठा टोपियाँ आसमान में उछलने लगीं भूल गये कि यह जीत दायमी[3] फ़तह की गारण्टी नहीं है। मुमकिन है कि दूसरी बाज़ी में हार हो। मलहाजा[4] हारे तो पस्तहिम्मती पर कमर बाँध ली रोये किसी को बकते दिये अफ़सोस ऐसा और ऐसे पस्त हो गये गोया फिर जीत की सूरत देखनी नसीब न होगी। ऐसे ओछे तंगज़र्फ़[5] आदमी को इस के वसीह[6] मैदान में खड़े होने का भी मजाज़[7] नहीं। उनके लिए गोशाएतारीक[8] है और फ़िक्रे शिकम[9] बस यही उनकी ज़िन्दगी की कायनात[10] है। हम क्यों परवाह करें कि हमसे तक़दीर ने बेवफ़ाई की? खुदा का शिकवा क्यों करें? क्यों इस ख़याल से मग़मूम[11] हों कि दुनिया हमारी नेमतों से भरी थाली को हमारे सामने से खींच लेती है? क्यों हम फ़िक्र से मुतवहहश[12] हों कि क़ज़ाक़ हमारे ऊपर छापा मारने की ताक में है। ज़िन्दगी को इस मुख़्तलिफ़ निगाह से देखना अपना इत्मीनान क़ल्ब[13] से हाथ धोना है। बात दोनों एक ही है। क़ज़ाक़ ने छापा मारा तो क्या? हार में सारे घर की दौलत खो बैठे तो क्या? फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि एक जब्र है दूसरा अख़्तियार। यह क़ज़ाक़ ज़बर्दस्ती जान और माल पर हाथ बढ़ाता है लेकिन हार ज़बरदस्ती नहीं आती। खेल में शरीक होकर हम खुद हार और जीत को बुलाते हैं। क़ज़ाक़ के हाथों लुट जाना ज़िन्दगी का मामूली वाक़या नहीं हादसा है लेकिन खेल में हारना

---

१ खास गुण २ अधिकारी ३ स्थायी ४ इसी तरह ५ संकीर्ण हृदय ६ लम्बे-चौड़े ७ अधिकार ८ किस्सा कोता ९ पेट की चिन्ता १० कुल दुनिया ११ दुःखी १२ चकित १३ मानसिक शांति

और जीतना मामूली बातें हैं। जो खेल में शरीक होता है वह खूब जानता है कि हार और जीत दोनों ही सामने आयेंगी इसलिए उसे हार से मायूसी नहीं होती जीत से फूला नहीं समाता। हमारा काम तो सिर्फ़ खेलना है खूब दिल लगाकर खेलना खूब जी तोड़ कर खेलना अपने को हार से इस तरह बचाना गोया हम कौनैन[1] की दौलत खो बैठेंगे लेकिन हारने के बाद पटखनी खाने के बाद गर्द झाड़ कर खड़े हो जाना चाहिए और फिर खम ठोंककर हरीफ़[2] से कहना चाहिए कि एक बार और।

खिलाड़ी बनकर आपको यकीनन बड़ा इत्मीनान होगा। मैं खुद नहीं कह सकता कि मैं इस मयार[3] पर पूरा उतरूँगा या नहीं मगर कम से कम अब मुझे किसी नुकसान पर इतना रंज न होगा जितना आज से चन्द साल क़ब्ल हो सकता था। मैं अब शायद न कहूँगा कि हाय जिन्दगी अकारथ गयी कुछ न किया। जिन्दगी खेलने के लिए मिली थी खेल में कोताही नहीं की। आप मुझसे ज्यादा खेले हैं हार और जीत दोनों देखी हैं आप जैसे खिलाड़ी के लिए सिकन्दर तक दौर की ज़रूरत नहीं। कोई गोल्फ़ और पोलो खेलता है कोई कबड्डी खेलता है बात एक ही है हार और जीत दोनों ही मैदानों में है। कबड्डी खेलने वाले को जीत की खुशी कुछ कम नहीं होती। इस हार का ग़म न कीजिए। आपने खुद ही न किया होगा। आप यहाँ मुझसे मुश्ताक़[4] हैं। मैं ५ या ६ मई तक कानपुर आने वाला हूँ। यहाँ की कोई चीज़ दरकार हो तो बेतकल्लुफ़ लिखिएगा। बीमार हालात मेरे पहले खत से मालूम हुए होंगे।

आपका

धनपत राय

१६४

४६। ११ मध्यमेश्वर, बनारस

२१ मई १९३१

भाईजान

तसलीम। आपका २१ मई का कार्ड कल मिला। इसके पहले आपने तीन खत भेजे। मुझे सख्त अफ़सोस है कि इन तीनों में से मुझे एक भी न मिला। *मुझे इसका सख्त रंज है। जिसका सर अपने पैरों पर टिका है।* मैं तो देहात में हूँ। खुतूत शहर में आते हैं। वहाँ से यहाँ तक आने में गायब हो जाते हैं। मैं आज रात को गाड़ी से बहुत जरूरी काम से गोरखपुर जा रहा हूँ। ३१ या १ जून को लौटूँगा। गालिबन जिस दिन यहाँ आपका नामा हो उससे मुझे १

---

१ इहलोक-परलोक २ दुश्मन ३ कसौटी ४ मुश्ताक़ अनुरागी

जून तक अमर के पते से मुत्तिला फ़रमाइए। यहाँ मेरा निज का किराये का मकान है जिसमें प्रेस है। जगह वसीह[1] है मगर इसमें शायद खटपट से तकलीफ़ हो। इसलिए यहाँ के एक अच्छे धर्मशाला में इंतज़ाम कर दूँगा। किसी बात की तकलीफ़ न होगी। हाँ मुझे पहले खत मिल जाना चाहिए ताकि मैं स्टेशन पर खुद या बिलवास्ता[2] मौजूद रहूँ। अगर १ जून या २ जून तक मुझे खत न मिला तो मैं कानपुर आऊँगा और जिस दिन वह यहाँ आना चाहेंगी उन्हीं के साथ मैं भी चला आऊँगा। अभी तो मदरसा १२ दिन बाक़ी है।

और सब खैर-व-आफ़ियत है। प्रेस अभी चला नहीं मगर मशीन फ़िट हो गयी। लकड़ी का सामान तैयार किया जा रहा है।

वस्सलाम

आपका

धनपत राय

१६५

४६। ११ मच्छोदरी बनारस

१८ जून १९२३

माईजान

तसलीम। सेन बाबू की नाकामयाबी का मुझे ताज्जुब है। और क्या कहूँ। ग़ालिबन् यह पिछले साल की तवील[3] बीमारी का नतीजा है।

आपकी बीमारी की खबर इससे भी ज्यादा अफ़सोसनाक है। इस तपिश में बुख़ार की तकलीफ़। शायद यह बनारस की तकलीफ़ का ख़मियाज़ा[4] है जिसका जिम्मेदार एक हद तक मैं हूँ। अगर एक दिन भी रुक गया होता तो मुतलक़ तकलीफ़ न होती। मेरा प्रेस का मकान इतना वसीह, शहर से मुनफ़रिद[5] और फिर इतना दूर और रेल नीचे से है कि इससे बेहतर जगह बनारस में नहीं है। बिल्कुल खुला हुआ और पाक व मुतबर्रिक[6]। कमरे के दरवाज़े खोल दीजिए और गंगा का लुत्फ़ घर बैठे उठाइए। उसे छोड़कर इन्हें मणिकर्णिका घाट पर रहना पड़ा। मेरा एक आदमी भी प्रेस में रहता है। पर क्या करूँ मजबूरन।

अभी प्रेस नहीं खुला। बाबू महताब राय की मातमपुरसी से मुफ़स्सलनामे[7] का इंतज़ार है।

वस्सलाम

नियाज़मंद

[illegible]

---

१ लंबी-चौड़ी २ प्रतिनिधि के ज़रिये ३ लंबी ४ नुकसान ५ भिन्न हुआ ६ पवित्र ७ [illegible]

१६६

मध्यमेश्वर, काशी
३ जुलाई १९२४

बिरादरम

तसलीम। कई दिन से कुछ मिज़ाज की खैर-ओ-आफ़ियत और लड़के-वालों का हालचाल नहीं मालूम हुआ। सेन बाबू ग़ालिबन् अब बिलकुल अच्छे होंगे। मैं तो मरते मरते रह गया। मेरे तीनों लड़कों को चेचक (छोटी) निकल आयी थी। इसके बाद फोड़े फुंसियों का सिलसिला शुरू हुआ जो अभी तक जारी है।

मेरा ताल्लुक १ जुलाई से काशी विद्यापीठ से टूट गया। इंतज़ामिया कमेटी ने स्कूल के इब्तदाई दर्जे तोड़कर बाक़ी कालिज से मिला दिये। हेडमास्टर की ज़रूरत नहीं रही। और मैंने किसी दूसरी जगह पर रहना मंज़ूर नहीं किया। यह तो ज़ाहिर ही है कि चंद महीनों के बाद मुझे इस्तीफ़ा देना पड़ता क्योंकि प्रेस के मुताल्लिक़ कुछ न कुछ काम मुझे भी करना ही पड़ता। लेकिन इस वक़्त कुछ तरद्दुद[1] ज़रूर हुआ। अब जब तक प्रेस से कुछ फ़ायदा[2] न हो क़लम ही का भरोसा है।

मैंने इरादा किया था कि आपको तकलीफ़ न दूँगा। आपकी परेशानियाँ बढ़ी हुई हैं लेकिन मेरी मौजूदा हालत मुझे अपने इरादे पर क़ायम नहीं रहने देती। मकान का क़िस्सा तो आपको पहले ही लिख चुका हूँ। साल भर तक एक सौ बीस रुपये माहवार किराया देना पड़ेगा। मज़ीद[3] तरद्दुद का बाइस यह है कि बाबू महताब राय ने दो हज़ार मंज़ूर किया था। वह नाना साहब से रुपये लेनेवाले थे। नाना साहब ने एक हज़ार तो दिया मगर अब आनाकानी कर रहे हैं। वह एक हज़ार भी अब मुझे ही कहीं से पैदा करना है। इतने रुपयों का बन्दोबस्त होते ही काम शुरू कर दूँगा।

मेरा गोशए-आफ़ियत अभी तक पड़ा हुआ है। क्या करूँ इसे भी लाहौर भेज दूँ? मेरे लिए खुद छापना तो कम अज़ कम दो साल तक मुश्किल है।

प्रेम पचीसी का छपना भी ज़रूरी है। इसी दरमियान में एक नाटक भी हिन्दी में लिख डाला। इसका उर्दू-एडीशन निकलना ज़रूरी है। इस वक़्त एक नाविल लिख ही रहा हूँ जो १ हिन्दी मुकम्मल था १ उर्दू मुकम्मल में कम न डाला। ग़रज़ इस वक़्त मुझे एक अच्छे पब्लिशर की ज़रूरत है जो इन किताबों से कुछ फ़ायदा उठाये और मुझे भी कुछ दे। एक बार फिर नवलकिशोर का दरवाज़ा

---

१ आर्थिक २ संकट ३ लाभ ४ और भी

खटखटाऊँगा । आपसे कुछ मदद माँगते हुए शरम रखता हूँ लेकिन अगर इस वक़्त आप किसी तरह मेरे रुपये भेज सकें तो बड़ा काम चल निकले । मैंने अपने हिन्दी पब्लिशरों से भी रुपया माँगा है । अगर कुछ उधर से मिल गया तो यह एक हज़ार की फ़िक्र दूर हो जायेगी ।

कल रात को खासी बारिश हुई ।

मुझे उम्मीद है कि आप इस मौक़ पर मुझे मायूस न करेंगे ।

वस्सलाम

आपका
धनपत राय

१६७

४६।११ मध्यमेश्वर
बनारस,
१८ जुलाई १९२३

भाईजान

तसलीम । आपका ख़त पढ़कर सख़्त मायूसी हुई । आप उधर परेशान मैं इधर परेशान । कौन किसकी सुने । पर आपके वसायल[1] वसीह[2] हैं मेरे निहायत महदूद[3] । इसलिए मुझे फिर भी यही अर्ज करना पड़ता है कि आप ने मेरी इस ज़रूरत का काफ़ी अन्दाज़ा शायद नहीं किया । मगर इसकी तौज़ीह महज़ इतनी ही न हो सकती है कि मुझे मजबूर हो कर ४०) क़र्ज लेने पड़े । और मकान का किराया २) देने पर फिर ८) बच रहे । अभी आज-कल में Charge या जायेंगे और फिर बिल्कुल तिहीदस्त[4] हो जाऊँगा ।

२ से प्रेस का काम शुरू होगा । मगर ख़ाली हाथ । मेरे पास अब कुछ नहीं रहा । कुल ८) का तख़मीना किया था । मैं ५०) ज़ायद ख़र्च कर चुका । अब कहाँ से लाऊँ । दोस्तों को तकलीफ़ देने के सिवा और क्या करूँ । ४) एक साहब से लिये । अगर आप ३) दे सकें तो एक महीने के लिये कुछ सहारा हो जाय । एक महीने में ग़ालिबन कुछ आमदनी हो ही जायेगी । उम्मीद इस अरसे तक बाबू रघुपति सहाय का मीना फ़रोख़्त हो जाय । इसके बाद भी यह मुझे इससे बचा सकनेवाला है । मैंने तो आप पर बार-बार न आने के लिए लिखा था कि आप माहवार १) दे दें तो मैं मकान के किराये से सुबुकदोश हो जाऊँ ।

---

१ साधन २ विस्तृत ३ सीमित ४ रिक्तहस्त

आप की तरद्दुदात का अन्दाज़ा कर रहा हूँ। जानता हूँ कि मकान की तामीर[1] में काफ़ी रक़म सर्फ़ करनी पड़ेगी। मगर मेरा मकान भी तो अभी पूरा नहीं हुआ। सिर्फ़ गुज़र करने के क़ाबिल हो गया है। अभी एक हज़ार और लगें तो मुकम्मल हो। इसे मैंने ज़्यादा इत्मीनान के मौक़े के लिए टाल दिया है। और क्या अर्ज़ करूँ।

मुझे एक ज़रा रक़म के लिये बार बार आप को तकलीफ़ देते हुए शर्म आती है। मैंने उस वक़्त तक लिखने से तवक्कुफ़[2] किया जब तक किसी ज़रिये[3] से मेरा काम चल सका। पर अब मजबूर हो गया हूँ। अगर आपने इमदाद न की तो फिर क़र्ज़ लेना पड़ेगा। इसके सिवा और कोई चारा नहीं है। मैं बड़ी बेताबी से

मगर ख़्वामख़्वाह क्यों आप पर अपनी ज़रूरत की अहमियत साबित करने की कोशिश करूँ। आप ख़ुद समझ सकते हैं। आप को मेरी माली हालत का इल्म है। मैंने ऐसे मौक़े के लिए आप से ज़्यादा इमदाद की तवक्क़ो[4] की थी। इतना मायूस न कीजिये। मेरे सामने साहब को आप जानते हैं। मेरी मजबूरी का अन्दाज़ा महज़ इससे कर सकते हैं कि मैंने इस बन्दए ख़ुदा से मदद माँगने से भी गुरेज़ न किया। हालाँकि वहाँ क्या मिलना था। जवाब तक न आया।

ज़्यादा वस्सलाम

नियाज़मन्द
धनपत राय

१६८

सरस्वती प्रेस, मम्मेरवर
बनारस
१४ अगस्त १९२९

बरादरम

तसलीम। जब से आया हूँ आप ने कोई ख़त नहीं भेजा। लाहौर से किताबें आ गयीं या नहीं। मेरी तहरीर के मुताबिक़ उनकी तादाद निकली या नहीं। यानी हिस्सा अव्वल की १८ और हिस्सा दोयम की १२। मैंने अब इरादा कर लिया है कि अपनी उर्दू किताबें ख़ुद ही छाप लूँ। एक छोटा सा लीथो प्रेस ले लूँ। ग़ालिबन आपने प्रेस का ज़िक्र फ़रमाया था। कैसा प्रेस है। क्या साइज़ है। अभी काम दे रहा है? कल-पुर्ज़े दुरुस्त हैं? उसके साथ पत्थर भी है या नहीं? 'डमाया' के ४ सफ़े एक बार देता है या ८? इन उमूर से मुझे जिस क़दर

१ निर्माण २ विलम्ब ३ तरीक़े ४ आशा

जल्द मुमकिन हो मुत्तला फ़रमाइये। अब ताख़ीर[1] करने से कोई फ़ायदा नहीं। 'ज़माना' के मुताल्लिक़ जनाब ख़्वाजा साहब ने मुझे एक किताब दिखाई थी जिसमें मरासी[2] के इन्तख़ाब थे। बराहे करम उसकी एक जिल्द मेरे पास भिजवा दें और क़ीमत मेरे नाम दर्ज फ़रमायें। निहायत मशकूर हूँगा। यहाँ और सब ख़ैरियत है। कांग्रेस हो रही है। × × ×

बाबू रघुपति सहाय तशरीफ़ लाये हुए हैं। 'ज़माना' का ताज़ा पर्चा मेरे पास नहीं आया। क्या अभी नहीं निकला। उम्मीद है कि आप मलेरिया की ज़द में न आये होंगे।

आपका

धनपत राय

१६९

सरस्वती प्रेस

बनारस

२१ सितम्बर १९३१

भाईजान

तसलीम। मिज़ाज शरीफ़। 'तहज़ीबे निस्वाँ' के दफ़्तर से आपके यहाँ 'प्रेम बत्तीसी' हिस्सा अव्वल १८ 'प्रेम बत्तीसी' हिस्सा दोम १८ जिल्दें रवाना की गयी हैं। रसीद से मुत्तला फ़रमायें और अपने यहाँ दर्ज करा दें।

मैं तो अब न यहाँ आया हूँ अपने नये नाविल के लिखने में हमातन[3] मसरूफ़ हूँ। आप ने भी याद नहीं किया।

बाबू विशन नारायण साहब के यहाँ से अब ज़ेर-बहस[4] के मुताल्लिक़ कोई ख़त नहीं आया। मैंने ख़ुद दो बार लिखा पर जवाब नदारद। समझ गया वह भी एक रईसाना ख़याल था। दाद है हमारे शर्फ़ा की तसाहुल-मिज़ाजी[5]। *ख़त का जवाब तक देना मंज़ूर नहीं और दावा किया बज़्मे यार!*

आपका

धनपत राय

१७०

बनारस

२९ दिसम्बर १९३१

भाईजान

तसलीम। उम्मीद है अब आपको ज़ुकाम से नजात हो गयी होगी। वरना

---

१ देर २ मर्सियों ३ पूरी तरह ४ विचाराधीन बातों ५ अलसीपन

तकलीफ दी। मैं तो अच्छी तरह हूँ अभी बीमार नहीं हूँ।

बाबू रघुपति सहाय ने एक मुशायरा बेल की रिपोर्ट भेजी है। देख लें। कहीं दर्ज करा दें तो अच्छा हो। ग़रीबों की आरज़ू बर आये।

सर्दी तो वहाँ भी खूब पड़ती होगी। कई दिन से अब्र-ओ-बाद ने नाक में दम कर रखा है। बाल-बच्चे मज़े में हैं। उम्मीद है वहाँ भी सब भगवान की कृपा होगी।

प्रेस अभी तक नहीं आया। हाँ अब उम्मीद है कि अब औरों का काम भी करने का सुभीता निकल आये। सरमाये[१] में इत्मीनान होने की कमी[२] उम्मीद है। और क्या अर्ज़ करूँ। बच्चों को दुआ।

आपका

धनपत राय

१७१

सरस्वती प्रेस बनारस

६ जनवरी १९२४

भाईजान

तसलीम। दुआए ख़ैर के लिए मशकूर हूँ। यहाँ ईमानन[३] दुआ हो रहा हूँ। मुझे बंगाल के समझौते में बजुज़ इस गुण्स के कि इसकी इशाअत[४] बेमौक़ा थी और कोई ख़ास गुण्स नज़र नहीं आता। एक सूबे का समझौता हर एक सूबे के लिए क़ाबिले अमल नहीं हो सकता और हर एक सूबे को अपने ज़रूरत[५] के एतबार से उसमें तरमीम करने का अख़्तियार है। लाला लाजपत राय जी ने मिस्टर दास के साथ किसी क़दर ज़्यादती की है। और मुझे तो इस वक्त अभी बरा-दराम की मुत्तहकुम[६] पालिसी फ़रोख़्ता[७] कर रही है। उनके ख़यालात में जो हैरत अंगेज़ इन्क़लाब हो रहे हैं उसको असली शुद्धि समझता हूँ और यही शुद्धि देर-पा हो सकती है। आपने मेरे मज़मून को मुस्तरद[८] कर दिया। ख़ैर कोई मुज़ायक़ा नहीं। मैंने लिख डाला दिल की आरज़ू निकल गयी।

काग़ज़ के नमूने देखे। वही दलदार सफ़ेद २४ पौण्ड का काग़ज़ मुझे पसंद है। यहाँ वैसा काग़ज़ नहीं है। २४ पौण्ड का काग़ज़ उसी क़िस्म का मिलता है। दाम साढ़े सात रुपये यानी यही पाँच आने पौण्ड मगर शायद रेल के किराये के अलावा आने में देर होगी और रुपये अगर देना पड़ेंगे। इसलिए मैं २४ पौण्ड ही का लूँगा। क्योंकि यहाँ पैकेट मिल जायेंगे। × × ने मजबूर कर रखा है।

१ पूँजी २ कमतर ३ ईमान की बात है ४ प्रचार ५ ज़रूरतों ६ साम्प्रदायिक ७ ... ८ अस्वीकृत

× × आप तकलीफ़ न करें। हाँ अगर कुछ इमदाद कर सकें तो मशकूर होऊँगा।

और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है। बच्चों को दुआ।

आपका

धनपतराय

१७२

सरस्वती प्रेस बनारस
१७ फ़रवरी १९२४

भाईजान

तसलीम। एक हज़ार शुक्रिया मय सूद। बहुत अरसे पर आपने इरशाद फ़रमाई। मज़ामीन लिखने की बार बार कोशिश करता हूँ मगर मज़ामीन लाज़िमा हिन्दी रसायल इस क़दर तलब करते हैं कि कुछ लिखे नहीं बन पड़ता। अब मैं कहानियाँ उर्दू में नहीं हिन्दी ही में लिखकर भेज दिया करता हूँ। इसलिए मेरी एक राय है। मैंने इधर पाँच महीने में अपने नॉविल रंगभूमि के साथ एक ड्रामा लिखा है जिसका नाम है कर्बला। इसमें कर्बला के वाक़यात पर तारीख़ी हैसियत को क़ायम रखते हुए एक ड्रामा लिखा गया है। मैंने ख़त तो हिन्दी रखा है मगर ज़बान सरासर उर्दू है। ग़ालिबन[1] हिन्दी पब्लिक इसकी क़द्र न करे पर मैंने मुसलमान कैरेक्टरों की ज़बान से ख़ालिस[2] हिन्दी निकलवाना बेमौक़ा समझा। नाटक इसी हफ़्ते में मतबे में चला जायगा। मेरे ही मतबे में। इस वक़्त नज़र-सानी कर रहा हूँ। मैं इसे सिलसिलेवार ज़माना में दे दूँ तो क्या राय है। क़िस्सा निहायत दिलचस्प है निहायत दर्दनाक। मैंने माधुरी में कर्बला पर एक मज़मून लिखा था जिसकी क़द्र भी काफ़ी हुई। कोई वजह नहीं कि उर्दू में ड्रामा मक़बूल न हो। इसमें मुझे मज़मून निगारी[3] न करनी पड़ेगी सिर्फ़ ख़त तब्दील कर देना पड़ेगा। बाद को यह सिलसिला किताबी सूरत में निकल जायगा। इसका यक़ीन रखिए कि मैंने एहतराम[4] को कहीं नज़र अन्दाज़ नहीं होने दिया है। एक एक लफ़्ज़ पर इस बात का ख़याल रखा है कि मुसलमानों के मज़हबी एहसासात[5] को सदमा न पहुँचे। मक़सद है पोलिटिकल बाहमी इत्तहाद[6] का बढ़ाना और कुछ नहीं। आपका जवाब आने पर पहला सीन इरसाल ख़िदमत होगा। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि उर्दू में ऐसा दिलचस्प ड्रामा न होगा। हाँ ज़बान की इस्लाह[7] भर इमकान में करें। वाक़या ख़ुद ही इतना दिलचस्प और दर्दनाक है कि ड्रामे के लिए निहायत मौज़ूँ है।

---

१ सम्भवतः २ शुद्ध ३ रचना, लेखन ४ आदर सम्मान ५ धार्मिक भावनाओं ६ आपसी एकता ७ सुधार, संशोधन

और क्या अर्ज करूँ। प्रेस चल रहा है। अभी नफ़ा तो नहीं हो रहा है मगर अपना खर्च आप सह लेता है। साल आखिर तक मुमकिन है कि कुछ नफ़ा भी होने लगे। बच्चे अच्छी तरह हैं। नई आमद इमरोज़-फ़र्दा[१] में होनेवाली है। अपनी हिमाक़त पर अफ़सोस करता हूँ और फ़क़त बरवक़्त बरआमद दरख़्वास्त[२] के मिसदाक़[३] अपने किये पर नादिम और मुतास्सिफ़[४] हूँ।

बच्चों को दुआ। परमात्मा आपको मक़सद में कामयाब करे। ईश्वर ने चाहा तो जल्द कानपुर आऊँगा।

१७३

सरस्वती प्रेस
१ मई १९२४

बरादरम

तसलीम। मातमपुरसी का मशकूर हूँ। क़िस्सा साफ़ करने की नौबत नहीं आयी। वादा न पूरा करने का नादिम हूँ। ब्याह की तारीख़ क़रीब[५] है। ईशा अल्लाह।

जुलाई की याद भी है। ईशा अल्लाह।

यहाँ के दीगर हालात साबिक़ दस्तूर हैं। मकान अब एक क़रीब का बन गया। अब इसकी हैसियत मकान की हो गयी। उम्मीद है बाल-बच्चे अच्छी तरह होंगे।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१७४

सरस्वती प्रेस, बनारस सिटी
५ जून १९२४

भाईजान

तसलीम। मैं १ जून को न आ सका। इसके लिए मआज़रत[६] करते हुए मुझे निहायत अफ़सोस मालूम होता है। मेरी छोटी लड़की जो ८ मार्च को पैदा हुई थी २८ की शाम से दस्त और बुखार में मुब्तिला हुई। मैं समझता था आरिज़ी शिकायत है रफ़ा हो जायगी मगर शिकायत बढ़ती गयी यहाँ तक कि ३ तारीख़ को उसकी हालत इतनी अबतर हो गयी कि घर में लोगों ने रोना-

१ आज-कल २ शिकारी का हुक्का बरमे ऊपर निकलता है ३ अनुसार, समान ४ दुखी ५ क़रीब ६ क्षमा-याचना

पीटना भी शुरू कर दिया। मगर सुबह को उसे ज़रा सा इफ़ाक़ा[1] हुआ। तब से अब तक न वह मुर्दा है न ज़िन्दा है। आँखें बंद किये पड़ी रहती है और रोया करती है। होमियोपैथिक की दवाएं दे रहा हूँ मगर अभी तक कोई दवा कारगर नहीं हुई। सब्र[2] और ज़ब्त[3] इस क़दर हो गयी है कि अगर अब जाये तो मैं उसे ईश्वर की ख़ास रहमत समझूँ। मुझे बार बार अफ़सोस होता था कि मैं इस तक़रीब[4] में न शरीक हो सका। मगर अब लोग एक बच्चे की चारपाई के पास बार बार उसका मुँह ताक कर देख रहे हैं कि अभी नीचे उतारने का वक़्त आया या नहीं ऐसी हालत में सिवाय इसके और चारा नहीं कि ईश्वर को यह बात मंज़ूर न थी और इसका क़लक़ मुझे ता-उम्र रहेगा। ख़ैर अब तो जो कुछ होना था हो चुका। शादी बहुस्न-ओ-ख़ूबी अंजाम पा गयी होगी। अहबाब ने ख़ूब दावतें उड़ायी होंगी। इस पर आपको मुबारकबाद देता हूँ। मुझे इस तक़रीब में शरीक न हो सकने का दिली सदमा है। मजबूरी माने हुई। सख़्त मजबूरी जिसका मुतलक़[5] गुमान न था। और क्या लिखूँ। आपसे अपनी दास्ताने ग़म सुनाना इस वक़्त निहायत बेमौक़ा है, बेमुरव्वती है। मगर मशीयत भी कोई दूसरी सूरत पैदा ही न हो सकती थी सिवाय इसके कि मैं ख़ुद बीमार हो जाता।

ईश्वर बने और बनी को हयात-ए-अबदी अता फ़रमाये और उनकी ख़ाना आबादी मुबारक हो। शायद नहीं कि क़सीदा[6] या तहनियत-नामा[7] लिखूँ।

वल्लाह मेरी शिरकत किसी वजह से न हो सकी लेकिन मैं इसे हमेशा अपने लिए बाइसे हिरमाँ[8] समझूँगा।

१७५

बनारस

११ जून १९२४

भाईजान

तसलीम। उम्मीद है कि आप बख़ुशी व ख़ुर्रमी[1] शादी करके वापस आ गये होंगे और अहबाब की दावत-तवाज़ो से फ़ारिग़ हो गये होंगे। यहाँ तो सात को लड़की रुख़सत हो गयी। उसकी बे-कसानी[2] तसवीर अभी तक आँखों में फिर रही है। मालूम को परमात्मा सद्गति दे। गर्मी इतनी शिद्दत की है कि कोई काम

---
१ तबीयत सुधरी २ [illegible] ३ [illegible] ४ उत्सव ५ बिलकुल ६-७ [illegible] काव्य ८ [illegible]
१ ख़ुशी २ मन का [illegible]

के दे दिये, माल अभी तक लापता है। हालाँकि कंपनी से लिखा-पढ़ी हो रही है। पाँच महीने से पाँच सौ रुपये फँसे हुए हैं। मशीन आ जाती तो अब तक उससे कुछ आमदनी हो गयी होती। देखिए माल का पता लगता है कि कंपनी से रुपये मिलते हैं।

क्या लड़कों को क़ानून पढ़ाऊँगा। और रास्ता ही कौन सा है। या मुलाज़मत या क़ानून। मैंने तो फ़ैसला किया है कि अपने लड़के को थोड़ा सा पढ़ाकर कारोबार में लगा दूँ। अक़्ल होगी तो यहीं भी दौलत पैदा कर लेगा। और क्या अर्ज़ करूँ।

आपका
धनपत राय

१७८

सरस्वती प्रेस, काशी
२२ जुलाई १९२४

भाईजान

तसलीम। बेहतर है कि कर्बला न निकालिए। मेरा कोई नुकसान नहीं है। न मैं मुफ़्त का इलज़ाम[1] सर पर लेने को तैयार हूँ। मैंने हज़रते हुसैन का हाल पढ़ा। उनसे अक़ीदत[2] हुई। उनके जौहरे शहादत ने मुतास्सिर कर लिया। उसका नतीजा यह ड्रामा था। अगर मुसलमानों को यह भी मंज़ूर नहीं है कि किसी हिन्दू की ज़बान-ओ-क़लम से उनके किसी मज़हबी पेशवा या इमाम की मद्ह सराई[3] भी हो तो मैं इसके लिए मुसिर नहीं हूँ। इस काम का जवाब देना तो फ़िज़ूल है, हाँ हज़रत हसन के मुताल्लिक़ कुछ अर्ज़ करना चाहता हूँ। आप फ़रमाते हैं शिया हज़रात यह नहीं पसंद कर सकते कि उनके किसी मज़हबी पेशवा का ड्रामा तैयार किया जाये। शिया हज़रात अगर मज़हबी पेशवा की मसनवी पढ़ते हैं, मक़्तले पढ़ते हैं, मर्सिये सुनते और पढ़ते हैं तो उन्हें ड्रामा से क्यों एतराज़ हो। क्या इसलिए कि एक हिन्दू ने लिखा है?

तारीख़ और तारीख़ी ड्रामा में फ़र्क़ है। जैसा आप ख़ुद तसलीम करते हैं। तारीख़ी ड्रामा ख़ास कैरेक्टरों में तो कोई तग़य्युर[4] नहीं कर सकता मगर सानवी[5] कैरेक्टरों के तग़य्युर[6] और तरमीम[7] यहाँ तक कि तख़लीक़ में भी उसे आज़ादी है। हज़रत असग़र की उम्र छः माह की.... लेकिन बाज़ रिवायतों में छः साल की भी लिखी हुई है। मैंने वही रिवायत अख़्तियार की जो मेरे मुआफ़िक़ हाल थी। अगर बिलफ़र्ज़[8] ऐसी रिवायत न भी हो तो हज़रत असग़र इस ड्रामा के कोई *ख़ास कैरेक्टर नहीं है।*

वज़ीर की अख़लाक़ी[10] हैसियत मुझसे कहीं ज़्यादा बेहतर मुअर्रिख़ीन[11] ने

---

१ इलज़ाम २ श्रद्धा ३ स्तुति ४ परिवर्तन ५ गौण ६ परिवर्तन ७ संशोधन ८ मान लीजिए ९ [illegible] १० नैतिक ११ इतिहासकारों

कर दी है। मैं मजबूर था। मैंने तो सिर्फ उसकी शराबखोरी और एय्याशी का जिक्र किया है। शराबख्वार था ही।

खुलफ़ाए राशिदीन के बाद और जितने खुलफ़ा हुए सब पीते थे और बहुत से पीते थे। देखिए यज़ीद के मुताल्लिक मौलाना अमीर अली क्या फरमाते हैं

Yezid was both cruel and treacherous his depraved nature knew no pity or justice His pleasures were as degrading as his companions were low and vicious. He insulted the ministers of religion by dressing up a monkey as a learned divine and carrying the animal mounted on a beautifully caparisoned Syrian donkey Drunken riotousness prevailed at court...

अमीर अली को तो आप मुस्तनद मानते ही होंगे। क्या मैंने यज़ीद को इससे भी ज्यादा पस्त कर दिया है? आप फरमाते हैं, हालांकि वह मुसलमान था। खूब कहा है। नवाब रामपुर भी तो मुसलमान था।

तारीखी हैसियत से आपने साहब राय के तास्सुब[1] पर एतराज़ किया है। बेशक अवाम[2] रिवायात में इसका कोई जिक्र नहीं। मगर एक रिवायत जो मैंने रिसाला मारिफ़ इलाहाबाद से ली है, मुमकिन है वह रिवायत गलत हो। लेकिन अगर मान लीजिए बैत-ए-वास्ता ही के लिए ली गयी है तो? ड्रामा तारीख तो नहीं है। इससे किसी तारीखी कैरेक्टर पर असर नहीं पड़ता। इन कैरेक्टरों का मंशा है हिन्दुओं का हज़रत हुसैन पर फ़िदा हो जाना। उनका वजूद[3] भी इसीलिए हुआ है। यह ड्रामा तारीखी होने के साथ पोलिटिकल है। मज़हबी हैसियत से मुस्तसना[4]। आपका एतराज़ तो बसरो चश्म तसलीम करता हूँ। मैंने कभी अदीब होने का दावा नहीं किया। मुझे लोग ज़बरदस्ती इंशापरदाज़[5] और सेहरनिगार[6] और अल्लम गल्लम लिख दिया करते हैं। मैं बात को सीधी तरह सीधी ज़बान में कह देता हूँ। रंग आफ़रीनी और इंशापरदाज़ी में क़ासिर[7] हूँ। और जब ड्रामा इसलिए तैयार किया गया है कि हर खास व आम उसे पढ़े तो ज़बान-आराई[8] और भी बेमौका हो जाती। बहरहाल मैं ड्रामा की इशाअत के लिए मुसिर नहीं हूँ। इसलिए यह बहस मुल्तवी और खत्म हो गयी।

ख्वाजा हसन निज़ामी ने कृष्ण बीती लिखी। एक हिन्दू अखबार ने उनकी तारीफ़ की सिर्फ इसलिए कि मौलाना ने कृष्ण से अपनी अकीदत का इज़हार किया था। मेरा भी यही मंशा – अगर हसन निज़ामी को यह आज़ादी हासिल है और मुझे नहीं है तो मुझे इसका अफ़सोस नहीं। बराहे करम उस मुसव्वदा को

१ दर्शनीय रोजन अक्ल २ पुराना ३ अस्तित्व ४ अलग ५ रचनाकार ६ कविता के जादू देनेवाला ७ रंग भरना, सजावट ८ रचना शिल्प असमर्थ ९ भाषा की सजावट

वापस फ़रमा दीजिए। हाँ मैं यह अर्ज करना भूल गया। ड्रामे दो किस्म के होते हैं। एक क़िरअत[1] के लिए एक स्टेज के लिए। यह ड्रामा महज़ पढ़ने के लिए लिखा गया था। खेलने के लिए नहीं।

ज़्यादा वस्सलाम।

आपका
धनपत राय

१७६

सरस्वती प्रेस, बनारस
५ अगस्त १९२४

भाईजान

तसलीम। लिफ़ाफ़ा मिला। मशकूर हूँ। मैं कई दिन से ख़त लिखने का इरादा कर रहा था लेकिन मारे नदामत[2] के क़लम उठाने की हिम्मत न पड़ती थी।

प्रेस ने मुझे इस क़दर परेशान कर रखा है कि मैं तंग आ गया हूँ। वह बुरा वक़्त था जब मेरे सर में यह सौदाए ख़ाम[3] समाया। आपकी ख़िदमत में बक़ायादारों की यह फ़ेहरिस्त जो इस वक़्त मेरे सामने रखी हुई है इरसाल कर रहा हूँ। देखिये तब मेरी परेशानियों का सही अन्दाज़ा आप कर सकेंगे। २२७८) बक़ाया पड़े हुए हैं और इनके वसूल होने में अभी न जाने कितनी देर है। इधर मुझ पर १) टाइप के और ४) काग़ज़ के और २) किराया मकान के सवार हैं। मैं तो मुतफ़र्रिक़ रक़ूम न आने का [illegible] पर मेरे तक़ाज़ेदार दम नहीं लेने देते हैं। दो किताबें शुरू कराई थीं मगर तख़मीने के ख़िलाफ़ अभी तक एक किताब तैयार ही नहीं हुई।

मैंने सोचा था सितम्बर अक्तूबर तक दोनों किताबें तैयार हो जायेंगी। बक़ाया वसूल हो जायगा। किताबें बिक जायँगी। रुपयों की किल्लत रफ़ा हो जायेगी। मगर वह सारे मंसूबे परेशान हो गये। न किताबें तैयार हुईं न बक़ाया वसूल हुआ। बल्कि हर महीने में कुछ न कुछ बढ़ता गया। अभी कोशिश कर रहा हूँ कि किसी बुकसेलर से मुआमला करके यह सब छपी हुई जिल्दें लागत पर देकर अपने तक़ाज़ादारों का अदा कर दूँ। बक़ायादारों से रफ़्ता रफ़्ता वसूल होता रहेगा। हालाँकि इनमें से कम अज़ कम ५) Bad debt में चले जायेंगे। ईश्वर जानता है मैं हीलासाज़ी नहीं कर रहा हूँ। आख़िर हीला करता ही क्यों। आप मुझ से दोस्ताना मरासिम[4] के तौर पर तो नहीं माँग रहे थे। दर असल मैंने यह झंझट मोल लेकर अपनी जान आफ़त में फँसाई। नहीं तो मेरे खाने भर को बहुत काफ़ी

१ पढ़ने २ शर्म ३ पागलपन ४ व्यवहार

था। इसी तरह उर्दू में लिटरेरी काम भी नहीं होता। अब प्रेस को बकाया से आज़ाद करने और बाज़ारी काम से मुस्तग़नी[१] होने के लिये इस फ़िक्र में हूँ कि रोज़ाना 'हमदर्द' की एक हिन्दी हफ़्तावार नक़ल 'हिन्दी हमदर्द' के नाम से शाया करें। मगर इसके लिए भी रुपये की ज़रूरत है। देखिये परमात्मा क्या करते हैं।

घर में अभी रोज़ अव्वल हूँ। यहाँ इलाज में सहूलियत न देख कर इलाहाबाद पहुँचा था कि शायद शहर में बाक़ायदा इलाज से कुछ फ़ायदा हो। लेकिन आज तीसरा दिन है इलाहाबाद से लौटकर आया हूँ। वहाँ यहाँ से भी बदतर हालत हो गयी है। अब इसी मज़ारे[२] में आकर सिया जाऊँगा। जानता हूँ कि यह सारी परेशानियाँ ख़त्म हो जायेंगी। कम अज़ कम इसकी उम्मीद करता हूँ। मगर अब यह नहीं कह सकता।

मैं इलाहाबाद गया हिन्दू होस्टल में भी गया रात भर वहीं रहा भी पर प्रेम बाबू को न देखा। मुझे याद ही न रहा कि वह यहीं हैं वर्ना ज़रूर मिलता।

अब 'कलमा' को सुनिए। अब आप को मालूम हो गया कि मैंने हिन्दू ज़हूर[३] को शामिल किया था वह तारीख़े वाक़्या[४] है। आप इसे निकालना शुरू करें। इसमें इज़ाफ़ा[५] करने की ज़रूरत न होगी। मैंने हज़रत हुसैन की ज़बान से कोई आशिक़ाना ग़ज़ल नहीं नहीं अदा कराई है। यज़ीद की मजलिस में ग़ज़लें गाई गयी हैं और बेमौक़ा नहीं हैं। ग़ज़लों का इन्तख़ाब अच्छा नहीं हुआ है तो आप को इख़्तियार है। अहसन साहब से अच्छी ग़ज़लें चुनवाकर शामिल कर दीजिये। मगर क्या सख़्ती भी यह ग़ज़ल अच्छी नहीं है।

गर्मी ऐश के बैठे दुआ करनेवाले
उठे हाथ उठा कर दुआ करनेवाले।—काफ़ी सूफ़ियाना ग़ज़ल नहीं है?
या
हाँ मुझे साक़ी भरे मैख़ाना आज
और हो भर दे मेरा पैमाना आज।—अच्छी नहीं है?
या
शबे वस्ल वह रूठ जाना किसी का
वह रूठे को अपने मनाना किसी का।

बहरहाल मैं मजबूर न कीजिए। यह देखिये कि ग़ज़ल मौक़ा[६] मामज़रम चुस्ती हुई है या नहीं। गाने के लिये मौज़ूँ है या नहीं। ग़ालिब की ग़ज़ल या नाज़िम की या यज़ीद की या बदमस्त की गाने के काम की भी न होगी। वहाँ इबारतें इस्तआरे[७] इस क़दर होते हैं कि वह बईदे फ़हम हो जाती है।

१ निवृत्त २ समस्तो ३ नाटक ४ ऐतिहासिक घटना ५ बढ़ाना ६ अवसर ७ ... उदाहरण बनाना व उदाहरण आदि

मिर्ज़ा बाक़र अली खाँ साहब ने अगर कुछ तरमीमात की हैं तो कोई मुज़ायका नहीं। वाक़या यह है कि मैंने हिन्दी से खुद तर्जुमा नहीं किया है। मेरे एक नार्मल स्कूल के दोस्त मुंशी मुनीर हैदर साहब क़रैशी हैं उन्हीं से करा लिया है। अब बक़िया हिस्सों का तर्जुमा मैं खुद करूँगा। तब जो खामियाँ होंगी वह ज़रूर निकाल दूँगा। ज़बान के लिहाज़ से किसी को हर्फ़गीरी[1] का मौक़ा न दूँगा। मेरे अहबाब ने हिन्दी में यह ड्रामा पढ़ा है और उसकी तारीफ़ की है। रघुपति सहाय तो इस पर एक तबसरा लिखनेवाले हैं। और क्या अर्ज़ करूँ। बारिश नहीं होती। क़हत के आसार हैं। कोहरा पड़ने लगा। शबनम गिरनी शुरू हो गयी। मुसीबत का सामना है।

आप को डाक्टर इक़बाल का पता मालूम हो तो बराहे करम मुत्तला फ़रमाइये। मैं उनके कलाम का इन्तख़ाब आपके तबसरे[2] को दीबाचा[3] बना कर हिन्दी में शाया करने का इरादा कर रहा हूँ। यह भी तहरीर फ़र्माइयेगा कि उनका कलाम सब का सब कहाँ मिलेगा। काग़ज़ तमाम हो गया।

आपका
धनपत राय

१८०

लखनऊ
३ सितम्बर १९२४

भाईजान

तसलीम। आपका मुहब्बतनामा कई दिन हुए मिला। मशकूर हूँ। खूब आप मेरी शिकस्ता-पाई[4] का शिकवा करते हैं हालांकि आप कानपुर से हिलने का नाम नहीं लेते।

कर्बला आप शाया करना शुरू कर दें। यों तो इसका तमाम होना बहुत मुश्किल है। हाँ जब निकलना शुरू हो जायेगा तो झक मारकर लिखना पड़ेगा। तब मिज़ाज हीलासाज़ को कोई हीला न होगा।

ज़माना के लिए एक दर्दअंगेज़[5] क़िस्सा लिखा है। कल या परसों तक भेज दूँगा।

हिन्दू-मुस्लिम फ़िसादात का सिलसिला जारी है। मैंने पहले ही पेशीनगोई की थी। वह हर्फ़ ब हर्फ़ सही साबित हो रही है। हिन्दू सभा दिल्ली में भी शायद समझौता न होने दे। लखनऊ में ज़ियादती हिन्दुओं की तरफ़ से हुई मगर

१ आपत्ति करने २ समीक्षा ३ भूमिका ४ पैरों की थकान ५ दर्दपूर्ण

बाद को किसी ने मुँह न दिखाया। Wit, Humour and Fancy of Persia ज़रा एक हफ्ते के लिए मेरे पास भेजने की इनायत कीजिए। देखने का इश्तियाक़ है। ज़रूर भेजिए। शायद मज़मून के लिए कोई मसाला मिल जाय। मुंतज़िर रहूँगा। और तो सब ख़ैरियत है। तिलिस्मी तुहफ़ा बहुत दिलचस्प है। तर्ज़ तहरीर निहायत दिलनशीं[1]।

नियाज़मंद

धनपत राय

१८१

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ

११ मार्च १९२५

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। रुपया अभी नहीं मिला। इनके रुपये किताबों में फँस गये हैं। इस वजह से मेरी उम्मीद के ख़िलाफ़ हस्बुलतलब[2] न मिल सके। दो हफ्ते का वादा है। क्या हुक्काम इतने दिनों तक मुंतज़िर न रह सकेंगे? मुझे आपको फिर याददिहानी की ज़रूरत न पड़ेगी मिलते ही भेज दूँगा।

जी हाँ किताबत और छपाई के ख़याल से मैंने अपनी दोनों किताबों को अपना लेने ही का इरादा किया है। शहर की मसनवी भी छपवाये देता हूँ। उनको पब्लिशर की तलाश है और पब्लिशर मिलता नहीं। छपवाकर उन्हें दे दूँगा चाहे ज़माना एजेंसी को दे दूँगा।

और क्या अर्ज़ करूँ। बच्चों को दुआ।

आपका

धनपत राय

१८२

गंगा पुस्तकमाला लखनऊ

२ अप्रैल १९२५

बरादरम

तसलीम। लिफ़ाफ़ा मिल गया। ख़त भी मिला। मैंने उसी वक़्त जवाब भी लिखा पर भेज न सका। आज भेज रहा हूँ। अफ़सोस है बाबू दुलारे लाल जी अभी तक नहीं आये। मुझे बेहद नदामत हो रही है। मुझे उम्मीद नहीं थी कि

१ सुहावनी २ मौक़े पर

यह इतने दिन के लिए जा रहे हैं। सिर्फ़ चार दिन में लौट आने का वादा था। पर आज गये हुए सोलह दिन हो गये। शायद दो एक दिन में आ जायें। इधर से कारगुज़ारी[1] होते ही मैं हाज़िर करूँगा। यक़ीन है। मौक़ा मिला तो ख़ुद ही लेकर आऊँगा।

वस्सलाम

नियाज़मन्द

धनपत राय

१८३

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ

तिथि अनुमानतः मई-जून १९२५

भाईजान

तसलीम। दोनों मज़ामीन देखे। इनके मुताल्लिक़ क्या अर्ज़ करूँ। पंडित माधोराम साहब को शिकायत है कि मैंने इसलाही[2] कहानियाँ नहीं लिखीं और अख़्तर पीयर महाशय को शिकायत है कि इसलाही मक़ासिद क़िस्सों को ख़राब करते हैं। मेरे निस्फ़ से ज़ायद क़िस्से किसी न किसी तमद्दुनी[3] मुआमले से मुताल्लिक़ हैं। बाज़ारे हुस्न प्रेमाश्रम 'रंगभूमि' कोई भी इसलाह से ख़ाली नहीं। मगर आप मज़मून शाया कर सकते हैं।

दूसरा मज़मून मालूम नहीं किस का लिखा हुआ है। मगर कोई लखनवी साहब हैं। एतराज़ उनके बिल्कुल ठीक हैं लेकिन उन्होंने क़िस्से का असली मंशा न समझ कर उन जुज़इयात[4] से बहस की है जिन पर रोशनी डालना मेरा इरादा न था। देखने की बात सिर्फ़ इतनी है कि उस वक़्त लखनवी रऊसा की यह Mentality थी या नहीं जिस का मैंने ज़िक्र किया है। बस। इसे भी आप शाया कर सकते हैं।

दुलारे लाल आज दो हफ़्ते से बाहर गया हुआ है। ४ को गया था। उसी दिन शायद मैंने आपको ख़त भी लिख दिया था। लेकिन अब तक उम्मीद के ख़िलाफ़, वापिस नहीं आया। मुझे कामिल उम्मीद है कि तीन चार रोज़ के अन्दर वह आ जायगा और मैं अपने वादे को पूरा कर सकूँगा।

सोशल नावल की बाबत। मैं जब कभी इस क़िस्म का इरादा करता हूँ तो मुझे फ़ौरन बरबादियों का ख़याल आता है कि मैं तो वहाँ तफ़रीह करूँ और यह

---

१ कार्यवाही २ सुधारवादी ३ सांस्कृतिक ४ छोटी-छोटी बातों

हमारे यहाँ पड़े पड़ा करें। तबदील की ज़रूरत किसको नहीं महसूस होती लेकिन जो खुदमुख्तार है वह अपना इरादा पूरा कर सके हैं जो मोहताज है वह दिल में सोच कर रह जाते हैं। इसी ख़याल से रुक जाता हूँ। घुनके भर को ले के जाना मुश्किल। इसलिये यहीं पड़ा रहूँगा। खस का एक पर्दा और दो तीन पैसे का रोज़ाना बर्फ़ मौसम की तकलीफ़ के लिये काफ़ी है।

और क्या अर्ज़ करूँ। सब ख़ैरियत है। बच्चों को दुआ।

आपका

धनपत राय

१८४

गंगा पुस्तकमाला लखनऊ

२१ जून १९२५

बरादरम

तसलीम। ज़रा एक तक़रीब में मिर्ज़ापुर चला गया था। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे।

बाबू रघुपति सहाय का यह ख़त भेजता हूँ। उन्होंने मौलाना अब्दुल हक़ साहब के पास भेजने के लिए मेरे पास भेजा है। मुझे मम्दूह[1] का पता नहीं मालूम है। इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में एक उर्दू प्रोफ़ेसर की जगह है। २५०) माहवार २५ रुपया सालाना तरक़्क़ी। रघुपति सहाय उसके लिए कोशाँ[2] हैं। मज़मून ख़त से मालूम होगा कि वह क्या चाहते हैं। आप बराहे करम इसी डाक से इस ख़त को मौलवी अब्दुल हक़ की ख़िदमत में भेज दें। मैंने रघुपति सहाय से दर्याफ़्त भी किया था तो उनसे मालूम हुआ कि उन्होंने क़रीब क़रीब सब मराहल तय कर लिये हैं सिर्फ़ मोतरिज़ों[3] की ज़बान बन्द करने के लिए दो चार नाम मुसलमान असहाब की सिफ़ारिश दरकार है।

आप ख़ुद कोशिश करना चाहें तो ग़ालिबन कामयाबी हो। आप कानपुर कब तक आते हैं। मैं शायद ७ जुलाई तक आऊँ।

१८५

गंगा पुस्तकमाला लखनऊ

८ जुलाई १९२५

भाईजान

…न। ख़त मिला। मशकूर हूँ। मैं इतवार को कानपुर आऊँगा। [illegible]

---

१ प्रशंसित २ प्रयत्नशील ३ आपत्ति करनेवालों

के आग़ाज़ में यहाँ से बनारस जाने का इरादा है। इसलिए एक बार आप लोगों से मुलाक़ात कर लूँ। फिर न जाने फिर कब मिलें। इतवार को आऊँगा। और उसी दिन लौट भी जाऊँगा। और बातें उसी वक़्त आपसे अर्ज़ करूँगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१८६

गंगा पुस्तकमाला लखनऊ
२२ जुलाई १९२५

भाईजान

तसलीम। आज मतलूबा रक़म रजिस्टरी से रवाना कर दी है। रसीद लिखिएगा। और तो सब ख़ैरियत है।

हाँ ज़रा अपने यहाँ की लीथो छपाई का रेट लिखिएगा। शायद मुझे रंगभूमि कानपुर छपवाना पड़े। लखनऊ से जाने के बाद यहाँ छपाना मुश्किल हो जायेगा।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१८७

गंगा पुस्तकमाला लखनऊ
५ अगस्त १९२५

भाईजान

तसलीम। मैंने आपके ख़त का जवाब नहीं दिया। इस ख़याल से कि शायद अभी आप हमीरपुर से लौटे[1] न हों। मैं यहाँ से ४ को बनारस जानेवाला था लेकिन कई वजूह से इरादा मुल्तवी कर देना पड़ा। अब १५ को जाऊँगा। मुझे १ को मेरठ में एक जलसे में शरीक होना है। वहाँ से लौटता हुआ एक दिन के लिए कानपुर भी ठहरूँगा। तब बातें होंगी। उस दिन आपकी निगम सभा का जलसा न हो सकी।

पंजाब का एक पब्लिशर मेरी कहानी का मजमुआ शाया करना चाहता है। मुझे याद नहीं आता कि प्रेम बत्तीसी के बाद मेरी कौन-कौन कहानियाँ कहाँ-कहाँ शाया हुईं। चंद कहानियाँ तो लाहौर के हफ़्तेवारों में निकली थीं। एक हुमायूँ

---

1. लौटी हों

में शाया हुई थी। एक हमदर्द में हाल में निकली जो मुझे याद है। मुमकिन है एकाध और निकली हों जिसकी मुझे इस वक़्त याद नहीं। शायद नौबहारवालों ने दो का तर्जुमा किया था। पंजाबी अख़बारों ने भी मुमकिन है कुछ कहानियों के तर्जुमे कर डाले हों। क्या आप इस मजमुए परीक्षा के जमा करने में मेरी कुछ मदद कर सकते हैं? हज़ारदास्ताँ का फ़ाइल मुकम्मल आपके यहाँ है? हुमायूँ है? नौबहार है? हमदर्द भी है या नहीं? आज़ाद में तो कोई कहानी नहीं निकली? बराहे करम इसका जवाब मुझे जल्द दीजिए ताकि वापसी में मैं एक काम यह भी पूरा कर लूँ।

१८८

स्थान-तिथि नहीं है।
अनुमानतः लखनऊ अगस्त १९२५

भाईजान

तसलीम। तर्जुमा ख़त्म है। कल आपके दो कार्ड साथ ही मिले। सीतापुर से वापस आकर फ़ौरन ख़त लिखूँगा। क़िस्सा भी लिख रहा हूँ। छोटे भी लिखवाऊँगा। क्योंकि ज़माना में देर लगेगी। १६ को रात की गाड़ी से जाने का इरादा है। अगर आप उस दिन आते हों तो क्यों न मैं भी कानपुर आ जाऊँ। साथ ही साथ चलें।

आपका
धनपत राय

१८९

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ
अनुमानतः प्रथम सप्ताह अगस्त १९२५

बरादरम

तसलीम। कार्ड मिला। मशकूर हूँ। इस[1] का हिन्दी तर्जुमा कर मैं तो भेजूँ। अभी तीन-चार दिन की कसर है।

हज़रत सेहर ने 'रंगभूमि' का उर्दू तर्जुमा कर दिया मगर मुआवज़ा हिन्दी ऐडीशन पर ११) फ़ी सफ़ा माँगते हैं यानी कुल ४६५)। मुझे कुल हिसाब के

१ [illegible]

६) मिल जायेंगे तो मैं समझूँगा मैंने तीर मारा। आप ४६५) खुद माँग रहे हैं। बतलाइये है न साहबजादी[1] की बात। मैंने लिख दिया है कि आप खुद किताब किसी पब्लिशर को दे कर मुझे १) दिलवा दें और आप बाक़ी सब ले जायें। मैं राजी हूँ। दूसरी शर्त मैंने छपे हुए उर्दू सफ़हात पर ।) फ़ी सफ़्हा रक्खी है। और तीसरी शर्त यह कि पब्लिशर से जो कुछ मिले उसका ३/४ आप का और १/४ मेरा। बतलाइये मैंने ज्यादती की है? अगर आपको इसमें मेरी तरफ़ से ज्यादती मालूम होती हो तो साफ़ लिखिये। शायद वह आप से पूछें। उर्दू बाज़ारे क़लम की हालत देख कर १६) कुछ मुज़ायक़ा नहीं है। और यह मैं खुशी से देने पर तैयार हूँ। उनके ज्यादा से ज्यादा तीन महीने सर्फ़ हुए होंगे। ३-४ घंटा रोज़ काम करके अगर १५) मिलते हैं तो क्या कम है मगर वह न जाने किस ख़याल में हैं। मैं अगर ४६५) उन्हें दूँ तो मुझे कुछ न मिलेगा। अगर वह आप से पूछें तो ज़रा समझा दीजिएगा। मैंने मुहर्रम के बाद बनारस जाना तय किया है।

वस्सलाम
धनपत राय

१६०

लखनऊ
प्रथम सप्ताह अगस्त १९२९

हज़रत सेहर को मैंने २) देना तय कर लिया। वह राजी भी हो गए। मसनवी की इशाअत[2] में ११) खर्च हो चुके। बक़िया ६) उन्हें और देने हैं। अगर वह राजी हों तो गोशाए आफ़ियत भी उनसे पूरा करवा लूँगा और कुछ नई कहानियों का तर्जुमा भी। पंजाब में सब खप जाएंगी और कुछ न कुछ दे मरेंगी।

बाबू राम सरन की तबियत अब कैसी है? लड़के तो इलाहाबाद चले गए होंगे।

नियाज़मन्द
धनपत राय

१ साहबजादी २ छपाई

१६१

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ
१२ अगस्त १९२६

भाईजान

तसलीम। मैं जवाब न भेज सका। सबब यह कि ५ तारीख से पैर में कलक पड़ गयी। चार दिन सख्त दर्द और जलन और टीस थी। पाँचवें दिन डाक्टर ने नश्तर दिया। दाहिने पाँव की आधी एड़ी का चमड़ा काट दिया गया। अब दो दिन से तकलीफ़ तो बहुत कम है लेकिन उठने-बैठने काम करने से माजूर हूँ। इसी असना में स्वराज्य पार्टी के लोग वही रद्दी मुसव्वदा उठा ले गये और कातिब से भी लिखवा लिया। अगर मैं समझता कि कातिब पढ़ लेगा तो पहले आप ही के पास भेज देता। मैं तो समझता था शायद मेरे सिवा और कोई पढ़ ही न सकेगा। लेकिन यह कातिब साहब होशियार मालूम होते हैं। मैंने कापी देखी गलतियाँ कम निकलीं। खैर, अब तो पैम्फलेट ही की एक कापी भेजूँगा। ४ को यहीं से चलने का इरादा था लेकिन अब शायद पाँच दिन तक न जा सकूँगा। मसनवी-ए-सेहर छपकर रखी हुई है। ज़रा तबीयत अच्छी हो तो आपके पास भेज दूँ। अब की इस्तदुआ है कि कमीशन २५ फ़ी सदी लिया जाय। खुद बेचारे नहीं बढ़ सकते। आप शायद उनकी इतनी बात मान लेंगे। रंगभूमि का तर्जुमा तो शुरू कर दिया। अब इरादा है गोशाए आफ़ियत भी भेज दूँ। खत्म हो जाये। मेरे राम लिए न होगी। वाकई इशाअत छापने को तैयार हैं। सो अब इस किताब पर देने का वादा किया है। और तो कोई ताज़ा हाल नहीं। उम्मीद है आप बख़ैरियत मय सब होंगे। खत लिखिएगा।

नियाजमन्द
धनपत राय

१६२

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ
२२ अगस्त १९२६

भाईजान

तसलीम। आपका कार्ड मिला। अब ज़ख्म पुर हो गया मगर अभी तक चलने-फिरने से माजूर हूँ। जी तो बहुत भी चाहता है कि बनारस जाऊँ या कुछ एक रोज़ कानपुर आ जाऊँ। देखा चाहिए। यहाँ प्रेम बत्तीसी हिस्सा दोम छपी

हुई थी। कोई वजह न थी। अगर आप इतनी इनायत करें कि हिस्सा दोम के मज़ामीन की फ़ेहरिस्त नक़ल करवाके भेज दें तो ऐन एहसान हो। मैं कुछ हिन्दी कहानियों का तर्जुमा करके पंजाब के एक पब्लिशर पिंडी दास को भेजना चाहता हूँ। डरता हूँ कि कहीं वही मज़ामीन न आ जायें जो हिस्सा दोम में निकल चुके हैं। हिस्सा अव्वल मेरे पास मौजूद है। सिर्फ़ जिल्द दोम के मज़ामीन की फ़ेहरिस्त की ज़रूरत है। परसों तक मुझे फ़ेहरिस्त मिल जायगी तो मैं इक़बाल वर्मा साहब को मज़ामीन की फ़ेहरिस्त लिख भेजूँगा जो उर्दू में हुए हैं। मसनवी भी भेजनी है। ज़रा पैर काम करने लगे तो भेजूँ।

वस्सलाम

धनपत राय

१६३

लखनऊ

२५ अगस्त १९१५

भाईजान

तसलीम। सैरे दरवेश का तर्जुमा क़रीब-क़रीब ख़त्म होनेवाला है। तब इसे वापस कर दूँगा। अब सोज़े वतन की ज़रूरत है। उसमें से दो तीन कहानियाँ ले लूँगा। बराहे करम सोज़े वतन की एक कापी भिजवा दीजिए। जितनी जल्द हो जाये उतना ही अच्छा है। दिसंबर के पहले यह मजमूआ अपने प्रेस से निकाल दूँगा। इसका नाम होगा 'प्रेम प्रसून' (प्रेम का फूल) पच्चीस कहानियों का एक अलाहिदा मजमूआ कलकत्ते से भी निकल रहा है, जो हिन्दी की प्रेम पचीसी होगी।

आजकल Anatole France का एक क़िस्सा हिन्दी में तर्जुमा कर रहा हूँ। और मेरे ही प्रेस में छप भी रहा है।

कैफ़ियते मिज़ाज से मुत्तला फ़रमाइएगा। और सब ख़ैरियत है।

ग़ालिबन् मकर्रर याददिहानी की तकलीफ़ आप उठाना पसंद न करेंगे। क्योंकि माह के पाँचवें दिन मैं फिर सोज़े वतन के लिए हाज़िरे ख़िदमत होऊँगा। इसी के तीन क़िस्सों की कमी है।

नियाज़मन्द

धनपत राय

१६४

गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ
१ अगस्त १९२५

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। मैं तो अब लँगड़ा-लँगड़ाकर चल रहा हूँ। मगर आप बुख़ार में मुब्तिला हो गए। अब तो मैं कल रवाना हुआ जाता हूँ। ईश्वर ने चाहा तो दिसम्बर में इतमीनान से मुलाक़ात होगी।

हमरक्स सहर की किताबें पार्सल से रवाना कर दी हैं। बैरंग पार्सल है। उन्होंने कुछ ग़लतियाँ निकाली हैं। ग़लतनामा लगवाना चाहते हैं। मुझे फ़िज़ूल मालूम होता है। लेकिन अगर उन्होंने इसरार किया तो एक ग़लतनामा लगवाना ही पड़ेगा। इसकी फ़ेहरिस्त मैं यहीं से आपके पास भिजवाऊँगा। आप इसकी क़ीमत किताब की बिक्री में से वज़ा फ़रमा लीजिएगा।

और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

१६५

सरस्वती प्रेस, मध्यमेश्वर, काशी
५ सितम्बर १९२५

बरादरम

तसलीम। मैं १ को लखनऊ से बख़ैरियत पहुँच गया। आपका ख़त और मज़ामीन की फ़ेहरिस्त मुझे लखनऊ में मिल गयी थी।

अब एक और तकलीफ़ आपको देना चाहता हूँ। मेरा वह मज़मून जिसमें शतरंज के खिलाड़ी छापा हुआ था गुम हो गया है। बराहे करम वह नंबर मेरे पास फिर से भिजवा दीजिए। ऐन नवाज़िश होगी। मैं अपनी मत्बूआ[1] अख़बार कहानियों का मजमूआ तैयार कर रहा हूँ। उम्मीद है मसनवी-ए-सेहर पहुँच गयी होगी।

और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

---

१ प्रकाशित

१९६

सरस्वती प्रेस, बनारस
२ फ़रवरी १९२९

बरादरम

तसलीम। कार्ड मिला। 'कर्बला' का एक सीन फ़ौरन लिख भेजता हूँ। उजलत[1] के ख़याल से और ज़्यादा न लिखा। दो-चार रोज़ में और एक-दो भेज दूँगा।

अभी तो कुछ मालूम नहीं हुआ कि इलाहाबाद में कब तक़सीम होगी। नाम तो बड़े बड़े हैं। ग़ैर-सरकारी आदमियों में तो शायद चार-पाँच आदमियों से ज़्यादा नहीं। और लोग किसी न किसी तरह सरकार से वाबस्ता[2] हैं।

और तो सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

१९७

सरस्वती प्रेस, बनारस
२७ मार्च १९२९

भाईजान

तसलीम। मुद्दत से आपने न कोई ख़त लिखा और न मैंने। इसलिए शिकायत का मौक़ा नहीं। उम्मीद है कि आप मय अयाल अच्छी तरह हैं। ज़रा कोई ख़त भेज कर मुतमइन[3] फ़रमाइए। मेरा इरादा हो रहा है कि अपने सवानही[4] मज़ामीन का हिन्दी तर्जुमा शाया करूँ। क़रीबन् सभी सवानेहउमरियाँ मैंने ज़माना ही में लिखी हैं। मेरे पास 'ज़माना' का कोई फ़ाइल नहीं। क्या यह हो सकता है कि आप मेरे पास एक एक जिल्द भेजते जाएँ और मैं उसका तर्जुमा करा के लौटाता जाऊँ। या एक दूसरी सूरत यह है कि जगमोहन जी दीक्षित से कहूँ कि वह आप के यहाँ से फ़ाइल लेकर मज़ामीन का तर्जुमा करके मेरे पास भेजते जाएँ। अगर यह आसानात न हुए तो फिर आपको फ़ाइलें मुझे वापिसन्[5] भेजनी पड़ेंगी।

और तो सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

---

१ जल्दी २ संबद्ध ३ आश्वस्त ४ जीवनी-विषयक ५ वापस

१९८

सरस्वती प्रेस बनारस
११ मार्च १९२९

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। मुंशी शिवनारायण साहब की वफ़ात[1] की खबर सुनकर अफ़सोस हुआ। परमात्मा उन्हें जन्नत नसीब करे। कई दिन हुए एक ख़त मिल चुका है। यहाँ के हालात मालूम हुए होंगे। भाभी साहबा की तवील अलालत की ख़बर सुनकर भी रंज हुआ। शुक्र है कि अब उन्हें सेहत है। मैं तो साबिक़ दस्तूर काम करता चला जा रहा हूँ। प्रेस की हालत ख़राब थी, अब कुछ इत्मीनानबख़्श है। अभी तक शहर में मुक़ीम होने की सूरत नहीं निकली। अब जून के बाद ही मकान लूँगा। लड़के की तालीम[2] का सवाल न होता तो मैं रोजाना आया जाया करता। ज़माना के लिए कुछ नहीं लिख सका। इसकी मुआफ़ी चाहता हूँ। उर्दू में कोई पुरसानेहाल तो है ही नहीं अपने दो नाविलों के तर्जुमे दारुल इशाअत पंजाब को दिये। अभी कुछ तय नहीं हुआ। और अभी इम्तियाज़ अली साहब चार तक़ाज़ों के बाब में दम किये हुए हैं हालाँकि एक सौ पचास दे चुका हूँ लेकिन अभी उन्हें इतना ही और देना है। इन दोनों किताबों की इशाअत पर ही रुपया वसूल होगा। और क्या अर्ज़ करूँ।

आपका
धनपत राय

१९९

सरस्वती प्रेस, बनारस
१७ जुलाई १९२९

भाईजान

तसलीम। कार्ड के लिए मशकूर हूँ। मेरे हालात नोट कर लें। तारीख़ पैदाइश संवत् १९३७। बाप का नाम मुंशी अजायब लाल। सुकूनत मौज़ा मढ़वाँ लमही। मुत्तसिल[3] पांडेपुर। बनारस। इब्तदाअन[4] आठ साल तक फ़ारसी पढ़ी। फिर अंग्रेज़ी शुरू की। बनारस के क्वींस कालेजिएट स्कूल से एंट्रेंस पास किया। वालिद का इन्तक़ाल पंद्रह साल की उम्र में हो गया। वालिदा सातवें साल गुज़र चुकी थीं। फिर तालीम के सीग़े[5] में मुलाज़िमत की। सन् १९ १६ [illegible]

१ देहान्त २ पढ़ाई ३ पास ४ शुरू में ५ विभाग

रेरी ज़िन्दगी शुरू की। रिसाला ज़माना में लिखता रहा। कई साल तक मुतफ़र्रिक़ मज़ामीन लिखे। सन् १९ ४ में एक हिन्दी नाविल प्रेमा लिखकर इण्डियन प्रेस से शाया कराया। सन् १२ में जल्वए ईसार और सन् १८ में बाज़ारे हुस्न लिखा। हिन्दी में सेवासदन प्रेमाश्रम रंगभूमि कायाकल्प—चारों नाविल दो-दो साल के वक़्फ़े बाद निकले। इनके उर्दू तर्जुमे अनक़रीब शाया होंगे। कहानियों के मजमूए प्रेम पचीसी और प्रेम बत्तीसी उर्दू में निकले। हिन्दी में भी कई मजमूए शाया हुए। सन् २ म मुलाज़िमत से किनाराकश हो गये। अब ख़ानानशीं हूँ। बाक़ी उमूर आपको ख़ुद ही मालूम हैं।

कर्बला आप निकाल रहे हैं। मैं इसके आगे के हिस्से ज़रूर भेज दूँगा। उर्दू की तारीख़ के तर्जुमे के मुताल्लिक़ क्या अर्ज़ करूँ। उस पर आपका फ़ैसला मेरे फ़ैसले से बेहतर होगा। अगर ज़माना की तक़्तीअ[1] के मुश्ताक़ हैं तो दो रुपया फ़ी सफ़ा उजरत किसी तरह ज़्यादा नहीं। इससे कम में तर्जुमा करना मेरे हक़ में नुक़सान का बाइस होगा। अगर मंज़ूर फ़रमायें तो मेरे पास मुसव्वदा भेज दें। अपना नाविल जाड़ों में शुरू करूँगा। बरसात में तर्जुमा ख़त्म कर डालूँ।

और तो सब ख़ैरियत है। एडमिशन का काम मुझे तो नहीं मिला न मैंने फ़िक्र की। *मगर अब देखता हूँ कहाँ मिल सकता है। बारिश मामूली है।* गर्मी भी कुछ कम हो गयी।

बच्चे अच्छी तरह हैं। आप बारबार मुझे बुलाते हैं। एक हफ़्ते बनारस की हवा खाइए। मैं बहुत जल्द आऊँगा मौक़ा मिला तो हफ़्ते-अशरे में आप मुझे कानपुर म देखेंगे।

बच्चों को दुआ। गुज़ारा कुछ माहन वग़ैरह का हाल भी लिख दिया कीजिए। आपके बाइस मुझे उन लोगों का हालचाल जानने की भी फ़िक्र रहा करती है। मसलन् बाबू रामसरन का ज़िक्र आप मुतलक़ नहीं करते। सेठ के हालात से मुझे भी कुछ इण्टरेस्ट है। यह हज़रात मुझे भूल गये हैं लेकिन मुझे तो उनकी याद आया करती है।

वस्सलाम

धनपत राय

---

१ कद [illegible] साइज़

२००

सरस्वती प्रेस, बनारस
२७ जनवरी १९२७

भाईजान

तसलीम। आपका कार्ड कई दिन हुए आया। मैं इधर जुकाम और दर्दसर की वजह से तीन दिन से प्रेस नहीं आया। मुझे कार्ड पढ़कर हैरत और अफ़सोस हुआ क्योंकि मैंने दो हफ़्ते से ज़्यादा हुए ज़माना का एक २० सफ़े का टुकड़ा भेज दिया था। क्यों नहीं पहुँचा मुझे इसका ताज्जुब है। दो रातों[1] रोज़ की मेहनत अकारथ गयी। और अब फिर मौक़ा निकालकर जल्द ही लिखता हूँ।

एकेडेमी से आप बेनियाज़[2] हुए इसका मुझे और भी ताज्जुब है। हुक्मरानी[3] आसन की आवभगतों[4] आपने की ख़ास दूसरे आ रहे हैं। आप शायद इस धोखे में थे कि आपको सेक्रेटरीशिप के लिए मदऊ[5] किया जायेगा। इन मजलस-बाज़ों[6] के ज़माने में इसकी कहाँ? जिसने इसका ... की वह बाज़ी ले गया। फिर अब आप ही न रहे तो मेरा मज़ा कहाँ गुज़र और किस हैसियत में। देखिए कब जलसा होता है। मुलाक़ात होगी। मुझे तो सबसे बड़ी यही ख़ुशी है। आप भी तो मेरे एक पुराने दोस्त[7] और ग़मगुसार[8] ठहरे और आपसे बरसों से मुलाक़ात की नौबत नहीं आयी। इत्तफ़ाक़ातें[9] ज़माना और क्या।

उम्मीद है कि और सब लोग बख़ैरियत होंगे। यहाँ बहमा वुजूह ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

२०१

सरस्वती प्रेस, बनारस
६ फ़रवरी १९२७

भाईजान

तसलीम। फ़र्दबा के दो ठोस दो तीन दिन में भेजूँगा।

अब लखनऊ से बाबू विष्णु नारायण भार्गव ने मुझे माधुरी की एडिटरी के लिए बुलाया है। मुशाहिरा तो सब माहवार होगा। आपने इलाहाबाद[10] जो छाप लिया उसका अभी कुछ जवाब आया? कुछ इफ़ाक़े[11] की उम्मीद है? अगर अभी कोई उम्मीद न हो तो सही सही। जवाब बवापसी डाक मुरहमत फ़रमाइए।

नियाज़मन्द
धनपत राय

---

१ दो दिन २ उदास ३ [illegible] ४ [illegible] ५ [illegible] ६ [illegible] ७ [illegible] ८ [illegible] ९ [illegible] १० [illegible] ११ [illegible]

२०२

नवलकिशोर बुकडिपो लखनऊ
२१ फ़रवरी १९२७

भाईजान

तसलीम। मैं १९ तारीख को यहाँ आ गया हूँ। आप पटना कब जायेंगे? अगर पटना गये हुए हैं तो वहाँ से कब लौटेंगे। आप आ जायें तो एक रोज़ के लिए आऊँ। मुलाक़ात को जी चाहता है।

नियाज़मन्द
धनपत राय

२०३

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
१४ मार्च १९२७

भाईजान

तसलीम। अपनी ऐनक भूल आया। बवापसी डाक से भेजिए। अंधा हो रहा हूँ।

१६ को बनारस चला जाऊँगा। इसलिए जल्द ही भेज दीजिएगा। परसों मुझे मिल जायेगा। आपके मेज़ पर रक्खी थी।

आपका
धनपत राय

२०४

माधुरी कार्यालय, लखनऊ
२५ अप्रैल १९२७

भाईजान

तसलीम। ख़त मिला। कर्बला का एक टुकड़ा परसों तक भेज दूँगा। फ़ोटो-ग्राफ़र के पास गया था। प्रूफ़ मास्टर ताराचंद साहब के पास से आ गया है। उसने एक हफ़्ते के अंदर देने का वादा किया है। ज्योंही मिलेगा ब्लाक बनवा-कर माधुरी में दूँगा और बाद को ब्लाक आपके पास भेज दूँगा। बच्चन ग़ालिबन् १५ मई तक आयेंगे। दीवान साहब का एक ख़त आया है। शायद उनका अग्र बार का मुआमला ठीक हो गया। एक दिन खूब लुत्फ़ रहा। पूरब[1] में भी एक

---

१ प्रदेश

गया है। दोस्तों के साथ दोज़ख भी हो तो नागवार न गुज़रे। आजकल वर्मा साहब ज़माना के लिए कायाकल्प का रिव्यू लिख रहे हैं।

आपका
धनपत राय

२०५

भाईजान

माधुरी कार्यालय लखनऊ
१४ नवम्बर। सन् नहीं है। अनुमानतः १९२७

तसलीम। आप गालिबन् इलाहाबाद से लौट आये होंगे। वहाँ क्या नतीजा हुआ मत्तिला फ़रमाइएगा[1]। एक खास बात मुझे एक मज़मून के लिए बाबू बाल मुकुन्द जी गुप्त मरहूम का वह मज़मून दरकार है जो आपने ज़माना में लिखा था। उस माह का रिसाला मौजूद हो तो बराहे नवाज़िश[2] भेज दीजिए वर्ना ख़ादिम। कुछ बातें भी करनी हैं। आप तो इस तरफ़ लखनऊ नहीं आ रहे हैं? या मैं ही हाज़िर होऊँ?

आपका
धनपत राय

२०६

भाईजान

माधुरी कार्यालय लखनऊ
२१ नवम्बर १९२७

तसलीम। उम्मीद है आप फ़ैज़ाबाद से आ गये होंगे। मुक़दमे की कैफ़ियत सुनकर मुझे इस क़दर सख्त रंज हुआ। मिलने को जी चाहता है। आप किस दिन मौजूद रहेंगे। एक दिन के लिए आऊँगा। फ़ौरन लिखिए।

बुकडिपो के मैनेजर साहब लाइब्रेरी के रुपयों का तक़ाज़ा कर रहे हैं।

आपका
धनपत राय

---

१ अवगत कीजिएगा २ कृपा करके

२०७

माधुरी कार्यालय लखनऊ
१८ सितम्बर १९२७

बरादरम

तसलीम। कार्ड कई दिन हुए आपका मिला। क़िस्सा लिखने में मसरूफ़ था। दो दिन पीठ में चटक पड़ जाने से कोई काम न कर सका। अब यह क़िस्सा भेजता हूँ। फ़ोटो के लिए मैंने सोचा था बनारस से मुहय्या करूँगा क्योंकि वहाँ कई तसवीरें पड़ी हुई हैं, पर देखता हूँ इधर दो चार दिन बनारस जाने का इत्तफ़ाक़ न होगा। इसलिए ऐसा मस्लाह कम तसवीर खिंचवाकर भेजूँगा।

और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

२०८

२५ मारवाड़ी गली, लखनऊ
१९२८

बरादरम

तसलीम। आज एक कार्ड भेज चुका हूँ। इत्तफ़ाक़ से इस वक़्त मेरे दोस्त पण्डित मातादीन शुक्ल एक ज़रूरत से कानपुर जा रहे हैं। अगर आप जुलाई १९ १ की फ़ाइल और सन् १९ ८ की फ़ाइल दे दें तो आपको नक़ल कराने की ज़हमत भी न उठानी पड़े। राणा प्रताप जुलाई सन् १९ १ में है और विवेका कम्प सन् १९ ८ में। यह दोनों जिल्दें आपके दफ़्तर में मौजूद हैं। बस सिर्फ़ अक्तूबर नंबर का मुआमला रह जायगा। उसकी एक जिल्द दस्तयाब हो सके तो मुझे और किसी फ़ाइल की ज़रूरत न होगी। मैं यह दोनों मज़ामीन नक़ल कराके फ़ाइल बहुत जल्द लौटा दूँगा। ख़ुद लेकर आऊँगा। और सब ख़ैरियत है।

आपका
राय

२[illegible]

[illegible]

है। कुल सामान मिल जाये। मिलते ही भेजूँगा। आप १७ को आ रहे हैं। इन्तज़ार कर रहा हूँ। छोटे का तो ब्याह कानपुर ही में करना होगा। २४ घण्टे में बन सकता है। आइए। इस बारे काम के मुताल्लिक आपसे बहुत-सी बातें करना है। इमसाल अगर कोई लड़का ठीक हो जाये तो अगले साल शादी कर दूँ।

बाक़ी सब ख़ैरियत है।

हिन्दुस्तानी एकेडमी में इनाम के लिए अब तक किताबें भेज दी जायें मगर यह सब तो मशावरा होने पर।

आपका

धनपत राय

२१०

माधुरी कार्यालय लखनऊ

१ अगस्त १९२८

बरादरम

तसलीम। आपने सब मज़ामीन किसी कातिब को दे दिये या नहीं। अक्टूबर नंबर के मज़ामीन मिल गये होंगे। उन्हें भी शामिल करना है। किताबत का फिर तरतीब दे दी जायेगी लेकिन अगर वहाँ किताबत में कोई दिक्कत हो तो आप सारे मज़ामीन मय अक्टूबर नंबर के मज़ामीन मेहरबानी करके भेज दें। यहाँ भी खुशख़ती[1] किताबत हो सकती है।

और सब ख़ैरियत है।

नियाज़मन्द

धनपत राय

२११

माधुरी कार्यालय लखनऊ

१५ अगस्त १९२८

भाईजान

तसलीम। मज़ामीन के लिए शुक्रिया। अभी चार मज़ामीन की और ज़रूरत है।

१ राणा प्रताप—जुलाई सन् १९ ६

२ राजा मानसिंह—अक्टूबर नंबर

---

[1] सफ़ाई से

२०७

माधुरी कार्यालय लखनऊ
१८ दिसम्बर १९२७

बरादरम

तसलीम। कार्ड कई दिन हुए आपका मिला। किस्सा लिखने में मसरूफ था। दो दिन पीठ में चटक पड़ जाने से कोई काम न कर सका। अब यह किस्सा भेजता हूँ। फ़ोटो के लिए मैंने सोचा था बनारस से मुहय्या करूँगा क्योंकि वहाँ कई तसवीरें पड़ी हुई हैं पर देखता हूँ इधर दो चार दिन बनारस जाने का इत्तफ़ाक़ न होगा। इसलिए ईंशा अल्लाह कल तसवीर खिंचवाकर भेजूँगा।

और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

२०८

२१ मारवाड़ी गली, लखनऊ
१९२८

बरादरम

तसलीम। आज एक कार्ड भेज चुका हूँ। इत्तफ़ाक़ से इस वक्त मेरे दोस्त पण्डित मातादीन शुक्ल एक ज़रूरत से कानपुर जा रहे हैं। अगर आप जुलाई १९ ९ की फ़ाइल और सन् १९ ८ की फ़ाइल दे दें तो आपको नक़ल कराने की ज़हमत भी न उठानी पड़े। रामा प्रताप जुलाई सन् १९ ९ में है और विवेकानन्द सन् १९ ८ में। यह दोनों जिल्दें आपके दफ्तर में मौजूद हैं। बस सिर्फ़ अकबर नंबर का मुआमला रह जायगा। उसकी एक जिल्द दस्तयाब हो सके तो मुझे और किसी फ़ाइल की ज़रूरत न होगी। मैं यह दोनों मज़ामीन नक़ल कराके फ़ाइल बहुत जल्द लौटा दूँगा। खुद लेकर आऊँगा। और सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

२०९

माधुरी कार्यालय लखनऊ
१२ जनवरी १९२८

भाईजान

तसलीम। फ़ोटो तो खिंचवा चुका हूँ लेकिन अभी फ़ोटोग्राफ़र ने दिया नहीं

है। कल शायद मिल जाये। मिलते ही भेजूँगा। आप १७ को आ रहे हैं। इन्तज़ार कर रहा हूँ। ब्लॉकों का तो ब्लाक कानपुर ही में बनता होगा। २४ घण्टे में बन सकता है। आइए। इस बार आप के मुताल्लिक आपसे बहुत-सी बातें करना है। इसलाम अगर कोई लड़का ठीक हो जाय तो अपने साथ शादी कर दूँ।

बाक़ी सब ख़ैरियत है।

हिन्दुस्तानी एकेडमी में इनाम के लिए कब तक किताबें भेज दी जायें मगर यह सब तो मुलाक़ात होने पर।

भवदीय

धनपत राय

२१०

माधुरी कार्यालय लखनऊ

१० अगस्त १९२८

बरादरम

तसलीम। आपने मेरे मज़ामीन किसी कातिब को दे दिये या नहीं। अब दो-चार नम्बर के मज़ामीन मिल गये होंगे। उन्हें भी शामिल करता हूँ। किताबत की फिर तरतीब दे दी जायेगी लेकिन अगर वहाँ किताबत में कोई दिक्कत हो तो आप सारे मज़ामीन मय दरबार नंबर के मज़ामीन मेहरबानी करके भेज दें। यहाँ भी बआसानी[1] किताबत हो सकती है।

और सब ख़ैरियत है।

नियाज़मन्द

धनपत राय

२११

माधुरी कार्यालय लखनऊ

१९ अगस्त १९२८

भाईजान

तसलीम। मज़ामीन के लिए शुक्रिया। अभी चार मज़ामीन और अलग रहे हैं।

१ राना प्रताप—जुलाई सन् १९ ९

२ राजा मानसिंह—दरबार नंबर

---

[1] आसानी से

३ राजा टोडरमल—अकबर नंबर

४ स्वामी विवेकानन्द—१९ ८ सुफ़हा १८९

इन चार मज़ामीन को अलग नकल कराके रख लीजिए ताकि अबकी जब मैं आऊँ तो तैयार मिलें। इन मज़ामीन के बग़ैर मजमूआ बेकार है। नकल करने की उजरत मैं अदा कर दूँगा। ज़रा तकलीफ़ होगी मगर कहूँ किससे?

आपका

धनपत राय

२१२

नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ

२१ अगस्त १९२८

भाईजान

तसलीम। दोनों हैंडनोट इरसाले ख़िदमत हैं। अगर मुनासिब समझें तो उनकी तजदीद कर दें। अभी बहुत अर्से से मेरी किताबों का भी हिसाब नहीं हुआ। दो साल तो हो ही गये होंगे।

अपनी कहानियों का एक मजमूआ मैंने खुद यहाँ छपवाना शुरू कर दिया है। दस फ़ारम छप गये हैं, शायद एक फ़ारम और हो। उसका नाम रखा है ख़ाके परवाना।

× × × ×

आपने मौलाना हसरत के यहाँ से × × न मंगवाया हो तो मंगवा लीजिएगा। उसमें मेरे दो मज़ामीन हैं। राणा प्रताप सन् १९ ८ में है। इन तीन मज़ामीन के बग़ैर मजमूआ ग़ैर मुकम्मल रहा जाता है। फ़ारम मंगवा लीजिए तो मैं एक दिन आकर ले आऊँ और वहाँ किसी आदमी को रखकर सारे मज़ामीन नक़ल करा लूँ। ८ १ फ़ारम की एक छोटी-सी चीज़ हो जायगी।

आप इलाहाबाद तो चल ही रहे होंगे। वहीं मुलाक़ात होगी।

घर के लोग आ गये। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे।

आपका

धनपत राय

२१३

लखनऊ
७ अक्तूबर १९२८

भाईजान

तसलीम। आज कानपुर आने का इरादा था। इसलिए खत न लिखा था। लेकिन चंद ऐसे काम आ पड़े कि आना न हुआ। ताजे परवाना का इश्तहार मैंने ज़माना में देखा। अगर टाइटिल पेज के बीच में एक सुर्ख़ा छपवाकर निकला दें तो शायद ज़्यादा मुफ़ीद नतीजा पैदा हो। आइन्दा जैसी आपकी राय। मैंने एक इश्तहार तैयार किया है। आप अगर उसे मुआसिराना[1] ताल्लुकात की बिना पर दो चार अखबार में छपवा सकें तो कहिए उसे भेज दूँ। तीन इंच दो इंच में आ जायेगा। 'औरतों की हस्ती' आ गयी है। आऊँगा तो लेता आऊँगा।

कोर्ट में मुन्तखब[2] हो जाने पर सच्चे दिल से मुबारकबाद। आपने मुझे इत्तला तक न दी। खैर!

अकबर नवर और राजा प्रताप पर दो मजामीन अभी तक मुझे नहीं मिले। किताबत हो रही है। मौजूदा मजामीन जल्द खत्म हो जायेंगे। यह दोनों मजामीन आप मौलाना हसरत मोहानी से मंगवा दें तो मेरी किताब मुकम्मल हो जाय। वर्ना अधूरी पड़ी रहेगी। मेरे कलम[3] क्या काम देगा लिखिएगा।

आपका तबसीरेनवल्स[4] कायस्थ रजिस्ट्री पहुँच गया था। मशकूर हूँ। अब आप की तबीयत कैसी है। आप तो काम में देर डालकर बैठ जाते हैं और यहाँ कोई दिन ऐसा नहीं जाता कि एक आध बार आपका जिक्र न आ जाता हो।

आपका
धनपत राय

२१४

१ हिवेट रोड, लखनऊ
१५ दिसंबर १९२८

भाईजान

तसलीम। अबकी ज़माना में ताजे परवाना का इश्तहार न था। यह टेस्टिमोनियल्स[5] क्यों। पूरे सफे का न सही पर एक चौथा का इश्तहार तो जरूर न नहीं जाना ही चाहिए। वर्ना दिलचस्पी कैसे। 'रियासत' में भी अभी इश्त-

---

१ समकालिक २ चुने जाने ३ कामनियम ४ समालोचना ५ सर्टिफिकेट जरूर।

हार दे दें। बस एक १×१ काफ़ी होगा। और तो सब हालात साबिक़ दस्तूर है।

आपका
धनपत राय

२१५

नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
२१ फ़रवरी १९२९

भाईजान

तसलीम। आपको यह सुनकर मसरत[1] होगी कि बेटी की शादी ज़िला सागर के एक मुतमव्विल[2] ख़ानदान में तय हो गयी है। वह लोग यहाँ आये थे और कल वापस गये हैं। दो चार रोज़ में मैं बरच्छे की रस्म अदा करने जाऊँगा। लड़का बी. ए. में पढ़ता है। जायदाद मालूम है। मगर सर्फ़ा चार हज़ार का है। मेरी मुगत कुल दो हज़ार की है। आप बतला सकते हैं कि आप मार्च के आख़ीर तक मेरी कितनी मदद कर सकते हैं ताकि मैं बक़िया की और कोई फ़िक्र करूँ। मैं आपको इस वक़्त मुतलक़ तकलीफ़ न देता मगर वह लोग इमसाल ही शादी करने पर मुसिर हैं। इस वजह से मजबूर हूँ। शादी बनारस से करूँगा।

आपका ख़त मिला। इस माह मैंने ऊषावाली तसवीर माधुरी में निकलवायी थी मगर आपने तरमीम[3] की। अब यह लोग ब्लाक का दाम किस हिसाब से दें कैसे हिसाब होगा। लिखिएगा उस तरह से तै कर दूँ। अगर इस माह में आपने न छपायी होती तो ये लोग तसवीर, ब्लाक वग़ैरह का दाम देने पर राज़ी थे। मुझे मालूम न था कि आपने छपवा ली है वर्ना आपको मना कर देता कि इस माह में न छापियेगा। मगर ख़ैर। जवाब का मुन्तज़िर रहूँगा।

आपका
धनपत राय

२१६

लखनऊ
२८ फ़रवरी १९२९

भाईजान

तसलीम। मैंने कल नवलकिशोर प्रेस से बातचीत की। वह १२ डिमाई साइज़ सेह-रंगी[4] के कम से कम २८) माँगते हैं। इससे कम करने पर राज़ी

---
१ ख़ुशी २ मालदार ३ बदल ४ तिरंगी

नहीं है। आपको इसमें किफ़ायत मालूम होती हो तो मुझे इत्तला दें। कागज़ भी इसमें शामिल है।

हाँ 'जस्टिस' मैंने शुरू कर दिया। १६ १७ सफ़हात कर भी डाले। लेकिन अभी उसका हिन्दी का तर्जुमा तो आया नहीं। इसलिए वह सब मुश्किलात जो पहले मिसरानियों या मसवरों से हल की थी फिर आ रही हैं। इसलिए जब तक हिन्दी तर्जुमा न आ जावे उस वक्त तक के लिए मुल्तवी करता हूँ।

दूसरी किताबों के मुताल्लिक मैं यही कहूँगा कि आप खुद ही कर लें। मेरा समझ था एक नशिस्त[1] में ७-८ सफ़हात हो जाएंगे। पर अब देखता हूँ तो मुश्किल से चार सफ़हात होते हैं और मेरे पास एक नशिस्त से ज्यादा वक्त नहीं है। अगर इसे करता हूँ तो मेरा 'पन्ए' मज़मून रहा जाता है। सुबह को करता हूँ तो 'कर्मभूमि' में हर्ज होता है। और दूसरा कौन सा वक्त है? 'जस्टिस' तो मैं किसी न किसी तरह कर ही डालूँगा लेकिन बाकी दोनों का मेरा इस्तीफ़ा है। इतने ही वक्त में मैं ज्यादा फ़ायदे का काम कर सकता हूँ।

और तो कोई ताज़ा हाल नहीं है। उम्मीद है आप खुश हैं।

आपका
धनपत राय

२१७

लखनऊ
१९ मार्च १९२९

भाईजान

तसलीम। नक्शा आगाज़ से दिसंबर सन् २७ तक आना न भूल जाइएगा। यह पारविहानी कर रहा हूँ। अगर फ़ाइलिस[2] पर्चे न होंगे तो मातम करा लिये जायेंगे।

हाँ Strife और Golden Wing भी ज़रा भेजवाइएगा। दोनों गाल्सवर्दी के हैं।

आपका
धनपत राय

---

१ बैठक २ फ़ाइलें

२१८

ग्विन रोड लखनऊ
१६ अप्रैल १९२९

भाईजान

तसलीम। आप सुनकर खुश होंगे कि बेटी की शादी तय हो गयी। लड़के की बहन यहाँ अपने शौहर के साथ आयी थी और देख भालकर खुश चली गयी। अब मुझे तिलक भेजना है। शादी जेठ में होगी। मैं मई के पहले हफ्ते में दो माह की रुखसत लेकर आऊँगा। मेरा इरादा इतवार को आने का है। जरा मिस्टर सीताराम खन्ना से मिलना है। अपनी रीडरों के बाबत में राय[1] करने के लिए उनसे कहना है।

मैंने मास्तबर्दी का ड्रामा करीब निस्फ खत्म कर लिया है। बाकी इस माह में खत्म कर दूँगा। आपने अपने दोनों ड्रामों को शुरू किया या नहीं। कितना कर चुके?

ऊषावाली तसवीर के ब्लाक मैंने तीस रुपये पर माधुरी को दे दिये। बीस रुपये असल तसवीर के मुसव्विर[2] साहब की नजर करने से बाकी दस रुपये मेरे पास हैं।

आपसे यही गुजारिश है कि इस वक्त आप ज्यादा से ज्यादा मेरी जितनी इमदाद कर सकते हों कर दें। हिसाब पुराना पड़ा हुआ है। उसे भी साफ करा लीजिए।

और क्या अर्ज करूँ। इतवार को इंशा अल्लाह मुलाकात होगी।

आपका
धनपत राय

२१९

कानपुर
तिथि नहीं। अनुमानतः अप्रैल सन् १९२९

भाईजान

तसलीम। बिना इत्तिला आया और करीबन् दो घंटे के इंतजार के बाद अब जा रहा हूँ। यह किस्सा ज़माना के लिए लिखा है। पसंद आये तो दे दीजिएगा

---

१ बारे। २ चित्रकार

इसमें कहीं अल्फ़ाज़ underlined नज़र आयेंगे। यह हिन्दी मुतर्जिम[1] ने बनाये हैं। उनके कुछ मानी नहीं हैं।

वस्सलाम

धनपत राय

२२०

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ

१७ अप्रैल १९ ९

जानेमन

तसलीम। करामकरा का यह तर्जुमा इरसाले खिदमत[2] है। इस्लाह भी निस्फ़[3] से ज्यादा हो गया है। वक़्त[4] मई तक ख़त्म हो जायेगा। मैंने कोशिश तो यही की है कि तर्जुमा सही हो और उसके साथ ही मुहावरा हाथ से न जाने पाये। आप इसे देखें।

अबकी कानपुर गया पर आपसे मुलाक़ात न हो सकी। उजलत[5] थी ठहर न सका। 'साहूकार' तो अब ग़ालिबन् न निकलेगा। आप उनसे मेरा क़िस्सा ले लें और ज़माना में निकाल दें।

बक़िया ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

२२१

सरस्वती प्रेस, बनारस

२१ मई १९२९

बरादरम

तसलीम। मैं २१ तारीख़ को यहाँ आ पहुँचा। उम्मीद है आपने बड़ो मंगवाने का इन्तज़ाम फ़रमा लिया होगा।

मैंने अर्ज़ किया था कि ख़ाके परवाना की कुछ जिल्दें मालपत राय ऐंड संस बुकसेलर्स लाहौर के यहाँ भेज दीजिएगा। अगर अब तक न रवाना की हों तो अब ७ जिल्दें भिजवा दें ममनून हूँगा। और तो सब ख़ैरियत है। पासबर्री का 'इन्तख़ाब' आप ने शुरू कर दिया होगा। मेरा तो 'निम्बर

१ अनुवादक २ सेवा में प्रेषित ३ आधा ४ समय ५ जल्दी

बॉक्स' अब थोड़ा रह गया है। 'जस्टिस' साफ भी हो गया।
उम्मीद है कि मय आल बख़ैरियत होंगे।

आपका
धनपत राय

२२२

दफ़्तर माधुरी, लखनऊ
१९ अगस्त १९२९

भाईजान

तसलीम। आप इलाहाबाद से न मालूम कब लौट गये कि मुलाक़ात न हुई।

एक साहब ने मेरी कुछ किताबें मँगवायी हैं। दो किताबें तो मेरे पास हैं मगर प्रेमबत्तीसी और पचीसी मौजूद नहीं। अगर आप इन दोनों किताबों की एक-एक जिल्द हर दो हिस्सा या पचीसी मौजूद न हो तो सिर्फ़ बत्तीसी हर दो हिस्सा एक एक बवापसी भिजवा दें तो मैं यह फ़रमाइश पूरी कर दूँ। उम्मीद है कि मुन्नू बाबू को Send o f कहने के लिए मैं भी कानपूर पहुँचूँ। आपने तो शायद अब लखनऊ आने की क़सम खा ली। मिर्ज़ा अस्करी ने आपको शायद खत लिखा हो। इंडियन प्रेस से यहाँ का मुआमला बेहतर है क्योंकि यहाँ हम भी हर तरह की इमदाद करेंगे। चाहे रायल्टी कुछ कम मिले पर आपको मशक़्क़त बहुत कम करनी पड़ेगी।

मेरी राम चर्चा तो आप देख ही चुके। रामचरावन नाम से बाकमालों के दर्शन भी छाप दिया। माऊँगा तो एक जिल्द मगर करेगा। राम चर्चा तो पाँचवीं छठवीं जमात के लिए मजीद ताल्बगी[1] के लिए मंज़ूर है। बाकमालों के दर्शन नवीं दसवीं के लिए मंज़ूर होगी। कुछ न हो तो इनामी कुतुब में तो आ ही जाना चाहिए। कुछ उम्मीद है? किताबें ज़रूर भिजवा दें।

आपका
धनपत राय

२२३

माधुरी कार्यालय लखनऊ
२ सितंबर १९२९

भाईजान

तसलीम। आपके दो कार्ड मिले। अब मैं अमीनुद्दौला पार्क में रहता हूँ।

---
१ अतिरिक्त अध्ययन

मकान का नंबर कहीं नहीं मिलता। हाँ मुहल्ला की दूकान पर पूछने से पता चल सकता है। बिल्कुल कांग्रेस के दफ़्तर से मुत्तसिल[1] मेरा मकान इसी लाइन में है। दरवाज़ा मशरिक़[2] से है। मेरे मकान के ठीक नीचे एक सोडा मशीन की एजेन्सी है। चिरौंजी लाल पारचाफ़रोश भी वहीं रहता है। उससे पूछने से पता चल जायगा।

मैं सनीचर को आनेवाला था मगर उसके एक रोज़ क़ब्ल ही से घर में तीन मरीज़ होगये। मुन्नू की वालिदा के दाँतों में दर्द और बुख़ार, बेटी की जाँघ में फोड़ा जो बिसहरी कहलाती है और निहायत दर्द पैदा करनेवाली होती है। और मुन्नू की मामी को बुख़ार और पेचिश। कल बेटी की जाँघ चिरवा दी। अब दर्द कम है। मुन्नू की माँ के दाँतों का दर्द अभी बदस्तूर है। हाँ बुख़ार बंद हुआ। अब दाँत निकलवा देने की सलाह है। और मुन्नू की मामी का बुख़ार भी साबिक़ दस्तूर है। इस वजूह से न आ सका और जिस दिन आपका कार्ड मिला था उसी दिन तक मुझे उम्मीद थी कि आऊँगा। मगर शाम को यहाँ से गया तो मालूम हुआ कि अब नहीं जा सकता। ख़त लिखने का मौक़ा न था।

अज़ीज़ मुन्नू के साथ मेरी दुआएँ हैं। बच्चों को दुआ।

आपका

धनपत राय

२२४

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ

१४ सितम्बर १९२९

भाईजान

तसलीम। मैं इस रोज़ को मजबूरन रह गया। जिस काम के लिए गया था वह न हो सका। दूसरे दिन मुंशी जी से मुलाक़ात हुई। ९ बजे। आप इस वक़्त कालेज जाने के लिए तैयार होंगे इसलिए मैं न हाज़िर हुआ। इसकी तलाफ़ी[1] करूँगा।

नया रिसाला बनारस से निकल रहा है लेकिन मैं बनारस नहीं जा रहा हूँ। कुछ लिखता रहूँगा। मेरे मैनेजर साहब निकालते रहेंगे। ज़माना के लिए कुछ लिखूँगा। हाँ खूब याद आया मैंने आपका मुख़्तसर-सा स्केच भारत में भेज दिया है। अब वह मुझसे आपका फ़ोटो माँग रहे हैं। कोई छोटी सी फ़ोटो या हो

१ मिला हुआ २ पूर्व १ क्षतिपूर्ति मार्जन

भारत को भेजिए या मेरे पास । मैं भेज दूँ । मगर जल्द । और सब ख़ैरियत है । रीडरें तो आपने शुरू कर दी होंगी ।

वस्सलाम

धनपत राय

२२५

लखनऊ

१२ फ़रवरी १९३०

भाईजान

तसलीम । आपका कार्ड मिल गया था । 'मज़दूरनी' ग़ालिबन् फ़रवरी में हो जायगी । क्यों ? आपने मुझे बुलाया है । मैं भी दावत क़बूल करता हूँ और अबकी इतवार को आऊँगा । आज १२ है । १६ को इतवार है । उसी दिन आऊँगा । और दिन भर गपशप रहेगी ।

आपने पिछले महीने दयानारायण वर्मा साहब की मदद की । मेरी जानिब से की थी । अभी उनके क़र्ज़ से मैं सुबुकदोश नहीं हुआ हूँ । मेरी किताबों का पिछला हिसाब तो साफ़ हो गया लेकिन नये साल का हिसाब बाक़ी है । उसे भी ज़रा देख लीजिए । अगर इस माह में पचीस रुपये की दूसरी किस्त अदा कर दूँ तो फिर सिर्फ़ बीस रुपये और रह जायें । मैं फागुन यानी नये साल से एक हिन्दी रिसाला 'हंस' निकालने जा रहा हूँ । ६४ सफ़हात का होगा । और ज़्यादा-तर अफ़सानों से ताल्लुक़ रखेगा । है तो हिमाक़त ही क्योंकि घर बहुत और मज़ा कुछ नहीं लेकिन हिमाक़त करने को जी चाहता है । जिन्दगी हिमाक़तों में गुज़र गयी एक और सही । न पहले कभी कामयाबी की सूरत देखी और न अब देखने की उम्मीद है । इश्तहार वग़ैरह दे रहा हूँ । पहला पर्चा नये साल के दिन रवाना हो जायगा । सुदर्शन साहब उर्दू में निकाल रहे हैं मैं हिन्दी में निकालूँगा । १ फ़रवरी के रिसाले में इल्मी ख़बरों में इसका एक नोट लिख दीजिएगा । और तो सब ख़ैरियत है ।

आपका

धनपत राय

२२६

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ

१९ फ़रवरी १९३१

भाईजान

कल आनेवाला था मगर कल ही मेरी समधिन साहिबा उनके वालिद और

---

१ हिन्दी

उनके साथ दो और औरतें वारिद[1] हो गयीं। यह लोग ग़ालिबन् तीन चार रोज़ रहेंगे। इसलिए कल न हाज़िर हो सकूँगा।

मुंशी इक़बाल वर्मा साहब का ख़त आज फिर आया।

मशकूर
धनपत राय

२२७

अमीनाबाद, लखनऊ
७ अप्रैल १९१०

भाईजान

तसलीम। हामिले हाज़ा[2] हमीरपुर के एक मुदर्रिस हैं और जब मैं वहाँ था तो इनसे मेरे ताल्लुक़ात महज़ अफ़सरी और मातहती के न थे। यह निगम हैं और इस वक़्त इन्हें एक लड़के की तलाश है। इस फ़िक्र में लखनऊ आये थे। मुझसे मुलाक़ात हुई। यहाँ दो एक जगह इन्होंने लड़के देखे हैं मगर अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ कोई लड़का नहीं मिला। मुझसे इन्होंने कहा कानपुर में। आप किसी को जानते हों तो मुझे लिख दीजिए वहाँ जाकर तलाश करें। मैंने आपके ऊपर भरोसा करके यह ख़त इन्हें लिख दिया है। मगर इनकी कारबरारी की कोई सूरत निकल सके तो दरेग़ न कीजिएगा। आप को तो वहाँ की निगम बिरादरी का हाल मालूम होगा। मुझे तो कुछ ख़बर नहीं है।

'हंस' पहुँचा या नहीं। अपनी राय लिखिएगा। ज़माना में इसका ज़िक्र भी। और क्या अर्ज़ करूँ। इस नमक ने ख़लजान[3] में डाल रखा है। इत्मीनान-क़ल्ब[4] मुज़्तरिब[5] हो रहा है।

आपका,
धनपत राय

२२८

काशी
२३ अप्रैल १९१

भाईजान

तसलीम। आपका मुहब्बतनामा कई दिन हुए मिला था। 'प्रेम बत्तीसी' की क़ीमत आप शौक़ से १।।) कर दें। बल्कि मैं तो चाहूँगा कि यह एक ही रुपये में बिके। मगर लाहौरवाले तो कमी करेंगे नहीं इसलिये १।।) मुनासिब है।

---

१ आ गयीं २ पत्र-वाहक ३ उलझन ४ मानसिक शान्ति ५ विकल

हमारे पास ऐसी कौन सी बहुत किताबें हैं ।

रीडरों की तैयारी में मुझसे आप क्या मदद चाहते हैं । मैं तो आजकल बुरी तरह काम कर रहा हूँ । हंस मैं और कथूमर निकाल दिया है । दो क़िस्से हर माह और क़रीब बीस सफ़े एडिटोरियल और रीव्यू मज़ामीन । इसके अलावा अपना नाविल । फिर प्रेस वालों के लिये कहानियों को उर्दू में लाना । और आख़िर में रोज़ाना घंटा दो घंटा कांग्रेस के कामों में मसरूफ़ रहना मेरे लिये काफ़ी से ज़्यादा है । मगर मुझसे जो मदद आप चाहें वह अपने सब काम छोड़ कर करने को हाज़िर हूँ । आप ने तो कुछ कहा ही नहीं । अगर इमसाल किताबें पेश करनी हैं तो अब तवक़्क़ुफ़[१] की गुंजाइश नहीं है । एक नक़्शा रख लीजिये और उससे मज़ामीन तलब करते जाइये । एक किताब मुकम्मल हो जाय तो मुझे बुलाकर मुझसे मशवरा कर लीजिये । बस इस किताब की किताबत शुरू हो जाये मज़ामीन की नौइयत[२] आप को मालूम ही है ।

हाँ मेरी किताबों का और हंस' का इश्तिहार 'ज़माना' में एक दो महीने हो जाये तो अच्छा है । यह इश्तिहार भेज रहा हूँ । एक सफ़े में आ जायगा ।

नमक' को आप कम-अज़-कम[३] ख़याल करते हैं । जिस तरह मौत हमेशा कम-अज़-वक़्त होती है, साहूकार का तक़ाज़ा हमेशा क़ब्ल-अज़-वक़्त होता है उसी तरह ऐसे सारे काम जिन में हमें माली या जानी नुक़्सान का अन्देशा हो क़ब्ल-अज़-वक़्त मालूम होते हैं । इस तहरीक की मक़बूलियत[४] ही बतला रही है कि यह क़ब्ल-अज़-वक़्त नहीं है ।

इस मौक़े पर फिर साफ़ ज़ाहिर हुआ कि अगर दो फ़ीसदी अंग्रेज़ी-ख़्वाँ[५] असहाब तहरीक के साथ हैं तो ९८ फ़ीसदी उसके मुख़ालिफ़[६] हैं । क़ौमी एतबार से यूनिवर्सिटियों और स्कूलों पर क़ौम का जितना रुपया सर्फ़ हुआ वह क़रीबन ज़ाया हो गया । यह लोग सरकार के आदमी हुए, क़ौम के नहीं । ग़ैर-अंग्रेज़ीदाँ कारोबारी और पेशावर तबक़ों ही ने इस तहरीक में जान डाली है । अगर तालीम-याफ़्ता आदमियों के भरोसे मुल्क बैठा रहे तो शायद क़यामत तक उसे आज़ादी नसीब न होगी ।

अब मालूम है और इसके लिये सबूत और दलील की ज़रूरत नहीं कि सरकार कोई रिफ़ार्म उस वक़्त तक नहीं करती जब तक उसे यह मालूम न हो जाय कि इस तहरीक के पीछे कितनी ताक़त है, तो तालीम-याफ़्ता जमात का इससे किनार रहना कितना दिलशिकन है । क़ानूनपेशा तबीबपेशा प्रोफ़ेसर और सरकारी मुलाज़िमान—इन सब में जितनी गुलामाना[७] ज़ेहनियत का पता दिया है

१ ढील २ ढंग अख़्तियार ३ समय के वास्ते ४ लोकप्रियता ५ अंग्रेज़ी पढ़े ६ विरोधी कमज़ो-

इसकी मुझे उम्मीद न थी। वह उसका अपनी ख़ैरियत गवर्नमेंट का इक़्तदार[1] क़ायम रहने में समझता है। वह एक लमहे के लिये भी अपनी मफ़ादात[2] और दुनिया-तलबी[3] को फ़रामोश[4] नहीं कर सकता। ज़र[5] उसका दीन और ईमान है। वह या तो आज़ादी चाहता ही नहीं या उसके लिये क़ीमत न देकर दूसरों पर तकिया करना ही अपनी शान के मुनासिब समझता है। या वह इस ख़याल में मगन है कि आप ही आप आज़ादी भी मिल जायेगी। कांग्रेस के दौरे अव्वल में वह इससे वाबस्ता[6] रहा कांग्रेस के दौरे सानी में भी उसकी यही हालत रही। वह सरीहन[7] देख रहा है कि जो कुछ उसे मिला और जिसे अब वह अपना हक़ समझता है वह दूसरों के ईसार[8] व क़ुर्बानी का नतीजा है। फिर भी वह इस ईसार और क़ुर्बानी में शरीक नहीं होता। यही bourgeois फ़िरक़ा है और यही माशरे[9] फ़िर्क़े को दारे[10] फ़िर्क़े का दुश्मन बना रहा है।

आप ने क्या हैदराबाद जाने का इरादा कर लिया?

यहाँ तो हम लोग अच्छी तरह हैं। • मई तक लोग यहाँ से चल ही जायेंगे।

आपका

धनपत राय

२२६

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ

२७ जून १९३१

भाईजान

तसलीम। इधर कई दिन परीशान रहा। इस वजह से ख़त न लिख सका। बेटी की रुख़सत मुल्तवी हो गयी। वह लोग यहाँ आये और इसी घर मुक़ीम रहे। मगर बेटी को बुख़ार आने लगा और अब तक आ रहा है। छोटा लड़का भी मौसमी बुख़ार में मुब्तिला हो गया और अब तक अच्छा नहीं हुआ। दवा कर रहा हूँ। उम्मीद है दोनों को सेहत होगी।

बराहे मेहरबानी ज़माना का वह नंबर भेज दीजिए जिसमें मेरी कहानी 'ग़महरगी' शाया हुई थी। मेरा वह नंबर कोई साहब ले गये और मुझे उस कहानी की प्रेम बत्तीसी के लिए ज़रूरत है। इसे वापसी डाक से भेजिएगा।

और तो सब ख़ैरियत है।

नियाज़मंद

धनपत राय

---

१ अधिकार २ सुख सुविधा ३ सांसारिक काम ४ भूल [illegible] ५ [illegible] ६ [illegible] ७ स्पष्ट [illegible] ८ त्याग [illegible] ९ [illegible] १० [illegible] ११ [illegible] विरोधी

२३०

नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
१२ जुलाई १९३१

भाईजान

तसलीम। तकलीफ़ देने की ज़रूरत यह है कि मेरे साले साहब इम्साल बी ए पास हुए हैं। वह क़ानून और एम ए दोनों एक साथ लेना चाहते हैं ताकि दो साल में निकल जायें। क्या ऐसा कानपुर में मुमकिन है। आगरा यूनिवर्सिटी में इसके ख़िलाफ़ कोई क़ायदा तो नहीं है। वह हिन्दी में एम ए करना चाहते हैं।

इलाहाबाद का क्या क़ायदा है, मुझे मालूम नहीं। वहाँ भी दर्याफ़्त करता हूँ। कानपुर में कालिज किस तारीख़ को खुलेंगे।

आपका
धनपत राय

२३१

लखनऊ
१८ जुलाई १९३१

भाईजान

तसलीम। कई दिन हुए ख़त मिला था। मैं आजकल मुहल्ला गनेशगंज नंबर २ में रहता हूँ। आप तो आते आते रह जाते हैं। हैदराबाद जाने का कब तक इरादा है? दसहरे में न? मुलाज़िमी तौर पर? और इसके क़ब्ल तो मुलाक़ात हो जायेगी। मैं सितंबर के पहले हफ़्ते में ज़रूर आऊँगा। उसी वक़्त मेरे पास जो [illegible] वग़ैरह की जिल्दें हैं वह लेता आऊँगा। और तो सब ख़ैरियत है। उम्मीद है आप बख़ैरियत होंगे।

आपका
धनपत राय

२३२

लखनऊ
१ जुलाई १९३१

भाईजान

तसलीम। प्रेस ऐक्ट का वार मुझ पर भी हो ही गया। एक हज़ार की

जमानत तलब हुई है। कल बनारस जा रहा हूँ। जमानत देकर रिसाला इस निकालना तो मुझे खतरनाक मालूम होता है। मैं तो सोचता हूँ रिसाला बन्द कर दूँ और इसके साथ ही प्रेस भी। बनारस जाकर हालात का मुलाहजा[1] करने के बाद फ़ैसला कर सकूँगा।

आपका मुख़लिस
धनपत राय

२३३

लखनऊ
११ अगस्त १९३०

भाईजान

तसलीम। आप तो लखनऊ आते ही आते रह गये। क्या इरादा मंसूख कर दिया?

नाटकों के मुताल्लिक क्या हुआ? जरा तवज्जो[2] कर दीजिए। वर्मा कम्पनी[3] में खुदा जाने कब तक मुआमला खटाई में पड़ा रहे।

मुन्नू बाबू कब तक आ रहे हैं। शायद इसी माह, या सितंबर में तो आयेंगे?

मेरी विराग नरायन मरहूम की रियासत वाजिबन् कोर्ट आफ़ वार्ड्स के इख्तियार[4] से निकल गयी। दो चार रोज में अहकाम[5] आ जायेंगे। मगर आइन्दा इंतजाम के मुताल्लिक कुछ खबर नहीं क्या होगा।

शाहकार से आपने मेरा किस्सा न लिया?

बाकी खैरियत है।

आपका
धनपत राय

२३४

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
२१ सितंबर १९३

भाईजान

तसलीम। मजमून टाइप कराके भेज रहा हूँ। एक यहाँ इस्टेन मैनेजर को दे दिया है। आपकी मुलाकात का कुछ नतीजा हुआ है। मुझसे पंत और

१ अवलोकन २ ध्यान ३ कारगुजारी ४ अधिकार ५ आदेश

केसरीदास सेठ दोनों ही पूछ रहे थे। आपसे डिप्टी कमिश्नर साहब ने क्या कहा। मैंने कह दिया मेरी उनसे मुलाकात ही नहीं हुई। मैंने इस मजमून में कहीं कहीं एकाध लफ्ज़ रद्दोबदल कर दिया है। आपको शायद एक बार मेरी खातिर से फिर आना पड़ेगा। बाकी हालात बदस्तूर हैं।

आपका

धनपत राय

२३५

लखनऊ

१२ नवम्बर १९१

बरादरम

नमस्ते। आपने शायद अखबार में देखा हो परसों मिसेज धनपत राय पिकेटिंग करने के जुर्म में गिरफ़्तार हो गयी। मैं चार पाँच रोज के लिए बाहर गया हुआ था। उस वक्त घर पर मौजूद न था। वहीं से आकर यह वाक़या सुना। दूसरे दिन उनसे जेल में मुलाक़ात हुई। अब १ को उनके मुकदमे की पेशी है। सज़ा तो हो ही जायेगी मगर देखिए कितने महीनों की होती है। और सब खैरियत है।

नियाज़मंद

धनपत राय

२३६

लखनऊ

१४ नवम्बर १९१

भाईजान

तसलीम। आज फ़ैसला हो गया। डेढ़ माह की कैदे महज़ हुई।

मैं तो न आ सका। अब देखूँ कब तक आता हूँ। मेरे साले और उनकी बीवी यहाँ आ गये हैं।

मुख़लिस

धनपत राय

२३७

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
१८ दिसंबर १९१

मख़दूम

तसलीम। आपने ग़ालिबन् फ़ोटो भारत के दफ़्तर में भेज दिया होगा। मुंशी हरलाल वर्मा साहब अब कानपुर न आयेंगे। आप उन्हें रुपया भेज दें तो बड़ा एहसान करें। मैं तो माज़ूर हूँ वर्ना आपको तकलीफ़ न देता।

आपके लिए एक क़िस्सा लिख रहा हूँ। यहाँ से कोर्स की किताबें भेज दी गयी हैं।

नियाज़मन्द
धनपत राय

२३८

नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
२६ जनवरी १९११

बरादरम

तसलीम। कार्ड मिला था। मैंने अख़्तर साहब का जवाब देखा। वह गुज़ इतना कमज़ोर है कि उसके जवाब देने की क़तई ज़रूरत नहीं। मालूम-नसरत¹ न उनके जवाब को शिकस्त² का एतराफ़³ समझें। हज़रत निगार...शायद कोई तफ़सीली जवाब लिख रहे हैं। देखिए क्या लिखते हैं।...मैंने मेरे जवाब को बहुत पसंद किया था। ज़माना के लिए मुंशी बिशन नरायन पर एक स्केच लिखने की फ़िक्र में हूँ। प्लाट भी मिल जायगा। क़िस्सा भी एक लिखना चाहता हूँ। देखिए क्या कर सकता हूँ। अभी ख़ाके परवाना की जिल्दें आपके दफ़्तर में होंगी। यहाँ कुछ जिल्दें नवलकिशोर बुकडिपो को दरकार हैं। बराय मेहरबानी आज ही तीस जिल्द रेलवे पारसल से रवाना फ़रमायें और रेलवे रसीद मेरे पास भेज दें। बाक़ी हालात हस्बे साबिक़ हैं।

आपका
धनपत राय

---

१ ख़ामोशी को २ हार ३ स्वीकार

२३६

२४ मार्च १९३१

भाईजान

तसलीम। दोनों चेक मिल गये। मैं ज़रा 'हंस' के लिए क़िस्सा लिखने में मसरूफ़ था इसलिए जवाब न दे सका। इन इनायात का कहाँ तक शुक्रिया अदा करूँ। मैं ज़रा भी कनाअतशिआर[1] नहीं हूँ। सूदे-मुरक्कब[2] और सूदे-सादा[3] में ऐसा फ़र्क़ ही क्या होता है। यक़ीन मानिए मैंने आपको सूद का ज़िक्र करके शर्मसार किया। मेरे सर को झुकाने के लिए यही एहसास क्या कम है।

करांची का इरादा था मगर भगतसिंह की फाँसी ने हिम्मत तोड़ दी। अब किस उम्मीद पर जाऊँ। वहाँ गांधी का मज़ाक़ उड़ेगा कांग्रेस ग़ैर-ज़िम्मेदार टेररिस्टपसंद[4] तबक़े के हाथ में आ जायेगी और हम लोगों के लिए उसमें जगह नहीं है। आइन्दा क्या तर्ज़े अमल अख़्तियार करना पड़े कह नहीं सकता मगर फ़िलहाल दिल बैठ गया है और मुस्तक़बिल[5] बिलकुल तारीक[6] नज़र आता है। इधर बनारस मिर्ज़ापुर, आगरे में जो हादसात हुए उनसे गवर्मेंट का हौसला बढ़ेगा यही मेरा ख़्याल है। मगर इससे ज़्यादा हिमाक़त कोई गवर्मेण्ट नहीं कर सकती थी। तीन आदमियों की सज़ा में तख़फ़ीफ़ करके गवर्मेण्ट कितना अच्छा असर पैदा कर सकती थी। पर उसके तर्ज़े अमल ने अब साबित कर दिया कि तब्दीले-क़ल्ब[7] उसने अभी तक नहीं किया और अब भी वह अपनी उसी क़दीम[8] ग़ैर ज़िम्मेदाराना रविश[9] पर क़ायम है।

शाहकार को मैं आज लिखूँगा कि क़िस्सा आपके पास भेज दें।

एकेडेमीवाले सफ़रख़र्च दें या नहीं। प्रूफ़ तो मेरे पास भी आये हैं लेकिन जाऊँगा उसी वक़्त जब ख़र्च मिलेगा। ज़रा लिखिएगा। यही साबिक़ दस्तूर चला जा रहा है। हमारे मेहरबान तो हैं मगर फ़ैसला उनके हाथ में तो नहीं है।

मैं 'इंसाफ़' का तर्जुमा कर रहा हूँ कोई पचास सफ़हात हो गए हैं। 'हड़ताल' भी कर दूँगा। 'चाँदी की डिबिया' आप शुरू कर दें। जून तक यह सब ख़त्म हो जायेगा।

आपका

धनपत राय

---

१ सन्तोषी २ चक्रवृद्धि ब्याज ३ साधारण ब्याज ४ उग्रवादी ५ भविष्य ६ अँधेरा ७ हृदय परिवर्तन ८ पुरानी ९ पद्धति ढंग

२४०

लखनऊ

११ मई १९३१

माईडियर

तसलीम। अर्से से आपका कोई खत नहीं आया। नाटक की रसीद भी नहीं मिली। कानपुर गया था मुलाकात भी नहीं हुई। आज एक माह के लिए बनारस जा रहा हूँ। वहीं मैं 'इंसाफ' खत्म करके भेजूँगा। तर्जुमा कैसा रहा ?

बनारस में मेरा पता होगा

सरस्वती प्रेस काशी

रिसाला जमाना का यह नंबर (यानी ताजा) मेरे पास से गायब हो गया है। रिसायल की तनकीद के लिए इसकी जरूरत पड़ेगी। हर माह मैं हिन्दोस्तानी रिसायल की तनकीद करता हूँ। उर्दू हिन्दी मराठी गुजराती वगैरह। बराहे करम एक कापी अगर मैं पहले से बवापसी भिजवा दीजिएगा। उम्मीद है कि आप बखैर-ओ-आफियत हैं।

नियाजमन्द

धनपत राय

२४१

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ

१८ जून १९३१

माईडियर

तसलीम। आपका ७ जून का नवाजिशनामा मिला। मैं बनारस से १३ जून को लौटा। आपका खत आज वहाँ से यहाँ आया है। मुन्नू बाबू की शानदार कामयाबी पर आपको और मुन्नू को तहेदिल से मुबारकबाद। क्यों आप डाक्टर बर्क कासिम से अलहदा क्यों हो रहे हैं। मैं सोच रहा हूँ कि मौका मिले तो कानपुर आऊँ। बीवी ससुराल गयी है। धुन्नू उसी के साथ गया है। यहाँ सिर्फ बन्नू (छोटा लड़का) और हम दो आदमी हैं। यहाँ के मैनेजर एक मिस्टर ब्रजमोहन नाथ आमद हुए हैं। अभी उनसे मेरी मुलाकात नहीं हुई है। क्या तरमीम होगी इसकी फिलहाल खबर नहीं। मेरे नाविल गबन की कोई जिल्द आपके पास पहुँची या नहीं।

आपका

धनपत राय

२४२

सरस्वती प्रेस काशी
४ जुलाई १९३१

भाईजान

तसलीम। इस काम से फ़ुर्सत मिली। अब कोई मज़मून भी लिखूँगा। मगर ऐसा न हो आप इन किताबों को साल छः महीने के लिए ग़ार में बंद कर दें। एक बार इनकी अख़बारबाज़ी कर जाइए। चार पाँच रोज़ लगेंगे। फिर किसी से मुलाक़ात लिखवा लीजिए। अपनी 'बाज़ारिस्त'[1] में तो तर्जुमा बुरा नहीं किया। लेकिन बेहतरी की गुंजाइश हमेशा रहती है। और जुलाई में इसे चलता कीजिए ताकि एक माह में रुपये मिल जायें।

हमारे यहाँ अभी तो साबिक़ दस्तूर काम चल रहा है। लेकिन ज़्यादा उम्मीद नहीं है। मैं तैयार बैठा हूँ। धुन्नू कल बेटी के ससुराल से आ गया है।

'मासूम' और 'फ़रेबे अमल' मैं आऊँगा तो लेता आऊँगा। ताजकार के पास मेरा एक क़िस्सा पड़ा हुआ है। उस बाबू से कहिए अपने दोस्त महज़ी के बराबर सई[2] से ये मुनासिब मुआवज़ा[3] माँग लें। ताजकार का इस तनज़्ज़ुल[4] के ज़माने में गुज़र ही कहाँ।

जवाहरलाल आजकल कितना ज़हर उगल रहे हैं। इन्क़लाब की तैयारी है।

आपका
धनपत राय

२४३

नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
२१ जुलाई १९३१

भाईजान

तसलीम। ईश्वर करे आप जल्द अच्छे हो जायें। तबीयत की नासाज़ी तो एक मुसीबत है।

यहाँ कोर्ट आफ़ वार्ड्स का इंतज़ाम है मगर अभी कोई तब्दीली नहीं हुई है। स्पेशल मैनेजर आ गए हैं। इंतज़ाम साबिक़ दस्तूर है। शायद तख़फ़ीफ़[5] होनेवाली है। मगर तहक़ीक़[6] मालूम नहीं। मेरी तो मैनेजर साहब से मुलाक़ात ही नहीं हुई। न उन्होंने बुलाया न मैं गया।

---

१ गबन २ दौड़-धूप ३ अच्छे बदले में ४ अवनति ५ छंटनी ६ ठीक-ठाक

अभी ससुराल में हैं। मन्नू बाबू तो शायद इंगलैण्ड से अगस्त में आनेवाले हैं।

तबीयत मयस्सर हो तो मुसव्वदों पर ज़रा निगाह डालिए।

सहकार से मेरा अफसाना आपने शायद नहीं लिया। गोरखपुर से तो इसी नाम के एक रिसाले का इजरा[1] हो गया।

बक़िया हालात साबिक़ दस्तूर है।

आपका

धनपत राय

२४४

लखनऊ

३ अगस्त १९३१

भाईजान

तसलीम। आपके खत के इंतज़ार में थक गया। मैंने अर्सा हुआ एक खत लिखा था। उसका कोई जवाब न मिला। आप गुजरात जानेवाले थे मगर गालिबन् फुर्सत न मिली।

उन दोनों किताबों के मुताल्लिक़ क्या कारवाई हुई। नज़रसानी हो गयी या नहीं। शुरू भी हुई? अब तो बहुत देर हो रही है।

यहाँ का हाल साबिक़ दस्तूर है। खबर है कि रियासत कोर्ट ऑफ वार्ड्स में निकल गयी। लेकिन खबर ही खबर है। नफ़ाज़ नहीं[2]। सरकारी कारखाने हैं। मुमकिन है महीनों लग जायें। और तो कोई नयी बात नहीं। मन्नू बाबू तो इस माह में आयेंगे। या मोहर्रम के बाद?

आपका

धनपत राय

२४५

सरस्वती प्रेस काशी

११ सितंबर १९३१

भाईजान

तसलीम। आपका कार्ड कई दिन हुए मिला था। मसौदे आपने अभी तक नहीं देखे। इधर एडेल्फी शायद अब ऐसे तराजिम[3] देकर खत्म हो रही है। बाबू हर

१ आरंभ २ हुक्म जारी नहीं हुआ ३ अनुवाद

प्रसाद सक्सेना अभी कई रोज़ हुए डाक्टर ताराचंद से किसी काम की तलाश के सिलसिले में मिले थे। उन्होंने उस वक़्त यह ख़याल ज़ाहिर किया कि इन कामों से कोई मुफ़ीद नतीजा नहीं निकला और यह तज़ीए-औक़ात[1] है। ऐसा न हो उर्दू तर्जुमों के मुताल्लिक़ यही ख़याल हो और हम लोगों की मेहनत बरबाद हो जाए।

यहाँ कल एक नई बात हो गई। यहाँ मेरे ख़िलाफ़ मुद्दत से एक जमाअत थी जिसका सरग़ना यहाँ का मैनेजर हरे राम है। साले गुज़िश्ता[2] से उसका एक और मुआविन[3] पैदा हो गया। यह हैं मिस्टर पंत जो यहाँ कनवीनर होकर बुलाए गए थे। मिस्टर पंत यहाँ हावी होना चाहते हैं। इसकी उन्होंने रोज़े अव्वल से कोशिश शुरू की और मुझे अपना रक़ीब[4] समझ कर उन्होंने पहले मुझी ही को रास्ते से हटाना ज़रूरी समझा। किफ़ायत का मसला यहाँ शुरू से था ही। आपने यहाँ किफ़ायत सोची कि एडोटोरियल अमला बर तरफ़[5] कर दिया जाए और किताबें ज़िम्मेदार बा-असर और कमेटी में रसूख़ रखने वाले या ख़ुद कमेटी के मेम्बरों से बनवा ली जाएँ। इन अहमक़ों को यह न सूझी कि मुझे जो कुछ देते हैं वह एक किताब में वसूल हो सकता है और बा-असर असहाब से किताबें लिखवाने में रायल्टी की बेश-क़दर रक़म देनी पड़ती है। मेरी ज़ात से इन लोगों ने जितना पैदा किया है उसका निस्फ़ भी मुझे न दिया गया हो। अगर पंत दीदा व दानिस्ता[6] महज़ मुझे ज़क[7] देने के लिए मेरी तैयार की हुई किताबों को 'पुल' करने में तसाहुली[8] न करते तो लाखों रुपया बना लेते। मगर इस शख़्स ने महज़ मुझे नुक़्सान पहुँचाने के लिए इन किताबों के मुताल्लिक़ कोई कोशिश नहीं की। जब किताबें कमेटी से नामंज़ूर हो गईं तो ज़ाहिरदारी के लिए महीनों ख़तो-किताबत करता रहा। ख़ैर। मुझे यहाँ से जाना तो था ही। बल्कि मैंने जून में इस्तीफ़ा देने का इरादा किया था। लिखा भी। लेकिन बाज़ दोस्तों के कहने से उसे पेश न किया। मुझे यहाँ से जाने का ग़म नहीं। और ज़्यादा काम करूँगा। लेकिन रक़ीबों को यूँ ख़ुश होते देख कर इन्सानी कमज़ोरियों के बाइस जी जलता है। आपसे मिस्टर मनरो से कुछ राह व रस्म है। नामू यहाँ का स्पेशल मैनेजर है। मालूम नहीं उनसे आपकी कुछ मुलाक़ात है या नहीं। मगर मनरो से तो है ही। आप एक दिन के लिए यहाँ आ जाइए और मनरो से मिलकर यहाँ की इस फ़िरक़ेबंदी[9] का हाल सब समझा दीजिए। इस वक़्त भी नई किताबों की तालीफ़ का मसला पेश है उर्दू हिन्दी लिटरेरी रीडरों का। पंत उनके लिए कमेटी के मेम्बरों को तलाश कर रहे हैं। उसे यह मंज़ूर नहीं कि मैं किताबें लिखूँ और जो

---

१ समय की बर्बादी २ पिछले साल ३ सहयोगी ४ प्रतियोगी, शत्रु ५ कर्मचारी अलग कर दिये जाएँ ६ जानते-समझते हुए ७ नीचा दिखाने के लिए ८ ढील न डालते ९ गिरोहबन्दी

कमेटी में पेश हों क्योंकि ऐसा करने में उसे दवा-दविश[1] करनी पड़ेगी। मेम्बरों से किताबें लिखा लेने में कुछ कुछ करना नहीं होता। किताबें आप ही आप मंजूर हो जाती हैं। बस सिर्फ उनसे खतोकिताबत करके मुआमला पटा लेना होता है। यही काम उसने अपने जिम्मे लिया है और शायद मनरो को या मालू को समझा दिया है कि एडीटोरियल स्टाफ की जरूरत नहीं। मगर आप आ जाएंगे तो मनरो को यह तो मालूम हो जायगा कि मेरी बात से रियासत का नुक्सान नहीं है। बस मैं इतना ही चाहता हूँ।

डिपार्टमेंट आदमी के लिए आजकल बड़ी मुश्किलात पेश आती हैं और मैं कई बार इसका तावान दे चुका हूँ। लेकिन अब तो वह रविश नहीं छोड़ी जाती जो आदत हो गई है।

और सब खैरियत है।

आपका मुखलिस

धनपत राय

२४६

लखनऊ

२४ सितम्बर १९३१

बरादरम

तसलीम। लिफ़ाफ़ा मिला। मेरा ख्याल है कि आपको एक बार जरूर यहाँ आना चाहिए। यहाँ की फ़िल्मा-असेम्बलियों[1] का कुछ हाल बतला देना जरूरी है। मैंने अपनी अखबारात में कुछ इसका इशारा तो कर दिया है। मगर उस पर मुफस्सल कहने की जरूरत है। इस वक्त मुमकिन है मनरो आपके मआमलात म कुछ जवाब दें।

मैं मैनेजर साहब से अभी नहीं मिला। सोचता हूँ वह अफ़सरी जवाब दें तो क्या फ़ायदा। जो कुछ करना होगा वह तो करेंगे ही। मेरे ख्याल में मनरो जो कुछ करेगा वही होगा। उनसे कोई उम्मीद नहीं।

आपका

धनपत राय

---

१ दौड़ धूप करनी

२४७

गणेशगंज, लखनऊ
१ अक्तूबर १९३१

भाईजान

तसलीम। आपका २२ का ख़त आज मिला। आप उस पर ग़लती से लखनऊ की जगह इलाहाबाद लिख गये थे। और वह हफ़्ते भर मारा-मारा फिरने के बाद आज मिला। यहाँ तब से कोई नयी बात नहीं हुई। हम लोगों ने तै कर लिया है और अब किसी की हक़तलफ़ी[1] बेइंसाफ़ी या अपने नुक़सान का ख़याल इन्हें अपने इरादे से बाज़ नहीं रख सकता। मुझे अफ़सोस यही है कि आपको नाहक़ तकलीफ़ दी। ख़ैर अभी तो यहीं हूँ। ६ को यहाँ से बनारस होकर ग़ालिबन् नवम्बर लखनऊ में काटूँगा। उसके बाद दीदा बायद शुद[2]। बराय ख़ुदा काम तो देख डालिए। महज़ एक सरसरी निगाह की ज़रूरत है।

मुख़लिस
धनपत राय

२४८

गणेशगंज, लखनऊ
१२ नवम्बर १९३१

भाईजान

तसलीम। आप तो ग़ालिबन् हैदराबाद और बंबई से वापस आ गये होंगे। मुन्नू बाबू आपके साथ गये होंगे। मैं तो दिल्ली चला गया था। वहाँ दस ग्यारह दिन लग गये। दीवाली को लौटा। मुन्नू बाबू को मेरी तरफ़ से दुआ और मुबारकबाद कहिएगा।

ज़माना में अक्तूबर में विष्णु दिगंबर का ज़िक्र है। हंस में भी दिसंबर नंबर में विष्णु दिगंबर पर एक मज़मून छपा है। आपसे यह ज़िक्र आरियतन्[3] ले लूँगा।

अब तो [illegible] पर तवज्जो करने की ज़रूरत है। शायद आप मशीन में ज़्यादा हो गये। इस तरह तो कभी काम ख़त्म न होगा। दस-पाँच रोज़ मुस्तक़िल तौर पर बैठकर काम को निपटा ही डालिए। कहीं ऐसा तो नहीं है कि एकेडमी ने तर्जुमे को अपने प्रोग्राम से ख़ारिज कर दिया हो। अगर यही

१ हक़ मारना २ देखा जायगा ३ उधार

कैफ़ियत है तो भी चन्दाँ अफ़सोस का मुक़ाम नहीं। मैं तो इन किताबों को खुद छपवा डालने को आमादा हूँ। आठ आने क़ीमत में बेचकर दाम वसूल किया जा सकता है। बहरहाल कुछ भी हो अब तो इंतज़ार मुश्किल हो रहा है। उम्मीद है आप खुश हैं।

आपका
धनपतराय

२४६

गणेशगंज, लखनऊ
११ जनवरी १९३२

बरादरम

तसलीम। आपका इनायतनामा और तबसरात मिले। मशकूर हूँ। मैंने दूसरा तबसरा¹ से लिया है और उसका हिन्दी तर्जुमा करके हंस में दे दिया है।

मैं अभी तक उस पटना वाले मज़मून का उर्दू तर्जुमा नहीं कर सका। इसके लिए नादिम हूँ। और कई दिन तक एक फोड़े से तकलीफ़ था। अब वह अच्छा हो रहा है। ९ मार्च को मेरे बड़े भाई साहब बाबू बलदेव लाल का दुर्भाग्य से इंतक़ाल हो गया। घर में दो बच्चे हैं बेवा भाई की बेवा और एक बेवा बहन। अठारह को दसवाँ है। मैं १६ या १७ को जा रहा हूँ। वहाँ से २१ २२ को वापस आऊँगा। इन यतीमों की परवरिश का कुछ इंतज़ाम भी करना है। भोज भी करना ही पड़ेगा। हाँ अगर एकेडमी से कुछ पेशगी का इन्तज़ाम कर सकें तो इस वक़्त मेरा काम निकल।

हैदराबाद में आपका मेरी याद न आयी कुदरती बात है। याद तो उनको आती है जो बार-बार याददिहानी करते रहें। मैंने तो भूल से ज़िक्र कर दिया था। जब तक क़लम और दिमाग़ काम करता है तब तक ग़म नहीं। जब बेकार हो जाऊँगा तब देखी जायगी। तीन महीने और यहाँ हूँ। फिर मेरा वहाँ ही मकान है और मैं हूँ। अब तक दौलतमन्द न हो सका तो अब क्या होऊँगा। आदमी की कमज़ोरी है कि वह ज़िन्दगी चाहता है वर्ना कुछ छोड़कर मर गो गया और ख़ाली हाथ गये तो क्या।

कोशिश करूँगा कि बनारस से लौटते वक़्त कानपुर होता हुआ आऊँ।

और तो सब ख़ैरियत है। यहाँ की कांग्रेस कमेटी तो बंद हो चुकी। इजाज़त मुस्तमनियान में है¹।

मुख़लिस
धनपत राय

---

१ [illegible]

सौ रुपये निकाल कर दे दूँ। मैं अभी बाहर हूँ और मुझे ऐसी तफ़रीह[1] दरकार नहीं। मगर उनकी हालत हमदर्दीतलब है। जो कुछ हो सके ज़रूर कीजिए। मई में वह रिहा होकर आ जायेंगे। उस वक्त मुझे कितनी नदामत होगी। शायद फिर दो-चार दिन में चले जायेंगे। कम से कम उन्हें यह तशफ़्फ़ी[2] तो हो कि उनके अहबाब ने उनका ख़याल किया। यों तो गवर्नमेंट की ज़्यादतियाँ अब नाक़ाबिले बर्दाश्त हो रही हैं। पण्डित जवाहर लाल की वाइफ़ माँ के साथ कितनी बिदअतें[3] की गयीं। अब बाहर रहना मुझे भी बेहयाई मालूम हो रही है। हाँ पर्दए मजाज़ का रिव्यू अभी तक नहीं हुआ। इसका इंतज़ार करता रहा। अब याद दिलाता हूँ। किसी साहब से रिव्यू करवायें। या आप और जिससे मुनासिब समझें। मेरे किसी नाविल का ज़माना में रिव्यू नहीं हुआ। हालाँकि पर्दए मजाज़ को लेकर छः हो चुके और सातवाँ भी क़रीब तैयार है। मैंने ख़याल से बाज़ारे हुस्न का रिव्यू कर दिया था। और किताबें पड़ी हुई हैं। और और किताबें तो पुरानी हो गयीं। पर्दए मजाज़ तो नयी चीज़ है और उसका एक-एक लफ़्ज़ मेरा है। और तो सब ख़ैरियत है।

आपका

धनपत राय

२५३

लखनऊ

१५ मई १९१२

भाईजान

तसलीम। मैं आज बनारस जा रहा हूँ। अब से मेरे पास ख़ुतूत सरस्वती प्रेस काशी के पते ही से लिखियेगा। मेरा नाविल 'बेवा' तैयार हो गया है। इसके लिए मुझे यहाँ आठ-दस रोज़ ठहरना पड़ा। इसकी दो सौ जिल्दें मालगाड़ी से भेज रहा हूँ। इश्तहार बनारस से भेज दूँगा। आज़ाद और ज़माना दोनों में छपवा दीजिएगा। शायद साल दो साल में बिक जाये। किताब बहुत ख़राब छपी है मेरी हिमाक़तों[4] के बाइस[5] लेकिन मैंने क़ीमत बहुत कम रखी है। उम्मीद है आप बख़ैरियत हैं। अगर बनारस आपको इत्तफ़ाक़ हो तो मुझे ज़रूर इत्तला दीजिएगा। ड्रामों के बारे में आपने मुनासिब कार्रवाई कर ही ली होगी।

आपका

धनपत राय

---

१ ज़रूरत २ तसल्ली ३ ज़्यादतियाँ ४ बेवक़ूफ़ियाँ ५ कारण

२५४

सरस्वती प्रेस, बनारस
७ जून १९३२

भाईजान

तसलीम। ख़त मिला। हाँ मैं लखनऊ था। लेकिन कानपुर न आ सका। परेशानियों में था। फिर कभी इसका ज़िक्र करूँगा। मुआफ़ कीजिएगा।

'बेवा' बेशक बहुत ख़राब छपी। नई प्रेसों में छपी। कई पत्थर टूटे कई कातिबों ने लिखा। फँस गया था। मजबूरन ख़त्म करना पड़ा। ग़नीमत यह थी कि प्रिन्ट लाइन न दी जा सकी। अब इसकी चिटें भेज रहा हूँ। तकलीफ़ तो होगी मगर दफ़्तरी से चिपकवा लें और दोनों किताबों 'परदए मजाज़' और 'बेवा' का रिव्यू निकलवा दें। बहुत अर्से से मेरी किसी किताब की तनक़ीद 'ज़माना' में नहीं निकली। 'रामचर्चा' की तनक़ीद मैं लिख दूँगा। बहुत पसन्द।

अब नाटकों का ज़िक्र करना ज़रूरी हो गया। बाबू हर प्रसाद सक्सेना जेल से छूट आए और बहुत तंग-हाल हैं। मेरे पास बराबर ख़त लिखा है। क्या जवाब दूँ। मरहला कितना तय हुआ कितना बाक़ी है मुझे क्या ख़बर ?

आपने ख़बरसानी की या नहीं ? एकेडेमी से क्या पेशगी का मआविज़ा नहीं पेश हो सकता ? और न सही सौ रुपये पेशगी लेकर उनके पास भिजवा दीजिए। बेचारे बड़ी तकलीफ़ में हैं। मैं मजबूर हूँ हालाँकि जानता हूँ यह मजबूरी आरज़ी है। आप ही सोचिए कितनी मुद्दत गुज़र गई। ग़ालिबन तेरह माह हो गए। अब तो ब परे भी नहीं करते बनता × × ×

और तो सब ख़ैरियत है। अभी शहर में मकान नहीं ले सका। × × इसलिए मन्नू से न मिल सका। ज़रा शहर आ जाऊँ तो मिलूँ।

मुख़लिस
धनपत राय

११४ भेजी ही गई। दफ़्तरी ने लाहौर का 'ज़माना' और 'ज़माना' का लाहौर भेज दिया।

२५५

सरस्वती प्रेस, काशी
१७ जून १९३२

भाईजान

तसलीम। मैंने तो नस्र व नज़्म[1] के एक ख़मसे[2] वाले तनासुब[3] को सबकों[4] का तनासुब समझा है। और उसी पर अमल किया है। मगर इस वक्त जितने मजमूए हिन्दी उर्दू तैयार हो रहे हैं उनके देखते किसी नस्र की मुनासबत मश्किल है। मैं तो अब कान पकड़ रहा हूँ। अबकी फँस गया हूँ और महज़ बराय नाम। मगर आइन्दा से इस आइन से सोलहों आना किनाराकश हो जाऊँगा।

मेरा नया नाविल कर्मभूमि छप रहा है। अठारह फ़ार्म छप गये हैं। कोई छ सौ सफ़े की किताब होगी।

अभी तक तो देहात में हूँ मगर जल्द शहर में रहूँगा। मकान ठीक कर रहा हूँ। उम्मीद है कि आप खुश हैं। अनारकली की तनक़ीद तो अभी नहीं लिख सका। इसी रीडरवाली कुलफ़त में मैं भी मुबतिला हूँ हालाँकि जी बिलकुल नहीं चाहता मगर राय साहब से वादा कर चुका हूँ उसका पूरा करना ज़रूरी है।

मुख़लिस
धनपत राय

२५६

सरस्वती प्रेस, काशी
२७ जून १९३२

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। पहले इन दोनों किताबों 'पर्दए मजाज़' और 'बेवा' का रिव्यू तो करा दीजिए। एक इश्तिहार तो नहीं है, दूसरा यह भग रहा हूँ। 'ज़माना' में रीडिंग मैटर के नीचे किसी गोशे में रखवा दीजिए। 'पर्दए मजाज़' पर तो मैं आपकी राय का मुश्ताक़[5] हूँ। इसे मैंने बहुत मेहनत से लिखा था। आप इसे एक बार सरसरी तौर पर पढ़ तो जाएँ। मगर शायद आपको फ़ुरसत न मिलेगी।

आप जिन जमाअतों के लिए उर्दू रीडरें लिख रहे हैं। पाँचवीं छठी सातवीं के लिए या आठवीं नवीं दसवीं के लिए। मज़ामीन[6] के मुनासिब नोट लिखने में एक दुश्वारी यह पेश आती है कि अक्सर सबक़ रिसालों से लिये

१ गद्य [illegible] तिहाई ३ [illegible] ४ पाठों [illegible] ६ [illegible]

जाते हैं और रिसालों में अक्सर-औक़ात[१] गुमनाम अहले क़लम[२] आ जाते हैं, जिनके तर्ज़े तहरीर[३] या ख़ुसूसियात पर कोई राय क़ायम नहीं की जा सकती। न उनकी तसानीफ़ ही हैं जिन पर कुछ लिखा जाए। अगर यह सोचिए कि मुस्तनद[४] लोगों के मज़ामीन ही लिये जाएँ तो फ़र्दफ़ुरसत में जो दर्जे इन्तख़ाब[५] के मुताल्लिक़ ज़ाहिर की गई हैं उनकी पाबन्दी नहीं हो पाती। पहले क़लम का ख़ास-ख़ास मौज़ू पर मज़ामीन नहीं मिलते। पाँचवीं छठी और सातवीं में तो मुझे यही दिक़्क़त पेश आई। कोशिश की है कि बड़े-बड़े नामों से ही इन्तख़ाब किया जाए। फिर भी ग़ैर-मशहूर नाम आ ही गए हैं। इस पर भी कुछ न कुछ दो चार लाइन लिख ही दिया जायगा।

अब रह गया सवालात के मुताल्लिक़—हिदायतनामा की तहरीर में इस पर भी तफ़सील हमारे मौजूद हैं। ख़ास तफ़सील के लिए अक्सदीरिया देख लीजिए। मिस्टर कड़के लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी और अयोध्यानाथ त्रिपाठी वग़ैरा ने किताबें तालीफ़[६] की हैं। उनमें किसी से मिल कर तै कर लीजिए। इन लोगों की किताबों में सवा-लात बहुत अच्छे हैं। मज़्मूआ उर्दू किताबों में आपको अच्छे सवालात न मिलेंगे क्योंकि ज़्यादातर लोगों ने दूसरों से मज़ामीन इन्तख़ाब कराके नाम डाल दिये हैं। हाँ अक्सर का नया इन्तख़ाब अच्छा होगा। हर एक लिहाज़ से। गर्ज़े-गुफ़्तगू की बात मैंने यूँ लिखी थी कि अगर इन किताबों के लिए आपको मक़रूर रक़म मिल गई है तो ख़ैर, वर्ना रायल्टी मुक़र्रर है। मगर रायल्टी किताबों की बिक्री ही पर तो मिलेगी। अगर सब किताबें एक साथ मंज़ूर हुईं तो एक आदमी के हिस्से में पाँच ही किताबें तो आएँ। उनमें उर्दू लफ़्ज़ों की तादाद कितनी है। अगर पाँच किताबें मिल जाएँ तो फिर भी कुछ आमदनी हो सकती है। एक ही दो किताबें मिल कर रह गए तो अलबत्ता नुक़सान हो जाता है। मालूम नहीं आप किसके लिए लिख रहे हैं। आपका वाती अक्सर मज़ीमन किताबों की मंज़ूरी और इशाअत[७] में मुआविन होगा इसमें शक नहीं।

मेरा मुआमला शायद पड़ा जा रहा है। तास्सुबेकार प्रेस फ़ाइनेन्स प्रेस है। इमामाय अली साहब आज कल ताम्भुसरार हैं। प्रेस के पास सरमाया[८] कुछ नहीं। अभी तक किताबों की छपाई शुरू नहीं हुई। मुहम्मदीन में दो साहब इश्तहार और शामिल थे हैं। एक साहब तो मंसूरी में तशरीफ़ रखते हैं, दूसरे साहब रायपुर में या नरसिंहपुर में तीसरा मैं हूँ। ख़ैर। चूँकि मैं अब न पास हूँ इसलिए मैंने प्रूफ़ वग़ैरा देखने का ज़िम्मा ले लिया था। मगर

१ बहुधा २ लेखक ३ लेखन-शैली ४ प्रामाणिक चुने जाने ५ चुनाव ६ बनायी ७ प्रकाशन ८ पूँजी लिखी प्रचार-प्रसार ९ आ

अभी तक तबाअत[1] शुरू नहीं हुई। जुलाई में तीनों किताबें तैयार हो जाएँगी मुझे इसमें शुबहा है।

नाटकों के मुताल्लिक़ मुझे कुछ लिखते डर लगता है। कहीं आप यह न समझें कितना बे-सब्र आदमी है। लेकिन जब हर प्रसाद साहब की याददिहानी आ जाती है तो मजबूर हो जाता हूँ। इस वक्त उन्हें सौ रुपये लाख रुपये के बराबर हैं। मेरे लिए भी सौ तो सौ के बराबर नहीं सही आपके लिए भी ग़ालिबन् सौ पचास के बराबर न होंगे। ख़ुदा करे आपकी दीदें ख़त्म हों और आप इधर मुतवज्जे[2] हों। कहाँ तक इसरार करूँ।

'हंस' का ख़ास नम्बर निकालने का इरादा है। लेकिन ज़मानत का मसला है। आर्डिनेंस का इजरा[3] होगा और हमारे हाथ-पाँव फिर बँध जायेंगे। देखिए ये भी [illegible][4]।

बाल-बच्चे अच्छी तरह हैं। क्या बाबू विराज नरायन मुस्तक़िल तौर पर नैनीताल चले गए हैं?

मुख़लिस
धनपत राय

२५७

सरस्वती प्रेस, काशी
१८ जुलाई १९३२

भाईजान

तसलीम। कार्ड मिला। शुक्र है आपको इस इंतज़ाम से फ़ुर्सत तो मिली। देखिए कितने सेट होते हैं। मेरा हिन्दी सेट तो मंसूख़[5] हो गया। ताअस्सुफ़वार प्रेस किताबों की छपाई का इंतज़ाम न कर सका। कारकुनों[6] में कुछ ऐसी बदमज़गियाँ पैदा हो गयीं कि राय साहब की कुछ न चली और उनका नुक़सान भी हुआ। मनीजर वग़ैरह पहले ही से रख लिये गये थे। एक हज़ार का टाइप भी आ गया था। मगर सब धरा रह गया। साझे की खेती की मुख़ालिफ़तों में तीन साहब थे एक अन्धा जो था। और अलहदा हुआ सामने पहाड़ों पर तशरीफ़ ले गये मैं रह गया। मैंने भी प्रेस की हालत देखी तो चुपका हो रहा। उर्दू सेट तो मैंने लिया ही नहीं। अपना सेट मुझे देखने को दे दीजिएगा। हाँ और चूँकि अब आपको इस काम के लिए फ़ुर्सत हो गयी है नाटकोंवाला मुआमला तो ख़त्म कर दीजिए। मुझे बार-बार याद दिलाते नागवार मालूम होता है। हंस का नंबर निकल रहा है। अब

---

१ छपाई २ ध्यान दें ३ पुनरावृत्ति ४ क्या होता है ५ कट गया ६ काम करनेवालों
७ [illegible]

एक इश्तेहार निकालने भी जा रहा हूँ। ग़ालिबन १५ अगस्त से निकले। और तो कोई नयी बात नहीं।

आपका
धनपत राय

२५८

इलाहाबाद
२१ अक्तूबर १९३२

भाईजान

तसलीम। परसों यहाँ आया और मालूम हुआ कि आप भी एक दिन पहले तशरीफ लाए थे। क्या कहूँ मुलाक़ात न हुई। बहुत-सी बातें करनी थीं। यहाँ से बनारस आप तशरीफ ले जाते हैं मगर ग़रीबख़ाने की तरफ़ मुतवज्जिह नहीं होते। मैं कानपुर आऊँ और आपसे न मिलूँ यह मुहाल है। आप आते हैं और मुझे ख़बर तक नहीं होती। इसे क्या समझूँ।

'हंस' का कोई रिव्यू 'ज़माना' में न छपा। 'पर्दए मजाज़' का भी यही हाल हुआ। आपको मुझसे इतना कम इंट्रेस्ट क्यों हो गया है? क्या 'पर्दए मजाज़' आपने पढ़ा? आपके किसी दोस्त ने पढ़ा? या इस क़दर मग़्व[1] है कि आपने पढ़ने की तकलीफ़ गवारा नहीं की? लिटरेरी काम में सिवाय नुकसान या ज़हमत के और क्या रखा है। पब्लिशर भी किताब क्या छापा करे जब कोई उसका पूछनेवाला न हो। और जब 'ज़माना' जैसा रिसाला इस क़दर बेएतनाई[2] करे तो दूसरों पर मेरा क्या हक़ है और क्या चारा है?

'बाकमालों के दर्शन' यहाँ लाला राम नारायण लाल बुकसेलर ने शाया किया है। यह आपको मालूम है। इसमें इनकी सवानह उमरियाँ हैं —
१) राणा प्रताप २) टोडरमल ३) मानसिंह ४) अकबर ५) बदरुद्दीन तैयब जी ६) सर सैयद अहमद ७) वहीदुद्दीन सलीम ८) शरर ९) गैरीबाल्डी १०) रणजीतसिंह ११) विवेकानन्द।

पहले इस मजमूए में मुसलमान मशाहीर[3] न थे। शायद इसी बिना पर कमेटी ने इस पर इत्तफ़ाक़[4] न किया था। अब वह कमी पूरी कर दी गई है। अकबर तो मैंने अज़ीज़ मिर्ज़ा से लिया है। वहीदुद्दीन सलीम और शरर भी 'ज़माना' के मज़ामीन से मुक़्तबिस[5] हैं। मेरे ख़याल में अब यह स्कूल के क़ाबिल है। अबकी यह किताब फिर पेश की जायगी। मैं आपसे उम्मीद करूँगा कि इसके

१ [illegible] २ उपेक्षा ३ महान् व्यक्ति ४ सहमति ५ उद्धृत

हक़ में एक कलमए खैर¹ कह कर इसे दाखिले इश्तहार करा दें। इसके लिए शुक्रिया न अदा करूँगा।

'हंस' की जमानत दाखिल कर रहा हूँ। एक सूरत निकल आई है। 'जागरण' इश्तहार में खूब चपत पड़ रही है। मगर हिम्मत किये निकाले जाता हूँ। देखिए ऊँट किस करवट बैठता है।

और तो सब खैरियत है।

आपका
धनपतराय

२५९

सरस्वती प्रेस बनारस
२५ अक्तूबर १६१२

भाईजान

तसलीम। उम्मीद है कि आप खुश हैं। लड़कों से यहाँ के हालात मालूम हुए थे। उन्हें आपकी मेहमाननवाज़ी से जो आसाइशें² पहुँची उसके लिए शुक्रिया।

नाटकों के मुतालिक कुछ पूछना न चाहता था लेकिन जब बाबू हर प्रसाद साहब की नाराज़गी आ जाती है तो मजबूर हो जाता हूँ। अब तो पूरे डेढ़ साल हो गये। कुछ उनके छपने की उम्मीद है या नहीं। मैं चाहता हूँ अब यह किस्सा तमाम हो जाये। मुझे हर प्रसाद साहब से जो नदामत हुई है वह बहुत दिन याद रहेगी। मैं समझता हूँ एकेडमी अब इन ड्रामों को शाया नहीं करना चाहती और आप महज़ शर्मिन्दगी की वजह से उन्हें रखे हुए हैं। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि मैं उन्हें दो माह के अन्दर शाया करा लूँगा। या खुद या किसी पब्लिशर से। इसलिए आप बराहे करम मुसव्वदा वापस कर दें। मैं आपका बहुत ममनून होऊँगा।

क्या आप बतला सकते हैं बेवा की कितनी जिल्दें निकल गयी होंगी।

आपका
धनपत राय

२६०

सरस्वती प्रेस, काशी
७ दिसंबर १६१२

बरादरम

तसलीम। उस दिन मैं मैंने दो बजे तक हुजूर का इंतजार किया लेकिन

१ अच्छी बात, भलाई की बात   आराम

समझ गया कि कहीं घर लिए गये। आप मुझे बुला रहे हैं। मैं यही सोच रहा हूँ कि चंद दिन में आ जाऊँ। क्या वहाँ के मिलों के इश्तहारी महकमे से आपके कुछ ताल्लुकात हैं? लाल इमली वग़ैरह से क्या इश्तहार मिल सकते हैं? जनवरी में तो उनका नया साल शुरू होता होगा।

यहाँ १ तारीख़ को सरस्वती प्रेस और जागरण से दो हज़ार की जमानत तलब हो गयी। मिस्टर मजफोर्ड से मिला था। आज लौटा हूँ। ग़ालिबन मंज़ूर हो जावे। और तो सब ख़ैरियत है।

मुख़लिस
धनपत राय

२६१

सरस्वती प्रेस बनारस
१५ दिसम्बर १९३२

भाईजान

तसलीम। जमानत की मंसूख़ी की ख़बर मिल चुकी है। अख़बार बदस्तूर जारी है।

आपने फ़रमाया था कि आप जागरण के लिए किसी एजेंट से मुआमला कर सकते हैं। फ़िलहाल कानपुर में महज़ ४२ कापियाँ जाती हैं। हालाँकि मेरा ख़याल है कि अगर कोई चलता हुआ आदमी हो तो इसकी दुगनी कापियाँ आसानी से निकल सकें। ऐसा कोई आदमी निगाह में हो तो बराहे करम लिखिए। जागरण के लिए कुछ इश्तहारों की भी ज़रूरत है। यों कुछ न कुछ इश्तहारात तो मिल ही गये हैं मगर उनसे पूरा कॉस्टिंग[1] नहीं हुआ। अब भी उसमें कम से कम ४०) रुपये माहवार का घाटा है। अगर पचीस रुपए के इश्तहार भी और आ जायें तो ख़सारा कम हो और बर्दाश्त के क़ाबिल हो जाय। अभी तो बदस्तूर निकलता जा रहा है। आपका कानपुर के मिलों के अफ़सरों से और मैनेजरों से कुछ न कुछ राह-ओ-रस्म तो है ही। मसलन् मुईन मिल्स या एल्गिन वग़ैरह। क्या आपके ज़रिये उनसे कुछ इश्तहारात मिल सकते हैं? सुना है ये लोग जनवरी से साल भर के लिए इन्तज़ाम किया करते हैं। दौरान साल में कुछ नहीं करते। जनवरी आ रही है। अगर आप कुछ उम्मीद दिलायें तो मैं उन कारख़ानों से ख़त-ओ-किताबत शुरू करूँ और अपना निर्ख़नामा वग़ैरह भेज दूँ। जागरण की तादाद इशाअत दो हज़ार तक पहुँच गयी है।

---
[1] कॉस्टिंग

मगर जैसा कि आप खुद जानते हैं महज कसरते इशाअत से अखबार कामयाब नहीं होता तावक्ते कि इश्तहारों की माकूल आमदनी न हो।

मेरी किताबों का हिसाब दो साल से नहीं हुआ है। अगर किताबों की बिक्री से कुछ रुपये हुए हों तो भिजवाने की इनायत करें। और तो सब खैरियत है। उम्मीद है आप खुश हैं।

मुखलिस
धनपत राय

२६२

सरस्वती प्रेस, काशी
२२ दिसम्बर १९१२

बिरादरम

तसलीम। कल अखबार में अम्माँ की वफ़ात की खबर देखकर दिली सदमा हुआ। उनके लिए तो इससे बेहतर मौत नहीं हो सकती थी ऐसी खुशनसीब कितनी माँएँ हैं जो अपने पोतों को फलता-फूलता देखकर खुश-खुश रुखसत हों लेकिन माँ बाप की मौजूदगी में तो लड़के बूढ़े होकर भी लड़के ही रहते हैं। आप को और सारे खानदान को माताजी की वफ़ात से कितना सदमा होगा इसका अंदाजा वही कर सकते हैं जो ऐसे सानिहे भोग चुके हों। परमात्मा उन्हें जन्नत में जगह दे। हमारे लिए सब्र के सिवा और क्या चारा है हालांकि सब्र की तलकीन करना जितना आसान है सब्र करना उतना आसान नहीं।

मुखलिस
धनपत राय

२६३

जागरण कार्यालय, काशी
११ जनवरी १९११

बिरादरम

तसलीम। इधर कई हफ्तों से जमाना का इश्तहार जागरण में नहीं निकल रहा है न जमाना में। क्या उसकी सब जिल्दें फ़रोख्त हो गयीं? अगर फ़रोख्त हो गयी हों तो और १ जिल्दें भिजवा दूँ?

१२ आखिर हो गया। जनवरी ११ से किताबों का हिसाब नहीं हुआ। क्या आप हिसाब करवा सकते हैं? १२ के आखिर तक का हिसाब हो जाना चाहिए।

आप सैनाटोजन कलजाना पेप्स वग़ैरह के इश्तहारी एजण्टों का पता दे सकते हैं ? मशकूर हूँगा ।

आपका

धनपत राय

२६४

आगरए कार्यालय काशी

१८ फ़रवरी १६३३

बरादरम

तसलीम । खर्ते से आपके हालात न मालूम हुए । मैंने पंद्रह दिन से ज़ायद हुए एक ख़त भी भेजा मगर उसका कोई जवाब न मिला । क्या ख़त पहुँचा ही नहीं । मैंने पूछा था क्या 'बेवा' फ़रोख्त हो गयी । उसका इश्तहार नहीं है । अगर फ़रोख्त हो गयी तो क्या और जिल्दें भिजवाऊँ ।

मुख़लिस

धनपत राय

२६५

सरस्वती प्रेस काशी

२८ फ़रवरी १६३३

माईजान

तसलीम । नवाज़िशनामे के लिए शुक्रिया । बेवा तो बदनसीब होती ही है । उसकी इतनी कम जिल्दें फ़रोख्त हुईं इसमें उसका सिवा और किसकी ख़ता है । बेवा को आमतौर पर कौन पूछता है । पढ़ना ही चाहे तो आरियतन् मिल सकती है ।

आप बराहे करम इसकी १ जिल्दें मालकाही से

एन डी सहगल ऐंड संस

बकसल्स ऐंड पब्लिशर्स

लोहारी गेट

लाहौर

के पास भज दें । उनकी एक फ़रमाइश मरे पास आयी थी । लाहौर में भी इस किताब की अच्छी बिक्री नहीं हो रही है । फिर भी हम मुझे ने इतने इज़ार दज़ीमन है ।

जो रोज़ाना 'आगरा' लखनऊ से निकालने का इंतज़ाम हो रहा है। देखिए कब तक पूरा होता है। हफ़्तेवार के मुक़ाबले ने रोज़ाना पर आमादा किया है। आपने जो पर्चे रवाना किये हैं उनके लिए शुक्रिया।

उम्मीद है आप खुश हैं।

मुख़लिस
धनपत राय

२६६

सरस्वती प्रेस, काशी
२२ जून १९३३

भाईजान

तसलीम। आप भी ख़ामोश और मैं भी कम मजबूर। मालूम नहीं मैंने आपको ख़बर दी थी या नहीं। बेटी एक बच्चे की माँ हुई और साथ ही बीमार थी। ज़च्चाख़ाने में ही बुख़ार दामनगीर हुआ। महीने भर तक ज़नाने अस्पताल में रही। अब घर पर है। यानी अपने घर पर। कुछ न कुछ टेम्परेचर हो जाता है। दोनों बच्चे और उनकी माँ उसे देखने गये थे और एक माह से ज़्यादा हुआ *अभी लौटे नहीं हैं। आपकी तरफ़ सब ख़ैरियत है न?*

किताबों के हिसाब के मुताल्लिक आपके मैनेजर साहब ने कुछ न लिखा। मेरा हफ़्तेवार अभी तक ख़सारे पर है और मुझे बहुत परेशान कर रहा है। छपता तो दो हज़ार है और बिक भी जाता है मगर इश्तहार न होने के बाइस माहवार डेढ़ सौ की चपत देता है।

और तो सब ख़ैरियत है।

आपका
धनपत राय

२६७

सरस्वती प्रेस, बनारस
९ सितम्बर १९३३

भाईजान

तसलीम। मेरे पास एक मज़मून राजा राममोहन राय पर आया हुआ है। मुझे याद है आपके यहाँ उनका फ़ोटो मौजूद है। बराहे करम रवाना कर दें तो [illegible]। इसी माह में ग़ालिबन उनकी बरसी है। इसलिए [illegible] रही है।

माधुरी में एक मेरी कहानी और एक महाशय साहिब की कहानी निकली। मालूम नहीं आपने किस रसाले से लिया। किसी का नाम न था। माधुरी के पर्चे की यह यकसाँ[1] हरकत है।

उम्मीद है आप खुश हैं। किताबों के हिसाब और मुकदमात का अगर कुछ फ़ैसला हुई हो मुन्तज़िर हूँ।

आपका
धनपत राय

२६८

सरस्वती प्रेस बनारस
११ सितम्बर १९३१

भाईजान

तसलीम। हर वर्षा ममनून।

आपसे मैंने इस्तदुआ की थी कि राजा राम मोहन राय का फ़ोटो भिजवा दें। आपके ख़त में इसका ज़िक्र नहीं है। शायद वह आप फ़रामोश कर गये। बराहे करम वह फ़ोटो बवापसी भिजवा दें। इसी माह में वह मज़मून छपवाना चाहता हूँ। और आज ११ हो गयी।

बड़ा लड़का तो अभी सेकण्ड इयर में है छोटा आठवीं में। लड़की अच्छी तरह है।

मुख़्लिस
धनपत राय

२६९

अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊ
१ सितम्बर १९३१

भाईजान

तसलीम। याद के लिए शुक्रिया। अमानतों का हिस्सा अगर मंज़ूर हुई तो मसर्रत की बात है। अब शायद बक़िया जिल्द निकल जाय। अल्ताफ़ हुसैन के निकल जाने का मुझे अफ़सोस नहीं। मुझे तो उनके दाख़िल होने पर ही ताज्जुब हुआ था। हाँ अगर वाक़यात के दरजे मंज़ूर हो जाय तो अपना फ़ायदा है क्योंकि उस पर मेरी तवज्जो[2] है। देखिए कमेटी क्या करती है। मैंने तो ड्रामा के तर्जुमे भेज

---

१ ऐसा काम २ ध्यान

दिये थे सिलवर बाक्स और जस्टिस। इन तर्जुमों में मुझे बड़ी दिमाग़सोज़ी[1] करनी पड़ी। एक तरफ़ यह ख़याल कि संस्कृत अल्फ़ाज़ न आने पायें। इसके साथ फ़ारसी के ग़ैर-मानूस[2] अल्फ़ाज़ से मोहतरिज़[3] रहने का क़यास। एक एक जुमले के लिए घंटों सोचना पड़ा। इस पर भी डाक्टर साहब को पसन्द न आये तो मजबूरी है। अभी स्ट्राइफ़ मेरे पास ही है। ख़त्म कर चुका हूँ नज़रसानी कर रहा हूँ। आपसे डाक्टर साहब से इस मसले पर क्या गुफ़्तगू नहीं हुई? क्यों जनाब हो? आप कब तक भेजने का क़स्द करते हैं? या भेज दिया?

बक़िया सब ख़ैरियत है। बच्चों को दुआ।

नियाज़मन्द,
धनपत राय

२७०

सरस्वती प्रेस, बनारस
६ जनवरी, १९३४

भाईजान

तसलीम। मुहब्बतनामा मिला। मैं आज ही आपको लिखने जा रहा था। अज़ीज़ कृष्णनारायण की कामयाबी पर तहे दिल से मुबारकबाद। मैं गुज़श्ता नवम्बर में जिस वक़्त लखनऊ गया हुआ था तो मुझसे मास्टर कृपाशंकर साहब से मुलाक़ात हुई थी जो डाक्टर साहब के चचेरे भाई हैं। उस वक़्त उन्होंने कहा था कि डाक्टर साहब अपनी साहबज़ादी को बी० ए० तक ले जाना चाहते हैं। तब से न मैं लखनऊ गया न कोई मौक़ा आया। अब मैं किनायतन्[4] मास्टर कृपाशंकर से दरयाफ़्त करके आप से अर्ज़ करूँगा। वाह! आप भी क्या कहते हैं। मैं इस तरह ज़िक्र करूँगा जिसमें किसी तरह का गुमान न हो।

मेरी हालत साबिक़ दस्तूर है। हंस का काशी नम्बर तो आपको मिल गया है? आप ज़रा इसकी तनक़ीद करवा दीजिएगा। इस नम्बर पर मेरे तक़रीबन् १२) ख़र्च हो गए। ४) का तो काग़ज़ लग गया। २) के ब्लाक और रात्रे चार सौ लगाइ। महसूल डाक वग़ैरा में २) ख़र्च हो गए। ख़याल था कि इस नम्बर से पर्चे की इशाअत में माक़ूल इज़ाफ़ा होगा। अन्दाज़ा था कि दो ढाई सौ ख़रीदार बढ़ जाएँगे। मगर नतीजा बिलकुल बर-अक्स। १ वी० पी० गए थे उनमें १ वापस आ गए। दफ़्तर में वापसशुदा रिसालों का ढेर लगा हुआ है। ७) मिले मगर काग़ज़वालों के २) बाक़ी थे। ब-मुश्किल

१ मेहनत २ अपरिचित ३ बचना ४ इशारे से

१) से ज्यादा। १५) कागज का बाकी पड़ा हुआ है। बस यूं समझ लीजिए कि लुटिया बैठ गई। बड़ी करारी चपत पड़ी। घुटिया गया हूं। लीडर प्रेस वालों से गुफ्तगू कर रहा हूं कि वह मेरे सारे कारोबार को अपने में शामिल कर लें। दो एक रोज हुए उनसे मिल भी चुका हूं। हिम्मत पस्त हो गई है। इस बार साल में दोनों रिसालों के पीछे ४) से ज्यादा नुकसान उठा चुका। मेहनत का सब की वह अलग प्रेस को जो नुकसान हुआ वह अलग।

बात यह है कि मैं इस काम में बिना सोचे-समझे कूद पड़ा। जहां से रुपया मिल सका वह लगा दिया। बाबू रघुपति सहाय से रुपए लिए थे। अभी तक उनके ४) मुझ पर आ रहे हैं, जिसका वो सख्त तकाजा कर रहे हैं। गर्ज कि परेशानियों में मुब्तिला हूं। इस लिए जिस तनदेही से काम करना चाहिए वह न दे सका। घर पर लिटरेरी काम करता ही हूं। इस काम को तफरीह के तौर पर करता रहा और तफरीह तो हर कोई चीज है ही। निजात तो दिल व जान से चाहती है। कई बार जी में आया कि आप को तकलीफ दूं लेकिन महज इस ख्याल से कि आप खुद अपनी परेशानियों में मुब्तिला हैं जुरअत न हुई। लेकिन अब पानी मसाइब[1] की आखिरी सीढ़ी पर है और मुझे इन्तहाई मजबूरी की हालत में लिखना पड़ता है कि मेरी जरूरत को इतना ही शदीद[2] समझिए जितना आप खुद अपनी जरूरत को समझते हैं। आइन्दा अक्तूबर में आप रुपए देंगे ही। मगर जनवरी फरवरी में १) ही दे सकें तो मैं शर्मिन्दगी से बच जाऊं। बाकी अक्तूबर में दे दीजिएगा। आप इस हालत में हैं कि आप कुछ इन्तजाम कर सकते हैं कि आप का क्रेडिट अब बहरहाल ज्यादा हो गया है। मेरा कोई क्रेडिट नहीं। मुझ पर तो डिग्री लाख की हो चुकी है, जिसकी इत्तिला मैं दे चुका हूं। इसी लाटरी नम्बर पर टालता आता था। मगर वह नम्बर आया और निकल गया मगर रुपयों की बारिश तो क्या ओस भी न टपकी। कुछ लिखा कर शामिल १ ०) में बाहर का मामला है। मगर इस वक्त निकल भी मिल जाता तो चार-पांच महीने के लिए मोहलत मिल जाती। इस दरमियान में शायद लीडर प्रेस से मुआमला हो जाए। मगर उस हालत में भी तो मुझे अपने मुतालबात[3] अदा करने ही पड़ेंगे। मैं यह नहीं मान सकता कि आप मेरी मदद करना चाहें तो न कर सकें। हां मेरी जरूरत को महसूस ही न करें तो दूसरी बात है।

और क्या लिखूं? बेटी यहीं है। दिसम्बर की छुट्टियों में उसका शौहर आया था मगर हम लोगों ने उसे रुखसत नहीं किया शायद माघ में जाएगी।

१ [illegible] २ तीव्र ३ मांगें

बड़े साहबजादे अबकी एफ ए का इम्तिहान दे रहे हैं। लेकिन औसत दर्जे में हैं। तबीयत की कोई खास अलामत नजर नहीं आती। छोटा ज्यादा जहीन है, मगर अभी आठवीं में है।

आप लड़कियों के एतबार से खिदमत के जिस दर्जे में हैं मैं लड़कों के एतबार से उसी दर्जे में हूँ। इस वक्त मुझे इन हरकतों से निजात मिल जाना चाहिए था ताकि किसी कोने में ब इत्मीनान पड़ा हुआ कुछ लिखा-पढ़ा करता मगर यहां अभी बच्चे पास रहें। जो काम चालीस की उम्र में होना चाहिये था वह अब पचपनसाले में हो रहा है जब आदमी बेकार हो जाता है।

उम्मीद है आप मेरी इस दास्तानगम पर आँसू की दो नन्ही बूंदें गिरा देंगे।

उम्मीद है आप बखैरियत हैं। दाल-भात में दर्द नहीं हो रहा और बच्चे खुश हैं।

मुखलिस

धनपत राय

अजंता सिनेटोन लि., बम्बई

२५ जून १९३४

२७१

माईडियर

तसलीम। दैरो-हरम पढ़ा। मेरा ही अफसाना है मगर शायद उर्दू में किसी और नाम से छपा था। हां जिन्दगी ने नकल करने में असल का खून किया है। और आचार के कातिब साहब ने मुए पर और दुर्रे लगाए हैं। मगर इस मजमून में किसी को शिकायत का क्या मौका है। फिरकापरस्ती की जहनियत का पर्दाफाश किया गया है। बिना किसी ब-रियायत के। एक तरफ हिन्दू पंडितों और पुजारियों की मजहबपरस्ती का नजारा है। दूसरी जानिब मुल्लों की मजहबपरस्ती का। दोनों मजहब के पर्दे में अपनी अपनी नफ्सपरस्ती[1] के शिकार हो रहे हैं। अगर कुछ लोगों को बुरा लगता है तो मेरा क्या अख्तियार है।

लड़के काशी पाठशाला होस्टल में हैं। वहां यहां हिन्दोस्तानी एकेडमी है। बीस नंबर के कमरे में रहते हैं। एक का नाम श्रीपत राय दूसरे का अमृत या अमृत राय। अभी दोनों आये थे। २२ को गये हैं। आप तो गर्मियों में ही बम्बई भी दर्ज कर दीजिएगा। मैं तो यह लंबा सफर करने से रहा। २० घंटे लगते हैं। मरन हो जाती है।

---

१ अपनी-अपनी देह वासना

मैंने मैनेजर हंस को ताकीद कर दी है कि जब मेरा अफ़साना छपे वह उसका मुफ़्त ज़माना को भेज दिया करें और हंस में लिख दिया करें। उर्दू तर्जुमे का हक़ ज़माना के लिए महफ़ूज़[1]। शाम में पांच छः से ज़्यादा नहीं लिखता। हां महर साहब इस काम के लिए बहुत मौज़ूँ हैं। और सब ख़ैरियत है।

मुख़लिस
धनपत राय

२७२

अजंता सिनेटोन लि. बंबई
११ अगस्त १९३४

भाईजान

तसलीम। मैं सच्चे दिल से कहता हूँ कि उस दिन से मेरा मक़सूद आपकी दिल-आज़ारी[2] न थी। अगर आपको सदमा हुआ तो मुझे इसका मलाल है और मैं आपसे मुआफ़ी का ख़्वास्तगार हूँ। आपने सितंबर में कुछ भेजने का वादा किया है। अगर आप बग़ैर किसी ख़ास तरद्दुद के भेज सकते हों तो भेज दें वर्ना क़र्ज़ लेकर न भेजें। मुझे यह गुमान न था कि आप अब भी उसी कशमकश में हैं जिसमें मैं हूँ। मैंने तो समझा था इसका बाइस मेरी मुफ़लिसी का एहसास न होगा। अगर आपकी हालत इतनी ही ख़राब है जैसी मेरी तो आप ग़म और ख़राब न करें। मैंने आपका चेक बराहे रास्त रघुपतिसहाय को भेज दिया। अब वह ख़ामोश रहेंगे। निरंजन लाल को भी मैं अनक़रीब[3] यहाँ से भेजता रहूँगा। बात यह है कि मैं कभी बिज़नेसमैन नहीं रहा। आप भी नहीं रहे। मगर मैंने आपसे कुछ सबक़ न सीखा और न जाने क्योंकर यह हिमाक़त सवार हो गई कि जहाँ आप नाकाम रहे वहाँ मैं कामयाब हो जाऊँगा। हंस कमबख़्त चार पांच हज़ार का घाटा दे चुका है। इस पर जागरण सवार हुई एक हफ़्तावार भी निकाल बैठा। इस पर भी तीन हज़ार का घाटा दे चुका था। मक़सद यह था कि थोड़ी सी मुस्तक़िल आमदनी होती रहे और मैं अपने गोशए आफ़ियत में बैठकर कुछ थोड़ा सा लिटरेरी काम कर लिया करूँ। लेकिन पीर घाटे और घर से भी गए। दोनों में एक पर्चा भी कामयाब न हुआ। प्रेस और बुकडिपो की सारी आमदनी उनके ख़सारे[4] में सर्फ़ हो जाती है। उस पर मैं बाज़ार के दो हज़ार रुपए का क़र्ज़दार हो गया। आख़िर मुझे यहाँ भागकर आना पड़ा। यहाँ साल-डेढ़-साल रहकर ... क़र्ज़ से सुबुकदोश हो जाऊँ। मगर ... ऐसा लगता है कि ...

१ सुरक्षित २ दिल दुखाना ३ जल्दी ही ४ नुकसान ५ अपने कोने

कर सकूँ। जागरण की बाबत उम्मीद है कि सोशलिस्ट पार्टीवाले उसे ले लें। आजकल इसे बाबू सम्पूर्णानन्द निकाल रहे हैं और वह सोशलिस्ट अखबार है। अगर वह इधर चल गया तो डेढ़ सौ की माहवार चपत पड़ रही है वह बन्द हो जायेगी। फिर अकेला हंस रह जायेगा। उस पर अगर साल में पाँच सात सौ का खसारा हुआ भी तो मुज़ायका नहीं। किताबों का इश्तहार तो होता ही है। अगर आप स्क्रीन के क़ाबिल कोई सिनेरियो लिख सकें ओरीजिनल न हो किसी अंग्रेज़ी नाविल से ही माखूज़[1] हो मुज़ायका नहीं मैं यहाँ कम्पनियों में उसकी निस्बत गुफ़्तगू कर सकता हूँ। स्क्रीन की ज़रूरियात क्या हैं यह आप मुझसे बदर्जहा ज़्यादा जानते हैं क्योंकि आप सिनेमा के शायक़ीन[2] में हैं। मैंने तो यहाँ आकर कुछ सीखना शुरू किया है। ऐसा कोई क़िस्सा न भेजिए जिसमें कान्ट्रास्ट का फ़िक़दान[3] हो। पुरानी किताबों में भी बहुत कुछ मिल सकता है या कोई तारीख़ी अफ़साना हो मगर सोशल हो तो बेहतर क्योंकि आजकल सोशल क़िस्सों की तरफ़ आम रुझान है। आपके क़लम से जो सिनेरियो निकलेगा वह कामयाब होगा। पहले आप जो क़िस्सा लिखना चाहें उसका एक खुलासा लिखें। उसी पर सारा दारोमदार है। अगर वह कम्पनी ने पसंद कर लिया तो सीक्वेन्स और सिनेरियो लिखना मुश्किल नहीं। एक बार यहाँ आइए। मौसम खुशगवार सिर्फ़ रेल का खर्च। दस पाँच रोज़ यहाँ घूमघामकर सिनेमा कंपनियों से बातचीत की जाये। मुमकिन है कोई मुस्तक़िल सूरत निकल आवे। मगर वो एक सिनारियो के बगैर खाली गुफ़्तगू से कुछ न होगा। यह लोग लिटरेरी शोहरत से मरऊब[4] नहीं होते। गौरी शंकर अख्तर यहाँ मुक़ीम[5] हैं और चार पाँच सौ माहवार [illegible] लेते हैं। अगर आप दो अफ़साने भी साल का किसी से कन्ट्रैक्ट कर सकें तो हज़ार डेढ़ हज़ार वहीं बैठे-बैठे आमदनी में इज़ाफ़ा हो सकता है। और दो अफ़साने ज़्यादा से ज़्यादा दो महीने का काम है।

और क्या अर्ज़ करूँ। मैं फिर आपसे मुआफ़ी माँगता हूँ। वह महज़ परीशान और मुतग़य्यिर[6] दिल का इज़हार था। इश्तहारवालों की बदमुआमलगी[7] का मुझे बहुत तल्ख़ तजुर्बा हुआ है। जागरण के तक़रीबन आठ सौ रुपये दो साल के दौरान में डूब गये। बज़ाहिर मुअज़्ज़िज़ साहब मौतबर[8] आदमी मालूम होते थे लेकिन जब महीने दो महीने इश्तहार निकलने के बाद बिल गया तो ख़ामोश और रूपोशी भी ऐसी जो ढूँढ़ना नहीं जानती। दो साहब कलकत्ता के हैं, तीन साहब बंबई के हैं। यहाँ उनका पता लगाना चाहा मगर मालूम हुआ बोगस थे। एक दिन मिस्टर ज़ियाउद्दीन बरनी साहब तशरीफ़ लाये थे। आपको बहुत याद

१ लिया गया २ शौक़ीनों ३ अभाव ४ रोब में आने वाले ५ निवासी ६ बेचैन ७ बेईमानी
८ बड़ा था ९ विश्वसनीय

करते थे। अब तो मिस्टर सीतलवाड़ भी दो कंपनियों के मालिक हैं। उनसे तअर्रुफ़[1] हो जाये तो आपके लिए रुपये की बहुत अच्छी सूरत हो सकती है। मैं तो उनसे नहीं मिला क्योंकि मैं इस कंपनी के साल भर के कंट्रैक्ट में हूँ और इस दौरान में और कहीं फ़िल्म के लिए नहीं लिख सकता। मुआहिदा[2] तो अच्छा नहीं है लेकिन यहाँ इंतख़ाब का मौक़ा कहाँ था। डूबते को सहारा मिला। बस यहाँ हुआ।

आप अगर बिना किसी ज़ोर के सितंबर में रुपये वापस कर सकें तो मैं मशकूर हूँगा लेकिन दिक़्क़त हो तो मैं तो आपको परेशान करना न चाहूँगा। ज़िन्दगी में कभी फ़राग़त नसीब न हुई अब क्या नसीब होगी। अब ख़ानाबदोशी का ज़माना है तो यहाँ बंबई में हूँ। नाकाम ज़िन्दगी (माली एतबार से, दीगर एतबारात से तो मैं इसे बुरी नहीं कह सकता) का इससे बढ़कर और क्या सुबूत हो सकता है। बेफ़िक्री में कुछ असली इल्मी ख़िदमत करता मगर वह आरज़ू न पूरी हुई न होगी। आप परेशान हुए तो क्या और मैं परेशान हूँ तो क्या एक ही बात है।

मुख़लिस

धनपत राय

१७३

सागर सी० पी०

११ अप्रैल १९३५

ब्रादरम

तसलीम। मैंने ४ अप्रैल को बम्बई को ख़ैरबाद कह दिया और सी० पी० के अज़ला की सैर करता हुआ ९ को सागर आ गया। यहाँ से निकलकर इलाहाबाद जाऊँगा और देवी जी को वहाँ पहुँचाकर १७ को इन्दौर साहित्य सम्मेलन के जलसे में शरीक होने के लिए रवाना हो जाऊँगा। मैंने इन्दौर सम्मेलन में पढ़ने और तक़सीम[3] करने के लिए यह मज़मून लिखा है और चाहता था कि अपने ख़यालात उर्दू दुनिया के सामने भी रख दूँ। हिन्दोस्तानी का तसव्वुर में जब तक उर्दू और हिन्दी दोनों न शरीक हो जायें काम में इन्तशार पड़ेगा। मैंने अपने कई मुअज़्ज़िज़ दोस्तों से इस मुआमले में तबादला-ए-ख़यालात किया है। वह सब मुत्तफ़िक़[5] मालूम हुए। और जो आपकी राय है मुझे मुत्तला कीजिएगा। मैं इन्दौर से लौटकर आपके ख़त का इन्तज़ार करूँगा। या मुमकिन हुआ तो बनारस होता हुआ इलाहाबाद जाऊँगा। इस मज़मून को आप जल्द से जल्द शाए करने की

१ परिचय २ समझौता ३ विभाजन ४ विचार ५ सहमत

इशायत करें। मुमकिन है इसका कोई साहब जवाब दें और मुझे फिर जवाब-उल जवाब लिखना पड़े। देखिए इन्दौर में मेरी तजवीज़ को लोग मानते हैं या नहीं। हाँ मगर इस मज़मून की बीस कापियाँ अलहदा निकलवा दें तो दीगर अखबारात में छपवाऊँ।

उम्मीद है आप खुश हैं।

मुखलिस
धनपत राय

२७४

सरस्वती प्रेस, काशी
४ मई १९३५

भाईजान

तसलीम। मुझे इस तकरीबे सईद[१] में शरीक न होने का और लुत्फ़ सोहबत खो देने का अफ़सोस है। मगर यहाँ बड़े लड़के धुन्नू को चेचक निकल आयी है और २७ से हम सब यहाँ इलाहाबाद में हैं। कल गालिबन् उसे यहाँ से बनारस ले जायें मगर जाने क़ाबिल हो सका। हालाँकि चेचक हल्की क़िस्म की थी मगर अभी तक दाने बिल्कुल मुन्दमिल[२] नहीं हुए हैं और अगर डाक्टर की राय न हुई तो दो तीन दिन यहाँ और रहना पड़ेगा। मैंने फ़ैसला कर लिया है कि जुलाई से इलाहाबाद में ही रहूँ और यहीं प्रेस और कारोबार उठा लाऊँ। देखिए क्या होता है।

मुबारकबाद के साथ वस्सलाम

मुखलिस
धनपत राय

२७५

सरस्वती प्रेस बनारस।
१ जून १९३५

भाईजान

तसलीम। आपका ख़त मिला। अज़ीज़ किशन नारायण जी अब ८-९ बेहतर हैं और दो-चार रोज़ में चलने-फिरने के क़ाबिल हो जायेंगे। शुक्र है टाइफ़ायड बड़ा मूज़ी बुख़ार है।

---

१ शुभ उत्सव २ भरे नहीं है

भाई मैं तो तालीम-याफ़्ता लड़कियों की बाबत से ख़ुदा जाने क्यों बदगुमान हूँ। अभी तक तो लड़कों की लापरवाइयों के बावजूद गृहस्थी चलती रहती थी क्योंकि लड़कियाँ आम तौर पर गृहस्थी का पालन करती थीं लेकिन जब दोनों एक ही रंग में रँग गये तो फिर ख़ुदा ही हाफ़िज़ है। लड़कों को देखता हूँ तो जी चाहता है कि यह यूनीवर्सिटी में न पढ़ते तो अच्छा होता। मुश्किल[1] से कमज़र्फ़[2] मिज़ाज में हद दर्जा रऊनत[3] ख़ुदनुमा[4] ख़ुदपसंद और ख़ुदसर[5]। यह आम रविश है। मुस्तसनियात[6] भी हैं लेकिन बहुत कम। लड़कियों में भी यह मरज़[7] नुमायाँ है। आख़िर उन्होंने अपने भाइयों ही से तो सबक़ लिया है। और मैं उन्हें मुल्ज़िम[8] नहीं करता। वह भी जैसे समाज में रह रही हैं तो उन ग़रीबों का क्या क़सूर है। एक तरफ़ यह सदा है कि उन्हें शौहरों से ख़ुदमुख़्तारी[9] आज़ादी हासिल होनी चाहिए। और फिर हम लोग तो चंद दिन के मेहमान हैं। दुनिया अपनी रफ़्तार जायगी। दो-चार पुराने ख़याल के लोग शोर पीटा करें। मगर क़राइन[10] बतला रहे हैं कि आनेवाला ज़माना गृहस्थी के लिए क़ातिल होगा।

ज़ुबान के मुताल्लिक़ मेरे ख़याल से आप को इत्तफ़ाक़ है यह बाइसे इत्मीनान है। अभी कल लखनऊ गया था। वहाँ आफ़ताबमुल्क साहब से मुलाक़ात हुई। उन्हें इस ख़याल से इत्तफ़ाक़[11] है। उनका ख़याल है कि अब उर्दू और हिन्दी अपनी अपनी शख़्सियतों का इस क़दर इस्तक़रा[12] कर चुकी हैं कि अब उनमें इत्तिहाद[13] की कोई सूरत पैदा नहीं हो सकती। इस ख़याल में सदाक़त[14] है इसमें शक नहीं।

मास्टर निगम की शादी की निस्बत मैंने जो सुना है वह तो यह है कि वह बहुत ही मतीन[15] फ़रख़ुन्दासीरत[16] लड़की है मगर ग़रीब घर की बेटी है और मुमकिन[17] आप की पूरी नज़र[18]। और आप के घर में उसे जो आसाइशें मिल रही थीं वह मुक़ाबिलतन कम होंगी। मगर उसमें कुछ क़िनाअत[19] है तो घर बिहिश्त हो जायगा। वर्ना कौन जाने। मैं अपने एक दोस्त को जानता हूँ जिसकी बीवी एम० ए० है। वह ख़ुद बी० ए० भी नहीं हैं मगर हैं बड़े ही tactful. उनकी इज़्दिवाजी[20] ज़िन्दगी देखकर मुझे रश्क आता है। ऐसी मुनकसिर[21] मिज़ाज नाज़ से भरी हुई पाकीज़ा औरतें पढ़ी-लिखी मैंने बहुत कम देखी हैं। उनसे आप free love और इन्तहाई[22] आज़ादियों पर बे-तकल्लुफ़ बहस कर सकते हैं। वह अपने ख़यालात का आज़ादाना इज़हार करती हैं। मगर इन्कसाराना संजीदगी के साथ। यह मसाइल उसके लिए महज़ इल्मी मसाइल हैं जिनका

१ कठिन २ दुर्बल ३ अहंकार ४ [illegible] ५ [illegible] ६ अपवाद ७ रोग ८ दोषी ९ [illegible] १० लक्षण ११ सहमत १२ [illegible] १३ मिलाप १४ सच्चाई १५ गम्भीर १६ सुशील १७ [illegible] १८ [illegible] १९ संतोष २० दाम्पत्य २१ विनम्र २२ [illegible]

जिन्दगी से भी ज़माना कोई ताल्लुक नहीं है।

धुन्नू तो अब की बार इण्टर में गया है, छोटा आठवीं में आया है। मैं खुद इलाहाबाद जा रहा हूँ। जो प्रेस वगैरह नहीं रखेंगे। इस जंजाल से किसी तरह रिहाई नहीं होती। इस कमबख्त 'जागरण' ने मुझे कोई छ-सात हज़ार के पंजे में डाल दिया। अब भी मुझे कोई पन्द्रह सौ रुपये देने हैं। प्रेस से मुझे अब तक कोई पन्द्रह हज़ार का नुक़सान हो चुका है। मगर क्या करूँ गले में जो ढोल पड़ गयी है उसे बजाए जाता हूँ।

और क्या लिखूँ। इलाहाबाद आने पर मुलाक़ात की सूरतें आसान हो जायेंगी। अब की सितम्बर से हंस को १२ सफ़हात का कर रहा हूँ। देखूँ क्या होता है। यह भी एक तजरुबा है। कल बम्बई जा रहा हूँ। एक महीने में लौटूँगा।

आपका
धनपत राय

२७६

सरस्वती प्रेस काशी
१४ जुलाई १९३५

भाईजान

तसलीम। मैंने एक ख़त लिखा था और हंस के लिए आपसे इस्तदुआ[1] की थी और कुछ अदीबों के पते दरियाफ़्त किये थे। आपने तवज्जो न फ़रमाई। क्या मेरा ख़त नहीं पहुँचा। हंस १ अक्तूबर से अदबियात का रिसाला हो जायगा और इसमें सभी ख़ास-ख़ास ज़बानों के ख़ास-ख़ास अहम मज़ामीन निकलेंगे। आपसे मैंने इस्तदुआ की थी कि उर्दू के माहाना लिटरेचर पर आप हंस के लिए एक सफ़े का नोट लिखना क़बूल करें। मैंने इन असहाब के पते पूछे थे

डा. इक़बाल

प. ब्रजमोहन नाथ दत्तात्रय 'कैफ़ी'

मिर्ज़ा अज़ीम बाक़र

और चन्द और असहाब जिन्हें आप समझते हैं कि उर्दू के मुख़्तलिफ़ शोबों[2] पर लिख सकते हैं ताकि मैं उनसे ख़त-किताबत करूँ।

मुख़लिस
धनपत राय

---

१ प्रार्थना २ विभिन्न अंगों

२७७

सरस्वती प्रेस बनारस
११ जुलाई १९३५

भाईजान

तसलीम। मैं अभी बंबई गया था। शायद आपको इत्तला दे चुका हूँ। यह तय किया गया है कि अक्तूबर से 'हंस' को हम मकसद की तकमील के लिए वक्फ़ कर दिया जाय जिसका मैं ज़िक्र करूँगा। कुछ अर्से से यह तहरीक हो रही थी कि हिन्दी में जो अब रफ़्ता रफ़्ता क़ौमी ज़बान का दर्जा हासिल करती जा रही है, एक ऐसा रिसाला जारी हो जाये जो हर एक सूबे की अदबियात से हिन्दी-दाँ अशख़ास[1] को आशना[2] कर दे। अभी तक हिन्दोस्तान का कोई क़ौमी अदब नहीं है। हर एक सूबा अलग अलग[3] अपने अदब की तरक़्क़ी के लिए कोशाँ[4] है। चुनांचे एक सूबे के लोग दूसरे सूबे के कारनामों से बिल्कुल ग़ैर मुतआरिफ़[5] हैं। उर्दू में बहुत कम असहाब को मालूम है कि बंगला गुजराती मराठी, तामिल कनाडी वग़ैरह ज़बानों में क्या है। यही हाल इन सूबजात में भी उर्दू से इतनी ही लाइल्मी है। हम अंग्रेजी कारनामों से वाक़िफ़ हैं जर्मनी रूस स्वीडन के अदीबों के अफ़साने ग़ज़लें[6] हमारी नोके ज़बान पर हैं लेकिन हिन्दोस्तान में सूबेवारी ज़बानों में कौन से कारनामे पड़े हुए हैं इसकी हमें बिल्कुल ख़बर नहीं। इसी बेगानगी को दूर करने और हिन्दोस्तान भर के अदीबों में यगानगत एक-जहती पैदा करने और उन्हें एक दूसरे को तआरुफ़[7] से रूशनास[8] कराने के लिए एक अंजुमन की बुनियाद डाली जा रही है जिसका पहला क़दम इस रिसाले को जारी करना है। जिससे मुल्क में क़ौमी अदब का एहसास हो जाये और अदबी जमातों को कम-से-कम सारे हिन्दोस्तान में कुतुबख़ाना और ... हासिल हो और दूसरे सूबे के लोग भी इनके ख़यालात और जज़्बात से फ़ैज़याब[9] हों। इस रिसाले की इशाअत[10] के लिए मैं उर्दू बोलने के मुमताज़ अदीबों के नाम और पते चाहता हूँ। बराहे करम आप लिखवा दें। अगर आपके पास वक़्त हो (हालाँकि मैं जानता हूँ आपके पास बिल्कुल वक़्त नहीं है) और आप चोटी के उर्दू रसायल में तबअज़ाद नज़्मों और अफ़सानों पर नज़र डालकर हर माह भेज दें तो यह एक बड़ी ख़िदमत होगी। बा मुरव्वत से बाहर भी तो गवारा नहीं है। हर एक ज़बान के लिए दो-दो मुर

१ हिन्दी जाननेवाले लोगों २ परिचित ३ अलग अलग ४ प्रयत्नशील ५ अपरिचित ६ अपनी ... ७ ... ८ परिचित ९ लाभान्वित १० प्रकाशन

शाय किये जायेंगे तो भी सोलह-सत्रह सुफहात पूरे हो जायेंगे। आपके पास रिसाले तो सभी आते हैं उनमें से चार पांच रिसालों के चार पांच मजामीन के खुलासे[1] और इक्तबासात[2] जैसे माडर्न रिव्यू में होते हैं और जैसे हंस में दिये जाते हैं दर्ज किये जायें तो काम चल जाये। आप मुझे उन हजरात के पते लिख दें तो मैं उनसे भी दरख्वास्त करूं और आपको सुबुकदोश कर दूँ। हालांकि आप चाहें तो इस उनवान[3] से हर माह सारे हिन्दोस्तान के बाकमालों को अपना ममनून[4] बना सकते हैं।

१ डा इकबाल।
२ पं ब्रजमोहन नाथ दत्तात्रेय कैफ़ी।
३ डा मुहम्मद हबीब।
४ डा जाकिर हुसेन।
५ मौलाना सुलेमान नदवी।
६ साहिबे गुले राना।
७ मि राम बाबू सक्सेना।

आपका भाई
धनपत राय

२७८

बनारस
१७ सितम्बर १९३५

भाईजान

तसलीम। उम्मीद है आप खुश होंगे। मेरे इस मजमून ने तो खासी चहल-पहल पैदा कर दी।

हंस का अक्तूबर नंबर यानी पहला नंबर जेरे-तरतीब[5] है। पहली अक्तूबर को मुकम्मल हो जायगा ऐसा यकीन करता हूं। हिन्दुस्तान के मुख्तलिफ हिस्सों से मजामीन आ रहे हैं और उम्मीद है कि कोशिश सरसब्ज होगी। उर्दू में अभी डाक्टर जाकिर हुसैन मुहीउद्दीन जोर और मुहम्मद आकिल साहब के मजामीन आये हैं जिनमें सिर्फ दो की गुंजाइश निकल सकी। डाक्टर इकबाल की एक नज्म भी आयी है। डाक्टर टैगोर का भी एक मजमून आया है जो हिन्दी में मुनतकिल[6] होकर निकल रहा है। महात्मा गांधी का मजमून भी अनकरीब आनेवाला है। मजमून क्या होगा दुआ-गो पैगाम होगा। हजरत जोश मलीहाबादी ने भी वादा फरमाया है। मैंने सोचा है इस नयी अदबी तहरीक के मुनासिब उसके लिए कुछ

१ [illegible] २ उद्धरण ३ शीर्षक ४ अनुगृहीत ५ संपादनाधीन ६ अनूदित

लिए हूँ। हमें तो इस तहरीक को मक़बूल-ए-आम बनाना है। अब आपकी इमदाद की ज़रूरत दरपेश है। बस कुल दो सफ़्हात का एक जुज़ रिसालों का तबसरा[1] चाहता हूँ। बिलकुल माडर्न रिव्यू के ढंग का। मेरे पास ज़माना के अलावा और कोई रिसाला बाक़ायदा[2] नहीं आता। तबादला करूँगा। नये ढंग से। अभी तो किसी रिसाले की ज़रूरत न महसूस होती थी इसलिए तबादले की ज़रूरत न समझता था। जो आ गया उसे पढ़ लिया न आया तो कोई ग़म नहीं। मगर अब मँगवाकर पढ़ना पड़ेगा। आप बस दो सफ़्हात का एक तबसरा ख़ास रिसालों के ख़ास इल्मी मज़ामीन का ज़रूर कर दें। हिन्दी में करूँगा। बंगला गुजराती मराठी कनाड़ी तामिल तेलुगु मलयालम वग़ैरह का बम्बई में इंतज़ाम हो गया है। आपके सिवा और किसे सताऊँ।

मुख़लिस

धनपत राय

२७६

सरस्वती प्रेस बनारस

१ अप्रैल १९३६

माईजान

तसलीम। कार्ड मिला। मैंने तो इधर तीन माह से एक अफ़साना भी नहीं लिखा। बस जामिया में 'कफ़न' लिखा था। इसके बाद लिखने की नौबत ही न आयी। हाँ यार, इन सदारतों के मारे परेशान हूँ। मैंने मिस्टर सज्जाद ज़हीर से बहुतेरा कहा मुझे मुआफ़ करो मुझे अपना काम करने दो। मगर न माने। १ को लखनऊ और लाहौर में आर्य समाज की जुबली के साथ एक आर्य भाषा सम्मेलन हो रहा है। वहाँ ११ को मुझे सम्मेलन का सदर बनना है और वहाँ जाऊँगा तो चार पाँच दिन सर्फ़ हो जायेंगे। मैंने अपनी माज़ूरी लिख दी है। अगर मान गये तो ठीक वर्ना वहाँ भी जाना ही पड़ेगा। अगर मुझे बोलने का शऊर होता तो ऐसे मौक़ों को बड़ी ख़ुशी से मंज़ूर कर लिया करता मगर यहाँ तो वह गुन ही नहीं। इसलिए जान बचाता फिरता हूँ। मजमे को परेशानी होती है। और जिस काम से रोज़ी मिलती है उसमें ख़लल पड़ता है। इरादा तो यही था कि लखनऊ से एक दो रोज़ के लिए कानपुर आऊँगा मगर अब तो लखनऊ से १ की रात को लाहौर भागना पड़ेगा। और क्या अर्ज़ करूँ।

सलाम बदस्तूर।

आपका

धनपत राय

---

१ समालोचना २ नियमपूर्वक

२८०

सरस्वती प्रेस बनारस
१५ अप्रैल १९३६

भाईजान

तसलीम। हाँ मुझे भी आपसे न मिलने का अफ़सोस रहा। खासा इसलिए कि मेरे पास एक रिटर्न टिकट था आगरे से—मंगल को नौ बजे रात तक बनारस पहुँचना जरूरी था। ख़ैर—फिर सही। अभी तो मुझे शायद दिल्ली जाना पड़े।

तकलीफ़ की आपने खूब कही। अपने घर में काहे की तकलीफ़। आप न थे मजीद सेन थे। सेन न होते तो छुट्टी थी और अब तो भाभी साहबा से भी तआर्रुफ़ हो गया। अब तो खासा बेतकल्लुफ़ हूँ। अब आने के क़ब्ल आपसे एनगेजमेंट कर लूँगा।

आपका
धनपत राय

२८१

१५ लाटूश रोड लखनऊ
५ अगस्त १९३६

भाईजान

तसलीम। आपको ताज्जुब होगा मैं लखनऊ कैसे आ गया। बात यह है कि कोई डेढ़-दो महीने से मुझे वरमे-जिगर[1] की शिकायत हो गई है। दो बार मुँह से सेरों खून निकल गया है। बनारस में इलाज से कोई फ़ायदा न देखकर २ को यहाँ आ गया और डाक्टर हर गोविंद सहाय के ज़ेरे इलाज हूँ। पाखाना पेशाब खून वगैरा की जाँच हो चुकी है। मगर अभी कई दाँत तोड़े जायँगे तब डाक्टर साहब मर्ज़ की तशख़ीस करेंगे और इलाज शुरू होगा। शायद यहाँ पंद्रह दिन लगें। या तो इस्लाह हो होगी या खात्मा ही होगा। घुलकर आधा रह गया हूँ। ज़र्द। न कुछ खा सकता हूँ न हज़्म होता है। एक बार [illegible] से [illegible] ला लेता हूँ। मास्टर कृष्ण शंकर साहब का मेहमान हूँ। मगर यह मकान बहुत मुख़्तसर है और आजकल में कोई दूसरा मकान ले लूँगा। घर से जितने रुपए लेकर चला था सब साफ़ हो गया। इरादा था [illegible] कराने का

---

1. वरमे-जिगर, यकृत की सूजन: सिरोसिस ऑफ लिवर

मगर यहाँ के खर्च तो आप जानते हैं। कदम-कदम पर फ़ीस। मैंने घर पर रुपए के लिए लिखा तो है। लेकिन मुमकिन है वहाँ से रुपए देर में आयें क्योंकि बैंक का एकाउंट तो मेरे नाम है। अगर आप आसानी से मुझे इस वक़्त एक सौ रुपया बज़रिये तार भेज दें तो बड़ा एहसान करें। मैं यहाँ से जाते-जाते रवाना कर दूँगा। मुमकिन है घर से रुपये आ जाएं—और इन रुपयों की ज़रूरत न पड़े मगर एहतियातन कुछ फ़ाज़िल रुपये अपने पास रखना चाहता हूँ। तार से ज़्यादा ख़र्च हो तो मनीआर्डर से सही। और क्या लिखूं। यहाँ बड़ा लड़का धुन्नू मेरे साथ है। देखिए इस बीमारी से निजात मिलती है या यह आख़िरी पैगाम है।

आपका

धनपत राय

२८०

सरस्वती प्रेस बनारस
१५ अप्रैल १९३६

भाईजान

तसलीम। हाँ मुझे भी आपसे न मिलने का अफ़सोस रहा। आया इसलिए कि मेरे पास एक रिटर्न टिकट था आगरे से—मंगल को नौ बजे रात तक बनारस पहुँचना ज़रूरी था। ख़ैर—फिर सही। अभी तो मुझे शायद दिल्ली जाना पड़े।

तकलीफ़ की आपने ख़ूब कही। अपने घर में काहे की तकलीफ़। आप न थे अज़ीज़ सेन थे। सेन न होते तो छूटी थी और अब तो भाभी साहबा से भी तआर्रुफ़[1] हो गया। अब तो आगए बेतकल्लुफ़ हैं। अब आने के क़ब्ल आपसे एनगेजमेण्ट कर लूँगा।

आपका
धनपत राय

२८१

१९ लाटूश रोड लखनऊ
५ अगस्त १९३६

भाईजान

तसलीम। आपको ताज्जुब होगा मैं लखनऊ कैसे आ गया। बात यह है कि कोई डेढ़-दो महीने से मुझे वरमे-जिगर[2] की शिकायत हो गई है। दो बार मुँह से मेरे खून निकल गया है। बनारस में इलाज से कोई फ़ायदा न देखकर २ को यहाँ आ गया और डाक्टर हर गोविन्द सहाय के ज़ेरे इलाज हूँ। पाख़ाना पेशाब खून वग़ैरा की जाँच हो चुकी है। मगर अभी कई चीज़ तो जाएँगी तब डाक्टर साहब मर्ज़ की तशख़ीस करेंगे और इलाज शुरू होगा। शायद यहाँ पंद्रह दिन लगें। या तो इफ़ाक़ा ही होगी या ख़ात्मा ही होगा। घुलकर आधा रह गया हूँ। यार। न कुछ खा सकता हूँ न हज़्म होता है। एक बार मजलिस से हॉस्पिटल हो आया हूँ। मास्टर कृष्ण शंकर साहब का मेहमान हूँ। मगर यह मकान बहुत मुख़्तसर है और आजकल में कोई दूसरा मकान ले लूँगा। घर से जितने रुपए लेकर चला था सब साफ़ हो गया। इरादा था एक्स रे कराने का

---

१ परिचय २ जिगर यानी, की सूजन, सिरोसिस ऑफ लिवर

मगर यहाँ के हाल तो आप जानते हैं। क़दम-क़दम पर फ़ीस। मैंने घर पर रुपए के लिए लिखा तो है। लेकिन मुमकिन है वहाँ से रुपए देर में आयें क्योंकि बैंक का एकाउंट तो मेरे नाम है। अगर आप आसानी से मुझे इस वक़्त एक सौ रुपए ज़रिये तार भेज दें तो बड़ा एहसान करें। मैं यहाँ से जाते-जाते रवाना कर दूँगा। मुमकिन है घर से रुपये आ जाएँ—और इन रुपयों की ज़रूरत न पड़े मगर एहतियातन कुछ फ़ाज़िल रुपये अपने पास रखना चाहता हूँ। तार से ज़्यादा ख़र्च हो तो मनीआर्डर से सही। और क्या लिखूँ। यहाँ बड़ा लड़का मुन्नू मेरे साथ है। देखिए इस बीमारी से निजात मिलती है या यह आख़िरी पैग़ाम है।

आपका

धनपत राय